मिलनेका पता :
अ. भा. श्वे. स्था.
जैनशास्त्रोद्धारसमिति
गरेडिया कूवारोड,
मु. राजकोट.

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhar Samiti.
GarediaKuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.



प्रथम आवृत्ति : १०००
वीरसंवत् : २४९६
विक्रम संवत् : २०२६
इस्वीसन् : १९७०

मुद्रक :
मणिलाल छगनलाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
घीकांटा रोड, अहमदाबाद.

प्रकाशक :

अमदावादनिवासी श्री गुप्तदानवीर अत्युदारपरमभक्तःतथा
जावतनिवासी श्रीमान् श्रेष्ठिश्री मानमलजी पोरवारस्य
पूज्य माता सुश्राविका श्री मूलीबाई–एवं च–
गढसियाणानिवासिनी अ. सौ. श्रीमती
पानकुंवरबहन धिंगडमलजी कानुंगा। तैः
प्रदत्त द्रव्यसाहाय्येन अ. भा. श्वे.
स्था. जैनशास्त्रोद्धारसमिति प्रमुखः
श्रेष्ठिश्री शान्तिलाल मङ्गल-
दासभाई महोदयः
मु. राजकोट.

दाताओनी नामावली

४००१ अमदावादना गुप्तदानवीर अतिउदार एक परमभक्त तरफथी सप्रेम भेट

१००१ जावतनिवासी श्रीमान् शेठश्री मानमलजी पोरवारना पूज्य मातुश्री मूळीबाई तरफथी सप्रेम भेट

१००१ अ. सौ. श्रीमती पानकुंवरबहेन धींगडमलजी कानुंगा तरफथी सप्रेम भेट



पूज्य तपस्वीजी महाराज साहेब का संक्षिप्त परिचय ॥

पूज्य तपस्वीजी महाराज का जन्म मेवाड प्रदेश के वदनोर प्रांत के दाणीका 'रामपरा' नामक गांवमें हुवा आप तीन भाई थे आप जन्म से ही वैराग्य भाववाले थे, अतः बाल्यकाल से ही संसार से विरक्त भावी होने से बाल्यक्रीडा आदि मे भी आप का मन नहीं लगा। ऐसे विरक्तता धारण करते और योग्य गुरु की शोध करते करते आप को पूज्य 'घासीलालजी' महाराज का समागम हुआ और योग्य गुरु का समागम होते ही आप का वैराग्यभाव उत्कट रूप से जग ऊठा वैराग्यभाव से प्रेरित होकर के पूज्यश्री से संवत् १९९६ में-आपने दीक्षा धारण की। पूज्यश्री से दीक्षित होने के पश्चात् आप साधुचर्या में विचरते हुए अनेक तपस्यायें करते हैं, आपने ९२ बीरानवें दिन पर्यन्त की तपस्या की है। आप इतने लिखे पढे न होने पर भी गुरुकृपा से एवं तपस्या के बल से शास्त्र का अच्छा ज्ञानधारक हैं।

यह इतने तक की पूज्य आचार्य महाराज सा० घासीलालजी महाराजश्री शास्त्रोद्धार का टीका-रचना आदि कार्य कर रहे हैं उस कार्य में गूढ़ विषयों की चर्चा में आप कभी कभी तपस्वीजी की सलाह लेते हैं, और तपस्वीजी की सलाह के अनुकूल-सुधार वधारा होता है। ऐसे विरक्त तपस्वी महात्मा का संग्रह किया हुआ यह ग्रन्थ है जो उत्तमकोटि का मार्गदर्शक है। तो सुज्ञ जन इस में दर्शित मार्ग के अनुकूल आचरण करके परलोक के लिये अपने कल्याण के पाथेय का संग्रह करे यही अभ्यर्थना-इति सुज्ञेषु किं बहुना ॥

सामान्य गृहस्थ धर्म संग्रह की विषयानुक्रमणिका



सशब्दार्थ कल्पसूत्र की विषयानुक्रमणिका

॥ समाप्त ॥

सायायिक	सामायिक	१०७	४
समायरिव्वा	समायरियव्वा	,,	५
सासाइयस्सई	सामाइयस्ससइ	१०८	२
अव्यवस्थित	अनव्यवस्थित	१०८	३
गोयमस्वामी	गोयमसामी	१४३	२
चाउद्दस	चाउद्दसट्ठ	१५१	३
जिने	जिन	१५२	४
केवलज्ञान	केवलज्ञानी	,,	,,
वेदवाणी	विहरम.ण	,,	५
सात	सातलाख	,,	९
निशदिन	निशदिस	,,	५
पैशुण्य	पैशुन्य	१५३	९
पच्चक्खमि	पच्चक्खामि	१६०	७
अणवक्खंमाणे	अणवकंखमाणे	१६१	७

संथरीको सबजगह	संस्तारक वांचना	१६२	
तं	ते	१६७	११

कल्पसूत्रका शुद्धि पत्र

	पर्यायज्येष्ठता के जगह पर्यायज्येष्ठ एसा सब जगह वांचना	१३	१४
नायरंसि	नयरंसि वा	१९	९
विओले	वियाले	२४	८
नग्गंथाणं	निग्गंथाणं	३७	८
सन्निवेसंति	सन्निवेसंसि	३८	५
निग्गंथाणं	ि.ग्गंथीणं	,,	८
वर्द्धनानस्वामी	वर्द्धमानस्वामी	६७	८
मुनिवरिट्ठो	मुणिवरिट्ठो	८४	१०
सविनयो	सविणयो	,,	११
खीयमाणानि	खीयमाणाणि	८९	८

पलिओवमट्टिइय	पलिओवमट्ठिइय	९०	६
पलिओवमहिइय	पलिओवमट्ठिय	९१	३
एव	एवं	९८	२
नियपिडणो	नियपिउणो	,,	६
विहङ्गमो	विहंगमो	,,	७
नगरी म	नगरी में	१०४	१
महाराजा	महाराया	१२४	६
विस्सभइं	विस्सभूइं	१२५	१०
महाराजा	महाराया	१२७	६
जाता	जाया	१६९	५
एकेन्द्रि	एकेन्द्रिय	१७३	६
छपट्जीवनिकाय	छज्जीवनिकाय	१७४	५
ह्रद	ह्रद	१९५	७
घस	धस	२५०	४–५

उयचिय	उवचिय	,,	५
तपश्चात्	तत्पश्चात्	२९७	१०
तीसरे	दूसरे	३२७	२
तइय	बीय	३२५	४
तइय	बीय	३२६	१०
समाया	समाणा	३३७	८
स्वप्नपाढकों	स्वप्नपाठकों	३४१	१
पाठगे	पाढगे	,,	२
ऐवं	एवं	३४४	५
भविस्इ	भविस्सइ	,,	१२
सम्मणिय	सम्माणिय	३६०	६
चतुरिधि	चतुर्विध	३७१	६



॥ णमोऽत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स ॥

सिरि-घासीलालमुणिविरइयं

कप्पसुत्तं

। मङ्गलाचरणम् ।

तं मंगलमाईए, मज्झे पज्जंतए य सत्थस्स ।
पढमं तहि निद्दिट्ठं, निव्विग्घं पारगमणाय ॥१॥
तस्सेव य थेज्जत्थं, मज्झिमयं अंतिमंपि तस्सेव ।
अव्वोच्छिन्ननिमित्तं, सिस्सपसिस्साइवंसस्स ॥२॥

शब्दार्थः—यद्यपि आगम स्वयं ही मङ्गलमय होते हैं फिर भी विघ्नों का नाश करने के लिए तथा शिष्यों के मन में मङ्गल बुद्धि उत्पन्न करने के लिए [तं मंगलमाईए मज्झे पज्जंतए य सत्थस्स] शास्त्र के आरंभ में मध्य में और अन्त में मङ्गलाचरण

करना शिष्ट परम्परा है। [पढमं तहि निदिट्ठं निव्विग्घं पारगमणाय] इन में जो प्रथम मङ्गलाचरण का निर्देश किया है वह प्रकृत शास्त्र के निर्विघ्न रूप से समाप्ति के लिए है॥१॥ [तस्सेव य थेज्जत्थं सज्झिमयं] और मध्य का मङ्गलाचरण प्रकृत शास्त्र की स्थिरता के लिए है तथा [अंतिमंपि तस्सेव अव्वोच्छिन्ननिमित्तं सिस्सपसिस्साइवंसस्स] अन्तिम मङ्गलाचरण शिष्य प्रशिष्य की परम्परा को चालू रखने के लिए तथा प्रकृत शास्त्र का विच्छेद न हो इसके लिए किया गया है॥२॥

नमिऊण महावीरं, गोयमाइं गणिं तहा।
जेणिं सरस्सइं सुद्धं, भव्वाणं हियहेयवे ॥३॥
संजयायारसंजुत्तं, सिरिवीरकहाजुयं।
घासिलालवई रम्मं, कप्पसुत्तं रएमि हं ॥४॥

शब्दार्थः—[महावीरं] श्री महावीर को [गोयमाइं गणिं तहा] गौतम आदि गणधरों

को और [जेणिं सरस्सइं सुद्धं नमिऊण] निर्दोष जिनवाणी को नमस्कार करके [संजयायारसंजुत्तं] मुनियों के आचार से युक्त तथा [सिरिवीरकहाजुयं] श्री महावीर प्रभु की कथा से युक्त [घासिलालवई] मैं घासिलाल मुनि [भव्वाणं हियहेयवे] भव्यों के हितार्थ [रम्मं कप्पसुत्तं रएमि हं] सुन्दर कल्पसूत्र की रचना करता हूँ ॥४॥

मूलम्–दुविहे कप्पे पण्णत्ते, तंजहा–जिणकप्पे य थेरकप्पे य। तत्थ जिणकप्पे संपइ विच्छिण्णे। थेरकप्पे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–ठिए चेव अठिए चेव। तत्थ ठियकप्पे पढमचरिमजिणाणं। अठियकप्पे सेसजिणाणं। अहुणा चरिमजिणसासणंते कट्टु ठियकप्पे पवुच्चइ। ठियकप्पे दसविहे पण्णत्ते, तंजहा–आचेलक्कं१ उद्देसियं२ सिज्जायरपिंडे३ रायपिंडे४ किइकम्मे५ महव्वए६ पज्जायजेट्ठे७ पडिक्कमणे८ मासनिवासे९ पज्जोसवणा१० ॥१॥

शब्दार्थः—[कप्पे] कल्प [दुविहे] दो प्रकार का [पण्णत्ते] कहा गया है। [तंजहा] जैसे कि [जिणकप्पे] जिनकल्प [य] और [थेरकप्पे] स्थविरकल्प। [तत्थ] उनमें से [संपइ] इस समय [जिणकप्पे] जिनकल्प [विच्छिण्णे] विच्छिन्न है। [थेरकप्पे] स्थविरकल्प [दुविहे] दो प्रकार का [पण्णत्ते] कहा गया है। [तंजहा—] जैसे कि [ठिए] स्थितकल्प [चेव] और [अठिए चेव] अस्थितकल्प। [तत्थ] उनमें से [ठियकप्पे] स्थितकल्प [पढम] प्रथम [चरिम] अन्तिम [जिणाणं] तीर्थंकरों का है। तथा [अठियकप्पे] अस्थितकल्प [सेस] शेष बीच के [जिणाणं] तीर्थंकरों का है। [अहुणा] इस समय [चरिम] अन्तिम [जिणसासणं] तीर्थंकर का शासन है [तिकट्टु] अतः यहां [ठियकप्पे] स्थितकल्प ही [पवुच्चइ] कहा जाता है—[ठियकप्पे] स्थितकल्प [दसविहे] दस प्रकार का [पण्णत्ते] कहा गया है। [तंजहा] जैसे कि [१आचेलक्कं] अचेलकत्व [२उद्देसियं] औद्देशिक [३सिज्जायरपिंडे] शय्यातरपिण्ड [४रायपिंडे] राजपिण्ड [५किइकम्मे] कृतिकर्म [६महव्वए] महाव्रत

[७पज्जायजेट्ठे] पर्यायज्येष्ठ [८पडिक्कमणे] प्रतिक्रमण [९मासनिवासे] मासनिवास
[१० पज्जोसवणा] और पर्युषणा ॥१॥

शास्त्र में कहे हुए साधुओं के अनुष्ठानविशेष अथवा आचार को कल्प कहते हैं। इसके अचेलकल्प आदि
दस भेद हैं—ये प्रथम सूत्र में कह दिये गये हैं, उनमें—
पहला १—अचेलकल्प—वस्त्र न रखना या थोड़े अल्पमूल्य वाले तथा जीर्ण वस्त्र रखना अचेलकल्प कहलाता है। यह
दो प्रकार का होता है। वस्त्रों के अभाव में तथा वस्त्रों के रहते हुए, तीर्थंकर या जिनकल्पी साधुओं का वस्त्रों के
अभाव में अचेल कल्प होता है। यद्यपि दीक्षा के समय इन्द्र का दिया हुआ देवदूष्य भगवान के कन्धे पर रहता है,
किन्तु उसके गिर जाने पर वस्त्र का अभाव हो जाता है। स्थविरकल्पी साधुओं का कपड़े होते हुए भी अचेल कल्प
होता है क्योंकि वे जीर्ण थोड़े तथा कम मूल्यवाले वस्त्र पहनते हैं। इन में भी उनकी मूर्छा (ममत्व) नहीं होती है।

अचेलकल्प का अनुष्ठान प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकर के शासन में होता है, क्योंकि प्रथम तीर्थंकर के साधु
ऋजुजड तथा अन्तिम तीर्थंकर के वक्रजड होते हैं अर्थात् पहले तीर्थंकर के साधु सरल और भद्रिक होने से
दोषादोष का विचार नहीं कर सकते। अन्तिम तीर्थंकर के साधु वक्र होने से भगवान की आज्ञा में मार्ग निका-
लन की कोशिश करते रहते हैं इसलिए इन दोनों के लिए स्पष्ट रूप से अचेलकल्प का विधान किया जाता है।

बीच के अर्थात् द्वितीय से लेकर तेईसवें तीर्थंकरों के साधु ऋजुप्राज्ञ होते हैं। वे प्रज्ञ—अधिक समझदार भी

होते हैं और ऋजु-धर्म का पालन भी पूर्णरूप से करना चाहते हैं। वे दोष आदि का विचार स्वयं कर लेते हैं, इसलिए उनके लिए छूट है। वे अधिक मूल्यवाले तथा रंगीनवस्त्र भी ले सकते हैं। उनके लिए अचेलकल्प नहीं है ॥१॥

इसी अचेलकल्प को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं-

मूलम्-कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा अप्पमुल्लं वत्थं धारित्तए वा परिहरित्तए वा। नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा बहुमुल्लं वत्थं धारित्तए वा परिहरित्तए वा। कप्पइ निग्गंथाणं तओ संघाडीओ धारित्तए वा परिहरित्तए वा। कप्पइ निग्गंथीणं चत्तारि संघाडीओ धारित्तए वा परिहरित्तए वा। कप्पइ निग्गंथाणं बावत्तरिहत्थपरिमियं वत्थं धारित्तए वा परिहरित्तए वा। कप्पइ निग्गंथीणं छण्णउइहत्थपरिमियं वत्थं धारित्तए वा परिहरित्तए वा। कप्पइ निग्गंथाणं तिन्नि पायाइं चउत्थं उंडगं धारित्तए। कप्पइ निग्गंथीणं चत्तारि पायाइं पंचमं उंडगं धारित्तए ॥२॥

शब्दार्थः—[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [अप्पमुल्लं] अल्पमूल्यवाला [वत्थं] वस्त्र [धारित्तए] ग्रहण करना—धारण करना [वा] और [परिहरित्तए] परिभोग करना [कप्पइ] कल्पता है। किन्तु [निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [बहुमुल्लं] बहुमूल्य [वत्थं] वस्त्र [धारित्तए] ग्रहण करना [वा] अथवा [परिहरित्तए] परिभोग करना [नो] नहीं [कप्पइ] कल्पता।

[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [तओ] तीन [संघाडीओ] वस्त्र (चादर) [धारित्तए] ग्रहण करना [वा] अथवा [परिहरित्तए] परिभोग करना [कप्पइ] कल्पता है। और [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [चत्तारि] चार [संघाडीओ] वस्त्र (चादर) [धारित्तए] ग्रहण करना [परिहरित्तए] परिभोग करना [कप्पइ] कल्पता है।

[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [बावत्तरि] बहत्तर [हत्थपरिमियं] हाथपरिमाण [वत्थं] वस्त्र को [धारित्तए] ग्रहण करना [वा] अथवा [परिहरित्तए] परिभोग करना [कप्पइ] कल्पता है।

एवं [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [छण्णउइ] छानवें [हत्थपरिमियं] हाथ परिमाण [वत्थं] वस्त्र [धारित्तए] ग्रहण करना [वा] अथवा [परिहरित्तए] परिभोग करना [कप्पइ] कल्पता है।

[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [तिन्नि] तीन [पायाइं] पात्र और [चउत्थं] चौथा [उंडगं] उंदक [धारित्तए] ग्रहण करना [कप्पइ] कल्पता है। एवं [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [चत्तारि] चार [पायाइं] पात्र और [पंचमं] पांचवां [उंडगं] उंदक [धारित्तए] ग्रहण करना [कप्पइ] कल्पता है ॥२॥

दूसरा २–औद्देशिक कल्प–साधु, साध्वी याचक आदि को देने के लिए बनायागया आहार औद्देशिक कहलाता है। औद्देशिक आहार के विषय में बताए गए आचार को औद्देशिककल्प कहते हैं। औद्देशिक आहार के चार भेद हैं (१) साधु या साध्वी आदि किसी विशेष का निर्देश विना किए सामान्य रूप से संघ के लिए बनाया गया आहार, (२) श्रमण या श्रमणियों के लिए बनाया गया आहार, (३)उपाश्रय–अर्थात् अमुक उपाश्रय में रहनेवाले साधु तथा साध्वियों के लिए बनाया गया आहार (४) किसी व्यक्ति विशेष के लिए बनाया गया आहार।

यदि सामान्य रूप से संघ अथवा साधु साध्वियों को उद्दिष्ट कर आहार बनाया जाता है तो वह प्रथम मध्यम और अन्तिम किसी भी तीर्थंकर के साधु साध्वियों को नहीं कल्पता। इसी औद्देशिककल्प को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं–

मूलम्—नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा उद्देसियं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा वत्थं वा कंबलं वा पडिग्गहं वा रयोहरणं वा पायपुंछणं वा पीढ-फलगसिज्जासंथारगं वा ओसहभेसज्जं वा पडिगाहित्तए वा परिभुंजित्तए वा ॥३॥

शब्दार्थः—[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [उद्देसियं] औद्देशिक [असणं] अशन, [पाणं] पान [खाइमं] खाद्य [साइमं] स्वाद्य [वत्थं] वस्त्र [कंबलं] कम्बल [पडिग्गहं] पात्र [रयोहरणं] रजोहरण [पायपुंछनं] पादप्रौंछन—पग पूंछने का वस्त्रविशेष या पूंजनी [पीढ] पीठ [फलग] फलक—पट्टा [सिज्जा] शय्या [संथारगं] संस्थारक [ओसह] औषध [भेसज्जं] भैषज्य [पडिगाहित्तए] ग्रहण करना [वा] अथवा [परिभुंजित्तए] उपभोग करना [नो कप्पइ] नहीं कलपता ॥३॥

तीसरा ३—शय्यातरपिण्ड—साधु साध्वी जिसके मकान में उतरे उसे शय्यातर कहते हैं। शय्यातर से आहार आदि लेने के विषय में बताए गये आचार को शय्यातरपिंडकल्प कहते हैं। शय्यातर से आहार आदि न लेने

चाहिए। यह कल्प प्रथम मध्यम तथा अन्तिम सभी तीर्थंकरों के साधुओं के लिए है। शय्यातर का घर समीप होने से उसका आहारादि लेने में बहुत से दोषों की संभावना है। इसी शय्यातरपिण्डकल्प को सूत्रकार प्रकट करते हैं-

मूलम्-नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा सिज्जायरपिंडं पडिगाहित्तए वा परिभुंजित्तए वा ॥४॥

पदार्थ-[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [सिज्जायरपिंड] शय्यातरपिण्ड को [पडिगाहित्तए] ग्रहण करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥४॥

चौथा४-राजपिण्डकल्प-राजा या बड़े ठाकुर आदि का आहार राजपिण्ड है। राजपिण्ड लेने के विषय में बताए गये साधु के आचार को राजपिण्डकल्प कहते हैं। साधु को राजपिण्ड न लेना चाहिए। क्योंकि राजपिण्ड लेने में अनेक दोष लगने की संभावना होती है।

राजपिण्ड आठ प्रकार का होता है- १ अशन २ पान ३ खादिम ४ स्वादिम ५ वस्त्र ६ पात्र ७ कंबल और ८ रजोहरण। इसी राजपिण्डकल्प को सूत्रकार कहते हैं-

मूलम्-नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा रायपिंडं पडिग्गाहित्तए वा

परिभुंजित्तए वा ॥५॥

पदार्थ–[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [रायपिंडं] राजपिण्ड को [पडिग्गाहित्तए] ग्रहण करना [वा] अथवा [परिभुंजित्तए] उपभोग करना [नो] नहीं [कप्पइ] कल्पता ॥५॥

पांचवाँ ५–कृतिकर्मकल्प–शास्त्रोक्त विधि के अनुसार अपने से बड़े को वन्दना आदि करना कृतिकर्मकल्प है। इसके दो भेद हैं–बड़े के आने पर खड़े होना और आते हुए के सन्मुख जाना। साधुओं में छोटी दीक्षा पर्यायवाला लम्बी दीक्षा पर्यायवाले को वन्दना करता है, किन्तु साध्वी कितनी ही लम्बी दीक्षापर्यायवाली हो वह एक दिन के दीक्षित साधु को भी वन्दना करेगी। कृतिकर्म का पालन न करने से नीचे लिखे दोष होते हैं–अहंकार की वृद्धि होती है। अहंकार अर्थात् मान से नीच गोत्र का वन्ध होता है। देखने वाले कहने लगते हैं–इस प्रवचन में विनय नहीं है क्योंकि छोटा बड़े को वंदना नहीं करता। ये लोकाचार को नहीं जानते। इस प्रकार की निंदा होती है। विनय भक्ति न होने से सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं होता और संसार की वृद्धि होती है। यह कल्प भी सभी तीर्थंकरों के साधुओं के लिये है। इसी कृतिकर्मकल्प को सूत्रकार कहते हैं–

मूलम्–कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा अहाराइणियं किइकम्मं करि-

त्तए। नो कप्पइ निग्गंथाणं निग्गंथीणं किइकम्मं करित्तए। कप्पइ निग्गंथीणं निग्गंथाणं किइकम्मं करित्तए। कप्पइ आयरियउवज्झायाणं गणंसि अहाराइणियं किइकम्मं करित्तए वा कारावित्तए वा। कप्पइ बहूणं भिक्खूणं बहूणं गणावच्छेइयाणं बहूणं आयरियउवज्झायाणं एगओ विहरमाणाणं अहाराइणियाए किइकम्मं करित्तए। कप्पइ बहूणं भिक्खूणं एगओ विहरमाणाणं अहाराइणियाए किइकम्मं करित्तए। कप्पइ बहूणं गणावच्छेइयाणं एगयओ विहरमाणाणं अहाराइणियाए किइकम्मं करित्तए। कप्पइ बहूणं आयरियाणं एगयओ विहरमाणाणं अहाराइणियाएं किइकम्मं करित्तए। कप्पइ बहूणं उवज्झायाणं एगयओ विहरमाणाणं अहाराइणियाए किइकम्मं करित्तए। एवं थेराणं पवत्तगाणं गणीणं गणहराणंपि मुणेयव्वं ॥८॥

शब्दार्थ—१[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [अहाराइणियं] यथारात्निक—दीक्षापर्याय की ज्येष्ठता के अनुसार [किइकम्मं] कृतिकर्म—वन्दन [करित्तए] करना [कप्पइ] कल्पता है।२ किन्तु [निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों का [किइकम्मं] कृतिकर्म—वंदन [करित्तए] करना [नो] नहीं [कप्पइ] कल्पता।३ [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों का [किइकम्मं] कृतिकर्म [करित्तए] करना [कप्पइ] कल्पता है।४ [आयरियउवज्झायाणं] आचार्यों और उपाध्यायों को [गणंसि] गण में [अहाराइणियं] दीक्षा पर्याय की ज्येष्ठता के अनुसार [किइकम्मं] कृतिकर्म [करित्तए] करना [वा] अथवा [कारावित्तए] कराना [कप्पइ] कल्पता है।५ [बहूणं] बहुसंख्यक [भिक्खूणं] भिक्षुओं को [बहूणं] बहुसंख्यक [गणावच्छेइयाणं] गणावच्छेदकों को [बहूणं] बहुसंख्यक [आयरिय उवज्झायाणं] आचार्यों और उपाध्यायों को [एगओ] जो एक साथ [विहरमाणाणं] विचरते हों, उन्हें [अहाराइणियाए] दीक्षा पर्याय की ज्येष्ठता के

अनुसार [किइकम्मं] कृतिकर्म [करित्तए] करना [कप्पइ] कल्पता है। ६ [एगयओ] एक-साथ [विहरमाणाणं] विचरने वाले [बहूणं] अनेक [भिक्खूणं] साधुओं को [अहाराइणियाए] पर्यायज्येष्ठता के अनुसार [किइकम्मं] कृतिकर्म [करित्तए] करना [कप्पइ] कल्पता है। ७ [एगयओ विहरमाणाणं] एक साथ विचरनेवाले [बहूणं] अनेक [गणावच्छेइयाणं] गणावच्छेदकों को [अहाराइणियाए] पर्याय ज्येष्ठता के अनुसार [किइकम्मं] कृतिकर्म [करित्तए] करना [कप्पइ] कल्पता है। ८ [एगयओ] एक साथ [विहरमाणाणं] विचरनेवाले [बहूणं] अनेक [आयरियाणं] आचार्यों को [अहाराइणियाए] पर्यायज्येष्ठता के अनुसार [किइकम्मं] कृतिकर्म [करित्तए] करना [कप्पइ] कल्पता है। ९ [एगयओ] एक-साथ [विहरमाणाणं] विचरनेवाले [बहूणं] अनेक [उवज्झायाणं] उपाध्यायों को [अहाराइणियाए] पर्याय—ज्येष्ठता के अनुसार [किइकम्मं] कृतिकर्म [करित्तए] करना [कप्पइ] कल्पता है। १० [एवं] इसी प्रकार [थेराणं] स्थविरों के [पवत्तगाणं] प्रवर्तकों के [गणीणं]

गणियों के एवं [गणहराणंपि] गणधरों के विषय में भी [मुणेयव्वं] समझना चाहिये।॥६॥

६–महाव्रतकल्प–महाव्रतों का पालन करना महाव्रतकल्प है। प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के शासन में पाँच महाव्रत हैं। इसी को पंचयाम धर्म भी कहते हैं। बीच के तीर्थंकरों में चार ही महाव्रत होते हैं। इसको चतुर्याम धर्म कहा जाता है। मध्यम तीर्थंकरों के साधु ऋजुप्राज्ञ होने से चौथे व्रत को पांचवें में अंतर्भूत कर लेते हैं। क्योंकि अपरिगृहीत स्त्री का भोग नहीं किया जाता। इसलिए चौथा व्रत परिग्रह में ही आ जाता है। यह कल्प सभी तीर्थंकरों के लिए स्थित है अर्थात् हमेशा नियमित रूप से पालने योग्य है। इसी को सूत्रकार कहते हैं–

मूलम्–कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा पंच महव्वयाइं सभावणाइं सम्मं पालित्तए॥७॥

शब्दार्थ–[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [सभावणाइं] भावना सहित [पंच महव्वयाइं] पांच महाव्रतों का [सम्मं] सम्यक् रूप से [पालित्तए] पालन करना [कप्पइ] कल्पता है॥७॥

७–पर्यायज्येष्ठकल्प–ज्ञान दर्शन और चारित्र में बड़े को ज्येष्ठ कहते हैं। प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के शासन में उपस्थापना अर्थात् बड़ी दीक्षा में जो साधु बड़ा होता है वही ज्येष्ठ माना जाता है। मध्य के तीर्थंकरों के शासन में छेदोपस्थापनीय चारित्र अर्थात् बडी दीक्षा का व्यवहार ही नहीं होता है।

जिसने सामायिक आदि छह आवश्यकों का अभ्यास कर लिया है वह बडी दीक्षा का अधिकारी हो सकता है, उस को बडी दीक्षा सातवें दिन दे देनी चाहिये। यदि वह सात दिनों में सामायिकादि आवश्यकों का अभ्यास न कर सका हो तो बाद में अभ्यास कर लेने पर भी चार महीने के भीतर बडी दीक्षा नहीं दी जाती है फिर तो चौथे महीने में बडी दीक्षा देनी चाहिये, इसी प्रकार चार महीने में भी आवश्यक का अभ्यास नहीं कर सके तो छठे महीने में बडी दीक्षा देनी चाहिये। यह उपस्थापना का क्रम है।

यदि पिता, पुत्र, राजा और मंत्री आदि दो व्यक्ति एक साथ दीक्षा ले और एक साथ ही अध्ययनादि समाप्त कर लें तो लोक रूढि के अनुसार पहले पिता या राजा आदि को उपस्थापना दी जाती है। यदि पिता वगैरह में दो चार दिन का विलंब हो तो पुत्रादि को उपस्थापना देने में उतने दिन ठहर जाना चाहिए। यदि अधिक विलम्ब हो तो पिता से पूछकर पुत्र को उपस्थापना (बड़ी दीक्षा) दे देनी चाहिए। यदि पिता न माने तो कुछ दिन ठहर जाना ही उचित है।

जिसकी पहले उपस्थापना होगी वही ज्येष्ठ माना जायगा और वह बाद वालों का वंदनीय होगा। पिता को

पुत्र की वन्दना करने में क्षोभ या संकोच होने की संभावना है। यदि पिता पुत्र को ज्येष्ठ समझने में प्रसन्न हो तो पुत्र को पहले उपस्थापना दी जा सकती है। अब इसी पर्यायज्येष्ठ कल्प के विषय में सूत्र कहते हैं–

मूलम्–कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा पज्जायजेट्ठं वंदित्तए वा नमंसित्तए वा सक्कारित्तए वा सम्माणित्तए वा कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्तए वा ॥८॥

शब्दार्थ–[निग्गंथाणं] श्रमणों [वा] अथवा [निग्गंथीणं] श्रमणियों को [कल्लाणं] कल्याण-कारी [मंगलं] मंगलकारी [देवयं] धर्मदेव और [चेइयं] ज्ञानवन्त [पज्जायजेट्ठं] पर्याय-ज्येष्ठ को [वंदित्तए] वंदन करना [नमंसित्तए] नमस्कार करना [सक्कारित्तए] सत्कार करना [सम्माणित्तए] सन्मान करना [वा] और उनकी [पज्जुवासित्तए] पर्युपासना करना [कप्पइ] कल्पता है॥८॥

८–प्रतिक्रमणकल्प–किए हुए पापों की आलोचना प्रतिक्रमण कहलाता है। प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकर के

साधु के लिए यह स्थित कल्प है अर्थात् उन्हें प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिए। मध्यम तीर्थंकरों के साधुओं के लिए कारण उपस्थित होने पर ही करने का विधान है। प्रतिदिन विना कारण के करने की आवश्यकता नहीं। प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकर के साधुओं को प्रमादवश अनजानपणे में दोष लगने की संभावना है इसलिए उनके लिए प्रतिक्रमण आवश्यक है। मध्यम तीर्थंकरों के साधु अप्रमादी होते हैं, इसलिए उन्हें विना दोष लगे प्रतिक्रमण की आवश्यकता नहीं। अप्रमादी होने के कारण दोष लगाते ही उसकी उसी समय शुद्धि कर लेते हैं।

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा उभओकालं आवस्सयं करित्तए॥९॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं] श्रमणों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] श्रमणियों को [उभओकालं] उभयकाल—दोनों समय [आवस्सयं] आवश्यक—प्रतिक्रमण करना [कप्पइ] कल्पता है॥९॥

९—मासकल्प—चातुर्मास या किसी दूसरे कारण के विना एक मास से अधिक एक स्थान पर न ठहरना मास कल्प है। एक स्थान पर अधिक दिन ठहरने में नीचे लिखे दोष हैं—

एक स्थान में अधिक ठहरने से उस में आसक्ति हो जाती है। 'यह इस स्थान को छोडकर कहीं नहीं जाता' इस प्रकार लोग कहने लगते हैं, जिससे लघुता आती है। साधु के सब जगह विचरते रहने से सभी लोगों का उपकार होता है, सभी जगह धर्म का प्रचार होता है। एक जगह रहने से सब जगह धर्मप्रचार नहीं होता

है। साधु के एक जगह रहने से उसे व्यवहार का ज्ञान नहीं हो सकता, इत्यादि। नीचे लिखे कारणों से साधु एक स्थान पर एक मास से अधिक ठहर सकता है।

(क) कालदोप–दुर्भिक्ष आदि का पड जाना। जिससे दूसरी जगह जाने में आहार मिलना असंभव हो जाय।
(ख) क्षेत्रदोष–विहार करने पर ऐसे क्षेत्र में जाना पड़े जो संयम के लिए अनुकूल न हो।
(ग) द्रव्यदोप–दूसरे क्षेत्र के आहारादि शरीर के प्रतिकूल हों।
(घ) भावदोप–अशक्ति, अस्वास्थ्य, ज्ञानहानि आदि कारण उपस्थित होने पर।

मासकल्प प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के साधुओं के लिए ही है। बीच वालों के लिए नहीं है।

अब इसी मासकल्प का सूत्रकार स्पष्टीकरण करते हैं–

मूलम्–कप्पइ निग्गंथाणं गामंसि वा नयरंसि खेडंसि वा कब्बडंसि वा मडंबंसि वा पट्टणंसि वा आगरंसि वा दोणमुहंसि वा निगमंसि वा रायहाणिंसि वा आसमंसि वा संनिवेसंसि वा संबाहंसि वा घोसंसि वा अंसियंसि वा पुडभेयणंसि वा सपरिक्खेवंसि अबाहिरियंसि हेमंतगिम्हासु एगं मासं वसित्तए कप्पइ निग्गंथाणं गामंसि वा जाव सपरिक्खेवंसि सबाहिरियंसि हेमंतगिम्हासु

दो मासं वसित्तए। कप्पइ तत्थ अंतो एगं मासं बाहिं एगं मासं वसित्तए। कप्पइ अंतो वसमाणाणं अंतो बाहिं वसमाणाणं बाहिं भिक्खायरियाए अडित्तए ॥१०॥

शब्दार्थ–[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [गामंसि] ग्राम में [वा] अथवा [नयरंसि] नगर में [खेडंसि] खेड (धूली के प्राकारवाले गांव) में [कब्बडंसि] कर्बट (थोडे मनुष्यों की वसतिवाले गांव) में [मडंबंसि] मडंब (जिसके चारों ओर एक योजन तक कोई गांव न हो ऐसे गांव) में [पट्टणंसि] पट्टण (जहां सब वस्तुएं मिलती हो ऐसे नगर) में [आगरंसि] आकर (खान) में [दोणमुहंसि] द्रोणमुख (जल और स्थल के मार्गवाला शहर) में [निगमंसि] निगम में व्यापार प्रधान शहर में [रायहाणिंसि] राजधानी में [आसमंसि] तापसों के आश्रम में [सन्निवेसंसि] सन्निवेश (नगर के बाहर का प्रदेश जहां आभीर वगैरह लोक रहते हो) में [संबाहंसि] संबाध (जहां ब्राह्मण आदि चारो वर्णों की प्रभूत

वस्ती हो वह शहर) में [घोसंसि] घोष (अहीरों की वसति) में [अंसियं] अंशिका (नगर का त्रिकादि भाग विशेष) में [पुडभेयणंसि] पुटभेदन (जहां ग्रामान्तर से आकर वणिक्-जन वस्तुओं का विक्रय करते हों ऐसे स्थान) में ये पूर्वोक्त ग्राम नगरादिक यदि [सपरिक्खेवसि] सपरिक्षेप–कोटसहित [अबाहिरियंसि] कोट के बाहर–वस्ती से रहित हो तो इन स्थानों में (हेमंतगिम्हासु) हेमंत और ग्रीष्म ऋतु में [एगं मासं] एक मास [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है ।

[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [गामंसि] ग्राम में [वा] अथवा [जाव] यावत् [सपरिक्खेवंसि] सपरिक्षेप–कोटसहित और [सबाहिरियंसि] बाहर वस्तीवाले पूर्वोक्त स्थानों में [हेमन्तगिम्हासु] हेमन्त और ग्रीष्म ऋतु में [दो मासे] दो मास तक [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है ।

[तत्थ] इन स्थानों में [एगं मासं] एक मास [बाहिं] कोट के बाहर और [अंतो]

कोट के भीतर [एगं मासं] एक मास [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है।

[अंतो] कोट के भीतर [वसमाणाणं] रहनेवालों को भीतर और [बाहिं] बाहर [वसमाणाणं] रहनेवालों को [बाहिं] बाहर [भिक्खायरियाए] भिक्षाचर्या के लिए [अडित्तए] अटन करना [कप्पइ] कल्पता है ॥१०॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथीणं गामंसि वा जाव सपरिक्खेवंसि अबाहिरियंसि हेमंतगिम्हासु दो मासे वसित्तए। कप्पइ निग्गंथीणं गामंसि वा जाव सपरिक्खेवंसि सबाहिरियंसि हेमंतगिम्हासु चत्तारि मासे वसित्तए। कप्पइ तत्थ अंतो दो मासे बाहिं दो मासे वसित्तए। कप्पइ तत्थ अंतो वसमाणीणं अंतो, बाहिं वसमाणीणं बाहिं भिक्खायरियाए अडित्तए ॥११॥

शब्दार्थः—[निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [गामंसि] ग्राम में [जाव] यावत् पूर्वोक्त [सपरिक्खेवंसि] कोट सहित और [अबाहिरियंसि] कोट के बाहर—वस्तीशून्य ऐसे स्थानों

में [हेमंतगिम्हासु] हेमंत और ग्रीष्मऋतु में [दो मासे] दो मास तक [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है।

[निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [गामंसि] ग्राम में [जाव] यावत् पूर्वोक्त [सपरिक्खेवंसि] कोट-सहित और [सबाहिरियंसि] कोटरहित बाहर वस्तीवाले स्थानों में [हेमंतगिम्हासु] हेमंत और ग्रीष्म ऋतु में [चत्तारि मासे] चार महिने [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है।

[तत्थ] वहां उन स्थानों में [दो मासे] दो महिना [अंतो] भीतर और [दो मासे] दो महिना [बाहिं] बाहर [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है।

[अंतो] भीतर [वसमाणीणं] रहनेवाली साध्वियों को [अंतो] भीतर और [बाहिं] बाहर [वसमाणीणं] रहनेवाली साध्वियों को [बाहिं] बाहर ही [भिक्खायरियाए] भिक्षा के लिए [अडित्तए] अटन करना [कप्पइ] कल्पता है ॥११॥

मूलम्—नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा गामंसि वा जाव राय-

हाणिंसि वा एगपागाराए एगदुवाराए एगनिक्खमणपवेसाए एगयओ वसित्तए ॥१२॥

शब्दार्थः–[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] और [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [एग पागाराए] एक प्राकारवाले [एगदुवाराए] एक ही द्वारवाले [एगनिक्खमणपवेसाए वा] अथवा एक ही आने–जाने के मार्गवाले [गामंसि] ग्राम में [जाव] यावत् [रायहाणिंसि राजधानी में [एगयओ] एक ही समय दोनों को [वसित्तए] रहना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता है ॥१२॥

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथीणं वा निग्गंथाणं वा राओ वा विओले वा अद्धाणगमणाए एत्तए ॥१३॥

शब्दार्थः–[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [राओ] रात्रि में [वा] अथवा [वियाले] विकाल–सूर्योदय के पूर्व या सूर्यास्त के पश्चात्

[अद्धाणगमणाए] विहार करना [नो] नहीं [कप्पइ] कल्पता है।

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा राओ वा वियाले वा वत्थं वा पत्तं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा रयहरणं वा गोच्छगं वा पडिगाहित्तए। नन्नत्थ चोरचोरिएणं ॥१४॥

शब्दार्थ–[निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [राओ] रात्री में [वा] अथवा [वियाले] विकाल में [वत्थं] वस्त्र [पत्तं] पात्र [कंबलं] कंबल [पायपुंछणं] पादप्रोंछन [रयहरणं] रजोहरण [वा] अथवा [गोच्छगं] पूंजनी [पडिगाहित्तए] ग्रहण करना [नो] नहीं [कप्पइ] कल्पता है [नन्नत्थ] सिवाय [चोरचोरिएण] चोर के चुराये हुए के। (चोर के चुराये जाने पर उपरोक्त वस्तु चातुर्मास के भीतर भी लेना कल्पता है) ॥१४॥

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा असणं वा पाणं वा खाइमं

वा साइमं वा ओसहं वा भेसज्जं वा अन्नं वा तहप्पगारं आहरणिज्जं वा उवलेवणिज्जं वा रत्तिं पडिगाहित्तए ॥१५॥

शब्दार्थ-(निग्गंथाणं) निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [असणं] अशन [पाणं] पान [खाइमं] खाद्य [साइमं] स्वाद्य [ओसहं] औषध [वा] अथवा [भेसज्जं] भैषज [वा] अथवा [तहप्पगारं] इसी प्रकार के [अन्नं] अन्य [आहरणिज्जं] आहार के योग्य [वा] अथवा [उवलेवणिज्जं] लेपन करने योग्य पदार्थ को [रत्तिं] रात्री में [पडिगाहित्तए] ग्रहण करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता है। ॥१५॥

मूलम्-नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा संखडिवडियाए गमित्तए। नन्नत्थ विहारमग्गेणं ॥१६॥

शब्दार्थ-[निग्गंथाणं] साधुओं को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] साध्वियों को [संखडिवडियाए] समूहभोज्य-जिमणवार में [गमित्तए] जाना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता।

[नन्नत्थ] सिवाय [विहारमग्गेणं] विहारमार्ग के ॥१६॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा एवंविहेणं विहारेणं विहरमाणाणं आसाढपुण्णिमाए वासावासं वसित्तए। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा एवंविहेणं विहारेणं विहरमाणाणं वासावासं वसित्तए? जण्णं वासावासे एवंविहेणं विहारेणं विहरमाणाणं निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा बहूणं रुक्खाणं, गुम्माणं, गुच्छाणं लयाणं, वल्लीणं, तणाणं वलयाणं हरियाणं अंकुराणं ओसहीणं जलरुहाणं कुहणाणं सिणेहसुहुमाणं पुप्फसुहुमाणं पणगसुहुमाणं बीयसुहुमाणं हरियसुहुमाणं अन्नेसिंपि तहप्पगाराणं एगिंदियाणं विराहणा हवइ। एवं संखाणं संखणगाणं जलोयाणं पीलंगूणं गंडोलयाणं सिसुणागाणं अन्नेसिंपि तहप्पगाराणं बेइंदियाणं विराहणा हवइ। एवं

पाणसुहुमाणं कुंथूणं पिवीलियाणं कीडियाणं बहुप्पयाणं जलपुयराणं अंडसुहुमाणं उत्तिंगसुहुमाणं अन्नेसिंपि तहप्पगाराणं तेइंदियाणं विराहणा हवइ। एवं मक्खियाणं दंसमसगाणं सलभपयंगाणं भमराणं भिंगोलियाणं कसारियाणं विच्छियाणं अन्नेसिंपि तहप्पगाराणं चउरिंदियाणं विराहणा हवइ। एवं दद्दुरियाणं मूसियाणं मच्छाणं कच्छवाणं अन्नेसिंपि तहप्पगाराणं पंचिंदियाणं विराहणा हवइ। तेणट्ठेणं एवं वुच्चइ–कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा एवंविहेणं विहारेणं विहरमाणाणं आसाढपुण्णिमाए वासावासं वसित्तए ॥१७॥

शब्दार्थ–(एवंविहेणं) इस प्रकार–मासकल्प के [विहारेणं] विहार से [विहरमाणाणं] विचरते हुए [निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [आसाढपुण्णिमाए] आषाढ मास की पूर्णिमा को (वासावासं) वर्षावास–चातुर्मास के लिए

एकस्थल पर [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है।

[भंते] हे भगवन्! [से केणट्ठेणं] किस कारण से [एवं] ऐसा [वुच्चइ] कहा गया है कि [निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को [वा] और [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [एवंविहेणं] इस प्रकार के [विहारेणं] विहार से [विहरमाणाणं] विचरण करते हुए को [वासावासं] वर्षा-वास के लिए—चातुर्मास के लिए [वसित्तए] एक स्थान पर रहना [कप्पइ] कल्पता है? उत्तर में गुरु कहते हैं—हे शिष्य! [जन्नं] जिससे [वासावासे] वर्षाकाल में [एवंविहेणं] इस प्रकार के [विहारेणं] मासकल्प विहार से [विहरमाणाणं] विचरण करने वाले [निग्गं-थाणं] निर्ग्रन्थों को और [निग्गंथीणं] निर्ग्रन्थियों को [बहूणं] बहुत से [रुक्खाणं] वृक्षों [गुम्माणं] गुल्मों [गुच्छाणं] गुच्छों [लयाणं] लताओं [वल्लीणं] वल्लियों [तणाणं] तृणों [वलयाणं] वलयों (वलयाकार वेलाओं) [हरियाणं] हरितों [अंकुराणं] अंकुरों [ओसहीणं] औषधों [जलरुहाणं] जलरुहों (पानी में पैदा होनेवाली वनस्पति) [कुहणाणं] कुहणों

(वनस्पति विशेष) [सिणेहसुहुमाणं] स्नेहसूक्ष्मों [पुप्फसुहुमाणं] पुष्पसूक्ष्मों [पणगसुहुमाणं] पनक (शैवाल) सूक्ष्मों [बीयसुहुमाणं] बीजसूक्ष्मों [हरियसुहुमाणं] हरितसूक्ष्मों [अन्नेसिंपि तहप्पगाराणं] इस प्रकार के अन्य भी [एगिंदियाणं] एकेन्द्रिय जीवों की [विराहणा] विराधना [हवइ] होती है। [एवं] इसी प्रकार [संखाणं] शंख [संखणगाणं] शंखनख (छोटाशंख) [जलोयाणं] जलौक [णीलंगूणं] नीलंगू (कृमिविशेष) [गंडोलयाणं] गंडोलक [सिसुनागाणं] शिशुनाग (अलसिया) [तहप्पगाराणं अन्नेसिंपि] इस प्रकार के अन्य भी [बेइंदियाणं] द्वीन्द्रिय जीवों की [विराहणा] विराधना [हवइ] होती है। [एवं] इस प्रकार [पाणसुहुमाणं] प्राणसूक्ष्म [कुंथूणं] कुन्थु [पिवीलियाणं] पिपीलिका [कीडियाणं] कीटिका [बहुप्पयाणं] बहुपद [जलपुयराणं] जलपूतर (फुवारे) [अंडसुहुमाणं] अंडसूक्ष्म [उत्तिंगसुहुमाणं] उत्तिंगसूक्ष्म [तहप्पगाराणं] इस प्रकार के [अन्नेसिंपि] अन्य भी (तेइंदियाणं) त्रीन्द्रिय जीवों की [विराहणा] विराधना [भवइ] होती है। [एवं] इस प्रकार [मक्खियाणं] मक्षिका [दंस-

मसगाणं] दंशमशक डांस–मच्छर [सलभपयंगाणं] शलभ, पतंग [भमराणं] भ्रमर [भिंगोलियाणं] भृंगोलिका [कसारियाणं] कसारी [विच्छियाणं] वृश्चिक [तहप्पगाराणं] इस प्रकार के [अन्नेसिंपि] अन्य भी [चउरिंदियाणं] चतुरिन्द्रिय प्राणियों की [विराहणा] विराधना [भवइ] होती है। [एवं] इस प्रकार [दद्दुरियाणं] दर्दुरिक मेंढक [मूसियाणं] मूषिक [मच्छाणं] मत्स्य [कच्छवाणं] कच्छप तथा [तहप्पगाराणं] इस प्रकार के [अन्नेसिंपि] अन्य भी [पंचिंदियाणं] पंचेन्द्रिय जीवों की [विराहणा] विराधना [भवइ] होती है। [तेणट्ठेणं] इस कारण से [एवं वुच्चइ] ऐसा कहा गया है कि [एवंविहेणं] इस प्रकार के [विहारेणं] विहार से [विहरमाणाणं] विचरण करनेवाले [निग्गंथाणं] निर्ग्रन्थों को अथवा [निग्गंथीणं] साध्वियों को [आसाढपुण्णिमाए] आषाढमास की पूर्णिमा के दिन [वासावासं] वर्षावास करने के लिए एक स्थान पर [वसित्तए] रहना [कप्पइ] कल्पता है॥१७॥

मूलम्—नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा वासावासे विहरित्तए॥१८॥

शब्दार्थ-[निग्गंथाणं] साधुओं को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] साध्वियों को [वासावासे] वर्षाकाल में [विहरित्तए] विहार करना [नो] नहीं [कप्पइ] कल्पता है ॥१८॥

मूलम्-कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा वासावासं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवित्तए। नो तेसिं कप्पइ तं रयणिं उवाइणित्तए ॥१९॥

शब्दार्थ-[निग्गंथाणं] साधुओं को [वा] अथवा [निग्गंथीणं] साध्वियों को [वासावासं] वर्षावास का [सवीसइराए मासे] एक मास और वीस दीन के [वीइक्कंते] व्यतीत होने पर [पज्जोसवित्तए] पर्युषण करना [कप्पइ] कल्पता है। [तेसिं] उन्हें [तं रयणिं] उस रात्रि का (भाद्रपद शुक्लपंचमी की रात्रि का) [उवाइणित्तए] उल्लंघन करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥१९॥

मूलम्-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा वासावासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवणं पज्जोसवित्तए? जओ णं

अईएहिं अणंतेहिं अरिहंतेहिं भगवंतेहिं तित्थयरेहिं वासावासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवणं पज्जोसवियं, एवं उसभाइ-महावीरपज्जवसाणेहिं तित्थयरेहिं वि वासावासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवियं। एवं सव्वेहिं आयरिएहिं सव्वेहिं उवज्झाएहिं सव्वेहिं थेरेहिं सव्वेहिं पवत्तएहिं सव्वेहिं गणीहिं सव्वेहिं गणहरेहिं सव्वेहिं गणावच्छेयएहिं, एवं अम्हाणं धम्मायरिएहिं, चउव्विहेहिं संघेहिं वि वासावासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवणं पज्जोसवियं। तेणट्ठेणं एवं वुच्चइ-कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवणं पज्जोसवित्तए॥२०॥

शब्दार्थ-[से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ] प्रश्न-हे भगवन्! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि [निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [वासा-

वासाणं] वर्षावास के [सवीसइराए मासे विइक्कंते] बीस दिन और एक मास व्यतीत होने पर [कप्पइ पज्जोसवणं पज्जोसवित्तए] पर्युषण पर्व करना कल्पता है।

उत्तर—हे शिष्य ! [जओ णं अईएहिं अणंतेहिं अरिहंतेहिं भगवंतेहिं तित्थयरेहिं] जिस प्रकार अतीतकाल के अनन्त अरिहंत भगवन्त तीर्थंकरोंने [वासावासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवणं पज्जोसवियं] वर्षावास के वीस दिन सहित एक मास व्यतीत होने पर पर्युषण किया था। [एवं उसभाइ—महावीरपज्जवसाणेहिं तित्थयरेहिं वि वासावासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवियं] उसी प्रकार वर्तमान चौवीसी में ऋषभदेव से लेकर महावीर पर्यन्त के तीर्थंकरों ने भी वीस दिन सहित एक मास के व्यतीत होने पर पर्युषण किया था। [एवं सव्वेहिं आयरिएहिं] इसी प्रकार सभी आचार्योंने [सव्वेहिं उवज्झाएहिं] सभी उपाध्यायोंने [सव्वेहिं थेरेहिं] सभी स्थविरोंने [सव्वेहिं पवत्तएहिं] सभी प्रवर्तकोंने [सव्वेहिं गणीहिं] सभी गणि-

योंने [सव्वेहिं गणहरेहिं] सभी गणधरों–गणस्वामियोंने [सव्वेहिं गणावच्छेयएहिं] सभी गणावच्छेदकोंने [एवं अम्हाणं धम्मायरिएहिं] इसी प्रकार हमारे धर्माचार्योंने तथा [चउव्विहेहिं संघेहिं वि] चतुर्विध संघने भी [वासावासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवणं पज्जोसवियं] वर्षावास के बीस दिन सहित एक मास व्यतीत होने पर पर्युषण किया था। [तेणट्ठेणं एवं वुच्चइ] इसलिए ऐसा कहा गया है कि [कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा सवीसइराए मासे वीइक्कंते पज्जोसवणं पज्जोसवित्तए] निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों को वर्षावास के बीस दिन सहित एक मास व्यतीत होने पर पर्युषण करना कल्पता है ॥२०॥

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा अपज्जोसवणाए पज्जोसवित्तए ॥२१॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [अपज्जो-

सवणाए पज्जोसवित्तए] अपर्यूषणाकाल में पर्युषण करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥२१॥

मूलम्—नो कप्पइ निग्गथाणं वा निग्गंथीणं वा पज्जोसवणाए गोलोम-मायाइंपि बालाइं उवाइणावित्तए ॥२२॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [पज्जोसवणाए] पर्युषणा में [गोलोममायाइंपि बालाइं उवाइणावित्तए] गाय के रोम जितने भी बालों को रखना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥२२॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा जहन्नेणं दुमासियं तिमासियं वा उक्कोसेणं छम्मासियं वा लोयं करित्तए ॥२३॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [जहन्नेणं दुमासियं तिमासियं वा] जघन्य से दो मास में, या तीन मास में तथा [उक्कोसेणं छम्मासियं वा लोयं करित्तए] उत्कृष्ट से छह मास में लोच करना [कप्पइ] कल्पता है ॥२३॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा पज्जोसवणाए अट्ठारसभत्तं वा जाव चउत्थभत्ते वा करित्तए ॥२४॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [पज्जोसवणाए] पर्युषणाकाल में [अट्ठारसभत्तं वा जाव चउत्थभत्तं वा करित्तए] अष्टादश भक्त (अठाई) यावत् चतुर्थ भक्त–(उपवास) का तप करना [कप्पइ] कल्पता है ॥२४॥

मूलम्—नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा पज्जोसवणाए इत्तरियंपि चउव्विहमाहारं वा ओसहं वा भेसज्जं वा विलेवणं वा पडिगाहित्तए ॥२५॥

शब्दार्थ—[नग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों को [पज्जोसवणाए] पर्युषणा के दिन—संवत्सरी के दिन [इत्तरियंपि] स्वल्पमात्र भी [चउव्विहमाहारं] चार प्रकार का आहार [ओसहं वा] औषध अथवा [भेसज्जं वा] भैषज्य अथवा [विलेवणं वा] विलेपन [पडिगाहित्तए] ग्रहण करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥२५॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा वासावासं वसियाणं गामंसि वा जाव संनिवेसंसि वा सव्वओ समंता अद्धजोयणं उग्गहं उग्गिण्हित्ता णं

वर्षावास में स्थित [निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] वा जाव सन्निवेसंसि वा] ग्राम में यावत् सन्निवेश [अद्धजोयणं] आधा योजन अर्थात् दो कोस की पइ] आज्ञा लेकर रहना कल्पता है ॥२६॥

निग्गंथीणं वा गामंसि वा जाव संनिवेसंसि वा ए भिक्खायरियाए गमित्तए वा पडिनिय-

शब्दार्थ–[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [गामंसि वा वाव सन्निवेसंसि वा] ग्राम यावत् सन्निवेश मे [सव्वओ समंता अद्धजोयणमेराए] सब दिशाओं में आधा आधा योजन तक [भिक्खायरियाए गमित्तए वा पडिनियत्तए वा] भिक्षा के लिए गमनागमन करना [कप्पइ] कल्पता है ॥२७॥

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा गामंसि वा जाव सन्नि-वेसंसि वा, जइ तत्थ नई निच्चोयगा निच्चसंदणा असेउगा, तत्थ सव्वओ समंता अद्धजोयणमेराए भिक्खायरियाए गमित्तए वा पडिनियत्तए वा ॥२८॥

शब्दार्थ–[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [गामंसि वा जाव सन्निवेसंसि वा] ग्राम यावत् सन्निवेश में [जइ तत्थ नई निच्चोयगा] जिस नदी में सदा जलरहता है [निच्चसंदणा] जो सदा बहती रहती हो और [असेउगा] जिस पर पुल न हो [तत्थ सव्वओ समंता] तो वहां सब ओर [अद्धजोयणमेराए] अर्धा योजन

तक [भिक्खायरियाए] भिक्षा के लिये [गमित्तए वा पडिनियत्तए वा] आना और जाना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥२८॥

सूलम्-नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा वासे वासंते गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा गमित्तए वा पविसित्तए वा ॥२९॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [वासे वासंते] वर्षा बरस रही हो तब [गाहावइकुलं] गृहस्थ के घर [भत्ताए वा पाणाए वा] आहार अथवा पानी के लिए [गमित्तए वा पविसित्तए वा] जाना या प्रवेश करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥२९॥

सूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अनुप्पविट्ठाणं वासं वासंते वि वसइं पडिनियत्तए। नो कप्पइ तेसिं वेलं उवाइणावित्तए ॥३०॥

शब्दार्थ--[गाहावइ कुलं] गृहस्थ के घर में [पिंडवायपडियाए] आहार पानी के निमित्त [अनुपविट्ठाणं] प्रविष्ट हुए [निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वी को [वासा वासंते] वर्षा हो रही हो तो भी [वसइं पडिनियत्तए] उपाश्रय में वापस आना [कप्पइ] कल्पता है। किन्तु [तेसिं] उनके घर [वेलं उवाइणावित्तए] समय व्यतीत करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥३०॥

जब तिविहार तपस्या करनी हो तो धोवण पाणी विना नहीं होती है सो कहते हैं–

मूलम्–कप्पइ निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा चउत्थभत्तियस्स तिण्णि पाणगाइं पडिगाहित्तए, तं जहा-उस्सेइमे संसेइमे चाउलधोवणे। कप्पइ निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा छट्ठभत्तियस्स तिण्णि पाणगाइं पडिगाहित्तए, तं जहा-तिलोदए तुसोदए जवोदए। कप्पइ निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा अट्ठमभत्तियस्स तिण्णि पाणगाइं पडिगाहित्तए, तं जहा-आयामए सोवीरए सुद्धवियडे ॥३१॥

शब्दार्थ—[चउत्थभत्तियस्स] उपवास में [निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा] साधु अथवा साध्वी को [तिण्णि पाणगाइं पडिगाहित्तए] तीन प्रकार का पानी ग्रहण करना [कप्पइ] कल्पता है। [तं जहा] वह इस प्रकार है—[उस्सेइमे] उत्स्वेदिम—रोटी बन जाने के बाद कठौती के धोने का जो जल होता है वह उत्स्वेदिम जल कहलाता है। [संसेइमे] संसेकिम—अरणिक आदि की भाजी उबालकर जिस शीतल जल से धोई जाती है वह संसेकिम कहलाता है। [चाउलधोवणे] तन्दुल धोवन—चावल धोया हुआ पानी। [छट्ठभत्तियस्स] षष्ठ भक्त [बेला] करनेवाले [निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा] साधु या साध्वी को [तिण्णि पाणगाइं पडिगाहित्तए] तीन प्रकार का पानी ग्रहण करना [कप्पइ] कल्पता है। [तं जहा] वह इस प्रकार—[तिलोदए] तिल का धोवन [तुसोदए] तुष—का धोवन [जवोदए] जौ का धोवन। [अट्ठमभत्तियस्स] अष्टम भक्त—तेला करने वाले [निग्गंथस्स वा निग्गंथीए] साधु—साध्वी को [तिण्णि पाणगाइं] तीन प्रकार का पानी [पडिगाहित्तए] ग्रहण करना [कप्पइ] कल्पता है। [तं जहा] वह इस प्रकार है—

[आयामए] आचामक–शाक आदि का ओसामण [सोवीरए] सौवीरक–कांजी का धोवन, [सुद्धवियडे] शुद्ध विकट–उष्ण जल । ॥३१॥

मूलम्–कप्पइ निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा दसमभत्तियस्स एगवीसं पाणगाइं अण्णयराइं वा तहप्पगाराइं पाणगाइं पडिगाहित्तए, तं जहा–उस्सेइमं वा १, संसेइमं वा २, चाउलोदगं वा ३, तिलोदगं वा ४, तुसोदगं वा ५, जवोदगं वा ६, आयामं वा ७, सोवीरं वा ८, अंबपाणगं वा ९, अंबाडपाणगं वा १०, कविट्ठपाणगं वा ११, माउलुंगपाणगं वा १२, मुद्दियापाणगं वा १३, दाडिमपाणगं वा १४, खज्जूरपाणगं वा १५, णालिएरपाणगं वा १६, करीरपाणगं वा १७, कोलपाणगं वा १८, आमलगपाणगं वा १९, चिंचापाणगं वा २०, सुद्धवियडं वा २१, अण्णयरं वा तहप्पगारं पाणगजायं चिराधोयं

अंबिलं वुक्कंतं परिणयं विद्धत्थं फासुयं एसणिज्जं सिया ॥३२॥

शब्दार्थ—[दसमभत्तियस्स] दशम भक्त—चोला करनेवाले [निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा] साधु और साध्वी को [एकवीसं पाणगाइं] इक्कीस प्रकार के धोवन में से [अण्णयराइं वा तहप्पगाराइं पाणगाइं पडिगाहित्तए कप्पइ] कोई भी धोवन ग्रहण करना कल्पता है। [तं जहा] वे इस प्रकार हैं—[उस्सेइमं वा] उत्स्वेदिम आटे का धोवन [संसेइमं] संसेकिम भाजी का धोवन [चाउलोदगं वा] चावल का धोवन [तिलोदगं वा] तिल का धोवन [तुसोदगं वा] तुष का धोवन [जवोदगं वा] जव का धोवन [आयामं वा] शाक आदि का धोवन [सोवीरं वा] कांजी का धोवन [अंबपाणगं वा] आम्र का धोवन, [अंबाडपानगं वा] आमडी का धोवन [कविट्ठपाणगं वा] कविठ का धोवन [माउलुंगपाणगं वा] बिजोरे का धोवन [मुद्दिया पाणगं वा] दाख का धोवन, [दाडिमपाणगं वा] अनार का धोवन [खज्जूरपाणगं वा] खजूर का धोवन [णालिएरपाणगं वा] नारियल का धोवन [करीरपाणगं वा] केर का धोवन [कोलपाणगं वा] बेर का

धोवन [आमलगपाणगं वा] आंवले का धोवण [चिंचा पाणगं वा] इमली का धोवन [सुद्धवियडं वा] उष्ण जल [अण्णयरं वा तहप्पगारं] इन पानकों के अतिरिक्त इसी प्रकार के अन्य भी कोई पानक हों [चिराधोयं] जो पर्याप्त समय पहले छाश आदि के भाजन धोने में प्रयुक्त किये गए हों [अंबिलं] अतएव अम्ल हो चुके हों [वुक्कंतं] जिनकी पर्याय बदल गयी हों [परिणयं] जो शस्त्रपरिणत हो चुके हों [विद्धत्थं] अचित्त हो गए हों इस कारण [फासुयं] प्रासुक एवं [एसणिज्जं सिया] एषणीय–आधाकर्मादि दोषों से रहित हों वे भी ग्रहण किये जा सकते हैं ॥३२॥

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा पढमाए पोरिसीए पडिग्गहियं चउत्थीए पोरिसीए परिभुंजित्तए, तं जहा–असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा ओसहं वा भेसज्जं वा विलेवणं वा अन्नयरं वा तहप्पगारं भोयणजायं वा पाणगजायं वा ओसहजायं वा भेसज्जजायं वा विलेवणजायं वा ॥३३॥

शब्दार्थ--[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वी को [पढमाए पोरिसीए] प्रथम प्रहर में [पडिग्गाहियं] ग्रहण किये हुए का [चउत्थीए पोरिसीए] चौथे प्रहर में [परिभुंजित्तए] उपभोग करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता। [तं जहा] वे इस प्रकार हैं [असणं] अशन [पाणं वा] पान [खाइमं वा] खाद्य [साइमं वा] स्वाद्य [ओसहं वा] औषध [भेसज्जं वा] भैषज [विलेवणं वा] विलेपन [अन्नयरं वा तहप्पगारं] तथा अन्य कोई [भोयणजायं वा] भोजन [पाणगजायं वा] पान [ओसहजायं वा] औषध [भेसज्जजायं वा] भैषज्य [विलेवणजायं वा] अथवा विलेपन करने के पदार्थों का समूह ॥३३॥

मूलम्--नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा सचित्तं बिलं वा लोणं सचित्तं उब्भियं वा लोणं अण्णयरं वा तहप्पगारं सचित्तं वत्थुं पडिगाहित्तए वा परिभुंजित्तए वा। आहच्च जेण केणवि पगारेण सचित्तं वत्थुं पडिगाहियं हवेज्जा, तं परिठवेज्जा, णो भुंजिज्जा॥३४॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वियों को [सचित्तं विलं वा लोणं] सचित्त काला नमक, [सचित्तं उब्भियं वा] सचित्त समुद्री नमक [अण्णयरं वा तहप्पगारं सचित्तं वत्थुं] उस प्रकार की अन्य कोई भी सचित्त वस्तु की [पडिगाहित्तए वा परिभुंजित्तए वा] ग्रहण करना अथवा परिभोग करना—सेवन करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥३४॥

मूलम्—नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा गाहावइस्स, लाउपाएसु वा, मट्टियापाएसु वा, कट्ठपाएसु वा, अयपाएसु वा, तंबपाएसु वा, तउपाएसु वा, सीसगपाएसु वा, कंसपाएसु वा, रुप्पपाएसु वा, सुवण्णपाएसु वा, अन्नयरेसु वा, तहप्पगारेसु पाएसु असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, परिभुंजित्तए, वत्थाइयं वा पक्खालित्तए। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ? जेणं तहप्पगारेसु पाएसु असणाइयं परिभुंजेमाणो वत्थाइयं वा पक्खालेमाणो निग्गंथे

वा निग्गंथी वा आयारापरिभसइ ॥३५॥

शब्दार्थ-[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधुओं और साध्वियों को [गाहावइस्स] गृहस्थ के [लाउपाएसु] तुंबे के पात्रों में [मट्टियापाएसु वा] मिट्टी के पात्रों में [कट्ठ-पाएसु वा] काष्ठ के पात्रों में [अयपाएसु वा] लोहे के पात्रों में [तंबपाएसु वा] तांबे के पात्रों में [तउपाएसु वा] रांगे के पात्रों में [सीसगपाएसु वा] शीशे के पात्रों में [कंसपाएसु वा] कांसे के पात्रों में [रुप्पपाएसु वा] चान्दी के पात्रों में [सुवण्णपाएसु वा] सुवर्ण के पात्रों में [अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु वा] तथा इसी प्रकार के अन्यान्य [पाएसु वा] पात्रों में [असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा] अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का [परिभुंजित्तए] परिभोग करना [वत्थाइयं वा पक्खालित्तए] तथा उनमें वस्त्र आदि का धोना भी [नो कप्पइ] नहीं कल्पता।

[से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ] हे भगवन् किस कारण से ऐसा कहा है ? [जेणं

तहप्पगारेसु पाएसु] गुरु उत्तर देते हुए कहते हैं—हे शिष्य ! कारण यह है कि इस प्रकार के पात्रों में [असणाइयं परिभुंजेमाणो] अशनादिक का परिभोग करते हुए तथा [वत्थाइयं वा पक्खालेमाणो] वस्त्रादि धोते हुए [निग्गंथे वा निग्गंथी वा आयारा परिभंसइ] श्रमण या श्रमणी आचार से परिभ्रष्ट—पतित हो जाते हैं ॥३५॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा पीढं वा, फलगं वा, सिज्जं वा, संथारगं वा, वत्थं वा, पत्तं वा, कंबलं वा, सदंडगं, रयहरणं वा, चोलपट्टगं वा, सदोरगं मुहवत्थियं वा, पायपुंछणं वा, अन्नं वा तहप्पगारं उवगरणजायं वा, वसइं वा, उभओ कालं पडिलेहित्तए वा पमज्जित्तए वा ॥३६॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों को [पीढं वा] पीठ [फलगं वा] फलक—पाट [सिज्जं वा] शय्या [संथारगं वा] संस्तारक [वत्थं वा] वस्त्र [पत्तं वा] पात्र [कंबलं वा] कंबल [सदंडगं रयहरणं वा] रजोहरण और उसकी

दण्डी [चोलपट्टगं वा] चोलपट्ट [सदोरगं मुहवत्थियं] दोरा सहित मुखवस्त्रिका [पायपुंछणं वा] पादप्रोंछन [अन्नं वा तहप्पगारं उवगरणजायं] तथा इसी प्रकार के अन्य सब उपकरणों की [वसइं वा] उपाश्रय की [उभओ कालं पडिलेहित्तए वा पमज्जित्तए वा] दोनों काल प्रतिलेखना और प्रमार्जना करना [कप्पइ] कल्पता है। ॥३६॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा अट्ठारसविहं उवस्सयं तहप्पगारं अण्णं वा उवस्सयं वसित्तए। तं जहा—१ देवकुलं २ सहं वा ३ पवं वा ४ आवसहं वा ५ रुक्खमूलं वा ६ आरामं वा ७ कंदरं वा ८ आगरं वा ९ गिरिगुहं वा १० कम्मघरं वा ११ उज्जाणं वा १२ जाणसालं वा १३ कुवियसालं वा १४ जन्नमण्डवं वा १५ सुन्नघरं वा १६ सुसाणं वा १७ लेणं वा १८ आवणं वा अण्णं वा तहप्पगारं दगमट्टियबीयहरियतसपाणअसंसत्तं अहा-

कडं फासुयं एसणिज्जं विवित्तं इत्थीपसुपंडगरहियं पसत्थं। जे णं अहाकम्म-बहुले आसिय-समज्जिओ-वलित्त-सोहिय-छायण-दूमण-लिंपण-अणुलिंपण-जलण-भंडचालणसमाउले सिया, जत्थ य अंतो बहिं च असंजमो वड्ढइ नो से कप्पइ वसित्तए॥३७॥

शब्दार्थ-[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वियों को [अट्ठारसविहं उवस्सयं] अठारह प्रकार के उपाश्रयों में [तहप्पगारं अण्णं वा उवस्सयं वसित्तए] तथा इन्हीं जैसे अन्य उपाश्रयों में निवास करना [कप्पइ] कल्पता है। [तं जहा] वे इस प्रकार हैं [देवकुलं वा] देवकुल-देवगृह [सहं वा] सभा [पवं वा] प्रपा [आवसहं] आवसथ-घर [रुक्खमूलं वा] वृक्षमूल-वृक्ष के नीचे [आरामं वा] आराम [कंदरं वा] कंदरा-गुफा [आगरं वा] आकर-खान [गिरिगुहं वा] गिरिगुफा [कम्मघरं वा] कर्मगृह [उज्जाणं वा] उद्यान [जाणसालं] यानरथादि शाला [कुवियसालं] कुप्यशाला-गृहोपकरण-

शाला [जन्नमंडवं वा] यज्ञमण्डप [सुन्नघरं वा] शून्यघर [सुसाणं वा] समशान [लेणं वा] लयन--पर्वत में कोरा हुआ घर [आवणं वा] आपण-दुकान [अन्नं वा तहप्पगारं] इनसे अतिरिक्त इसी प्रकार के [दगमट्टियबीयहरियतसपाणअसंसत्तं] सचित्त जल, मृत्तिका, बीज, वनस्पति एवं त्रसजीवों के संसर्ग से रहित [अहाकडं फासुयं एसणिज्जं] गृहस्थों द्वारा अपने निमित्त बनाये हुए प्रासुक एषणीय [विवित्तं इत्थीपसुपंडगरहिय पसत्थं] एकान्त स्थान में तथा स्त्री पशु और नपुंसक से रहित और प्रशस्त निर्दोष उपाश्रय में रहना [कप्पइ] कल्पता है। [जेणं आहाकम्मबहुले] जो उपाश्रय आधाकर्म दोष से युक्त हो [आसिय–समज्जिओवलित्त–सोहिय–छायण–दूमण–लिंपण अणुलिंपण–जलण–भंडचालण–समाउले सिया] तथा जो सचित्त जल से सिंचा गया हो, झाड़ू आदि से कचरा या जाला आदि हटाया गया हो। गोबर आदिसे लीपा हुआ, रंग आदि से शोभित किया हुआ, आच्छादित–ढांका हुआ, सफेदा आदि से रंगा हुआ, लीपा

हुआ, या बार बार लिपा हुआ। सर्दी आदि दूर करने के लिए जिसमें आग सुलगाइ गइ हो ऐसा बर्तन-भांडे आदि का हेरफेर किया हो ऐसी अन्य सावद्य क्रिया से युक्त और [जत्थ य अंतो बहिं च असंजमो वड्ढइ] और जहां भीतर बाहर असंयम की वृद्धि होती हो [नो से कप्पइ वसित्तए] ऐसे उपाश्रय में रहना नहीं कल्पता ॥३७॥

मूलम्-कप्पइ निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा आयरियं वा, उवज्झायं वा, जाव गणावच्छेयगं वा, रयणाहियं वा, आपुच्छित्ता तेसिं उग्गहं च उग्गिण्हित्ता बारसविहेसु, तवोकम्मेसु णं अण्णयरं ओरालं कल्लाणं, सिवं, धण्णं, मंगल्लं, सस्सिरीगं, महानुभावं, कसायपंकपक्खालगं, कम्ममलविसोहगं, तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, पडिगाहित्तए वा आहारित्तए वा, उच्चारं वा, पासवणं वा, परिट्ठावित्तए, सज्झायं

आचार्या-
द्याज्ञया-
तपः आदि
क्रिया
करणम्

वा करित्तए, ठाणं वा ठावित्तए, धम्मजागरियं वा जागरित्तए, अन्नयरं वा तहप्पगारं किंचि वि कज्जजायं करित्तए ॥३८॥

शब्दार्थ—[निग्गंथस्स वा निग्गंथीए वा] साधु और साध्वी को [आयरियं] आचार्य [उवज्झायं वा] उपाध्याय [वा जाव गणावच्छेयगं वा] यावत् गणावच्छेदक, [रयणाहियं वा] अथवा रत्नाधिक—पर्यायजेष्ठ से [आपुच्छित्ता] पूछकर [तेसिं उग्गहं च उग्गिण्हित्ता] और उनकी आज्ञा प्राप्त कर के [बारसविहेसु तवोकम्मेसु] बारह प्रकार के तपों में से [अण्णयरं ओरालं कल्लाणं] किसी भी उदार, कल्याणमय [सिवं धण्णं मंगलं] शिवस्वरूप, धन्य, मांगलिक [सस्सिरीगं महानुभावं] सश्रीक महाप्रभावजनक, [कसाय पंकपक्खालगं] कषायरूपी कीचड को प्रक्षालन करनेवाले [कम्ममलविसोहगं] कर्म मल की विशुद्धि करनेवाले [तवोकम्मं] तप को [उवसंपज्जित्ताणं] ग्रहण करके [विहरित्तए कप्पइ] विचरण करना कल्पता है। तथा [असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा साइमं वा]

अशन, पान, खाद्य एवं स्वाद्य को [पडिगाहित्तए वा आहारित्तए वा] ग्रहण करना या उपभोग करना कल्पता है। तथा [उच्चारं वा पासवणं वा] उच्चार–प्रस्त्रवण–मल-मूत्र का [परिठावित्तए वा] परित्याग करना [सज्झायं वा करित्तए] तथा स्वाध्याय करना [ठाणं वा ठावित्तए] कायोत्सर्ग करना [धम्मजागरियं वा जागरित्तए] अथवा धर्म–जागरण करना [अन्नयरं तहप्पगारं किंचि वि कज्जजायं करित्तए] अथवा उस प्रकार के अन्य ओर भी कोइ कार्य बडों की आज्ञा लेकर करना [कप्पइ] कल्पता है ॥३८॥

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा सयं पत्तं लेहित्तए ॥३९॥

शब्दार्थ–[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वी को [सयं पत्तं लेहित्तए] स्वतः अपने हाथ से पत्रलेखन करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥३९॥

मूलम्–नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा नवं अणुप्पण्णं अहिगरणं उप्पाइत्तए, पोराणं खामियं विउसामियं अहिकरणं पुणो उईरित्तए ॥४०॥

अनुत्पन्नाधिकरणोत्पादन निषेधः यथारात्निक क्षमापनकल्पः

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वी को [नवं अणुप्पण्णं] नया अनुत्पन्न [अहिगरणं] कलह को [उप्पाइत्तए] उत्पन्न करना तथा [पोराणं खामियं] जिसके लिए क्षमापणा की जा चुकी हो [विउसमियं] और जो शांत हो चुका हो [अहिगरणं पुणो उईरित्तए] उसकी उदीरणा करना [नो कप्पइ] नहीं कल्पता ॥४०॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा अहारायणियाए खमित्तए वा खमावित्तए वा ॥४१॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वी को [अहारायणियाए] यथा रात्निक—अर्थात् बडे छोटे के क्रम से [खमित्तए वा खमावित्तए वा] खमत खामणा करना [कप्पइ] कल्पता है ॥४१॥

मूलम्—कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं उवसमसारं खु सामण्णंति कट्टु परोप्परं अहिगरणं उवसमित्तए वा उवसमावित्तए वा, खमित्तए वा खमावित्तए

वा। जो उवसमइ सो आराहगो। जो णं नो उवसमइ सो नो आराहओ॥४२॥

शब्दार्थ—[निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वा] साधु और साध्वी को [उवसमसारं खु सामण्णंति कट्टु] उपशम–कषायों की मन्दता ही साधुत्व का सार है यह जानकर [परोप्परं अहिगरणं] परस्पर के कलह को [उवसमित्तए वा उवसमावित्तए वा] शांत करना अथवा शान्त कराना चाहिये। [खमित्तए वा खमावित्तए वा] क्षमा देना या क्षमा याचना करना [कप्पइ] कल्पता है। [जो उवसमइ सो आराहगो] जो उपशान्त करता है वह आराधक है। [जो णं नो उवसमइ सो नो आराहगो] जो उपशांत नहीं करता वह आराधक नहीं होता ॥४२॥

मूलम्–इच्चेइयं थेरकप्पं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं जहासम्मं काएण फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आराहित्ता आणाए अनुपालित्ता निग्गंथो वा निग्गंथी वा अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं, अत्थे-

गइए दुच्चे भवग्गहणेणं अत्थेगइए तच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ परिनिव्वाइ सव्वदुक्खाणमंतं करेइ सत्तट्ठभवग्गहणाइं पुण नाइक्कमइ, सासओ सिद्धो हवइ ॥४३॥

शब्दार्थ—[इच्चेइयं] इस [थेरकप्पं] स्थविरकल्प को [अहासुत्तं] सूत्र के अनुसार [अहाकप्पं] कल्प के अनुसार [अहामग्गं] मार्ग के अनुसार [अहातच्चं] तत्त्व के अनुसार [जहासम्मं] समभाव पूर्वक [काएण फासित्ता] शरीर से स्पर्श करके [पालित्ता] पालन करके [सोहित्ता] शोधन करके [तीरित्ता] पार करके [किट्टित्ता] कीर्तन करके [आराहित्ता] आराधन करके [आणाए अनुपालित्ता] आज्ञा का पालन करके [निग्गंथो वा निग्गंथीओ वा] साधु और साध्वी [अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं] कितनेक उसी भव में [अत्थेगइए दुच्चेणं भवग्गहणेणं] कितनेक दूसरे भव में [अत्थेगइए तच्चेणं भवग्गहणेणं] कितनेक तीसरे भव में [सिज्झइ] सिद्ध होते हैं [बुज्झइ] बुद्ध होते हैं

[मुच्चइ] मुक्त होते हैं [परिनिव्वाइ] परिनिर्वाण को प्राप्त करते हैं [सव्वदुक्खाणमंतं-करेइ] और सब दुःखों का अंत करते हैं। [सत्तट्ठभवग्गहणाइं पुण नाइक्कमइ] सात-आठ भवों का उल्लंघन तो करते ही नहीं है और [सासओ सिद्धो हवइ] शाश्वत सिद्ध हो जाते हैं ॥४३॥

आयारो कप्पो समत्तो

नयसारादि २७ भव कथा

(मालिनीछंद)

मंगलाचरणम्

भवजलहिनिमज्जज्जीवरक्खेगदक्खं ।
वयणहिमकरंसुक्खित्तहिद्धंतकक्खं ॥
सुरमणुयमुणीहिं निच्चवंदिज्जमाणं ।

सयलगुणनिहाणं णोमिहं वद्धमाणं॥१॥

शब्दार्थ—[भवजलहि] संसार-समुद्र में [निमज्ज] डूबते हुए [ज्जीवरक्खेगदक्खं] जीवों की रक्षा करने में असाधारण रूप से समर्थ [वयणहिमकरंसुक्खित्तहिद्धंतकक्खं] अपने मुखरूपी चन्द्रमा से भव्य जीवों के हृदय में रहे हुए अन्धकार को नाश करनेवाले [सुरमणुयमुणीहिं] देव मानव और मुनियों द्वारा [निच्चवंदिज्जमाणं] नित्यवन्दनीय [सयलगुणनिहाणं] सकल गुणों के निधान [णोमि हं वद्धमाणं] ऐसे श्री वर्द्धमान भगवान को मैं वन्दन करता हूँ ।

(वंशस्थ—वृतम्)

समत्थपावाडवियादवानलं ।
विसालमाणंदपलासिकंदलं
तहा समेसिं सुहसंपएधणं ।

समत्थकम्मिंधणचंडपावगं ॥२॥

शब्दार्थ—भगवत्-चरित्र का माहात्म्य [समत्थपावाडवियादवानलं] समस्त पाप रूपी अटवी के लिए दावानल के समान [विसालमाणंदपलासिकंदं] विशाल-अर्थात् उदात्त भावों से परिपूर्ण, आनन्दरूपी वृक्ष के मूल [तहा समेसिं सुहसंपएधणं] समस्त सुखसम्पत्ति की वृद्धि करने वाले (समत्थकम्मिंधणचंडपावगं] समस्त कर्म रूपी इन्धन के लिए अग्नि के समान ॥२॥

अभिट्ठचिंतामणिवप्पपूरगं।
विमुत्तिमग्गेगमहासहायगं ॥
पगाढमिच्छत्तमहंधनासगं।
तहा कसायाइमलावहारगं ॥३॥

शब्दार्थ—[अभिट्ठचिंतामणिवप्पपूरगं] चिन्तामणि रत्न की तरह सब मनोवांछित की पूर्ति करनेवाले [विमुत्तिमग्गेगमहासहायगं] विमुक्ति मार्ग के महान् सहायक [पगाढमिच्छत्तमहंधनासगं] प्रगाढ मिथ्यात्वरूपी महान् अन्धकार को नाश करनेवाले [तहा कसायाइमलावहारगं] तथा कषायरूपी मल को दूर करनेवाले ॥३॥

विंवड्ढमाणं सुहझाणमंतरे ।
महापहुस्स त्तिसलासुयस्स ॥
महाडवीमज्झउ उत्थियं परं ।
वए चरित्तं णयसारजम्मजं ॥४॥

शब्दार्थ—[विवड्ढमाणं सुहझाणमंतरे] अंतःकरण में प्रशस्त ध्यान की वृद्धि करनेवाले [महापहुस्स त्तिसलासुयस्स] महाप्रभु त्रिशलानन्दन के [महाडवीमज्झउ उत्थियं परं] महा अटवी से प्रारंभ होनेवाले [चरित्तं नयसारजम्मजं] नयसार के भव से प्रारंभ

होनेवाले चरित्र का [वए] वर्णन करता हूं ॥४॥

((दोधकवृत्तम्)

नयसारभवे चरिमो य जिणो।
सुलभीअ जिणोइयतत्तमओ ॥
णयसारभवा पभिइं पहियं।
चरियं रययामि तईयमहं ॥५॥

शब्दार्थ—[नयसारभवे चरिमो य जिणो] अन्तिम तीर्थंकर ने नयसार भव में [सुलभीअ जिणोइयतत्तमओ] जिनेन्द्र भगवान द्वारा कथित तत्व—सम्यक्त्व की प्राप्ति की थी। अतः [णयसारभवापभिइं पहियं] नयसार के भव से आरंभ करके ही प्रख्यात-प्रसिद्ध [चरियं रययामि तईयमहं] उनके चरित्र की मैं रचना करता हूं ॥५॥

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंचणमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं ॥

शब्दार्थ—अरिहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो। और लोक में विद्यमान समस्त साधुओं को नमस्कार हो। [एसो पंचणमुक्कारो] यह पंच नमस्कार [सव्वपावप्पणासणो] समस्त पापों को नाश करनेवाला है। [मंगलाणं च सव्वेसिं] समस्त मंगलों में [पढमं हवइ मंगलं] यह प्रधान मंगल है।

मूलम्–दसासुयक्खंधस्स सत्तमज्झयणे भिक्खूणं दुवालसपडिमा वण्णिया। पडिमासमत्तणंतरं वरिसाकालो समाजाइ, तं जावइउं मुणीहिं निवासजोग्गं

खेत्तं अन्नेसणिज्जं, उचियं खेत्तं पाविय संपुण्णो चाउम्मासिओ वरिसाकालो मुणिजणेहिं तत्थेव जावणिज्जो।

शब्दार्थ—[दसासुयक्खंधस्स] दशाश्रुतस्कन्ध के [सत्तमज्झयणे] सातवें अध्ययन में [भिक्खूणं] भिक्षुओं को [दुवालसपडिमा] द्वादश प्रतिमाओं का [वण्णिया] वर्णन किया गया है। [पडिमासमत्तणंतरं] प्रतिमाओं की समाप्ति के बाद [वरिसाकालो] वर्षाकाल [समाजाइ] आ जाता है। [तं जावइउं] उसे व्यतीत करने के लिये [मुणीहिं] मुनियों को [निवासजोग्गं] निवास योग्य [खेत्तं] क्षेत्र का [अन्नेसणिज्जं] अन्वेषण करना (खोजना) चाहिए। [उचियं] उचित [खेत्तं] क्षेत्र को [पाविय] प्राप्त कर [संपुण्णो चाउम्मासिओ] सम्पूर्ण चातुर्मासिक [वरिसाकालो] वर्षाकाल [मुणिजणेहिं] मुनिजनों को [तत्थेव] वहीं पर [जावणिज्जो] व्यतीत करना चाहिये।

मूलम्–तत्थ वरिसाकाले चाउम्मासियादिवसाओ एगमासवीसइरत्ति-

समणंतरं सुक्कपंचमीए संवच्छरीपव्वो समाराहणिज्जो हवइ। जओ णं सत्तरिराइंदियसमणंतरं वासावासो समत्तिमेइ। तत्थ एगं संवच्छरिपव्वदिणं, तद्दिणाओ पुव्वअव्ववहियाणि सत्तदिणाणि य मिलिऊण अट्ठदिणाणिं, एसो पज्जुसणापव्वो पवुच्चइ।

शब्दार्थ—[तत्थ] वहां [वरिसाकाले] वर्षाकाल में [चाउम्मासियदिवसाओ] चातुर्मास के प्रारंभिक दिन से [एगमासवीसइरत्तिसमणंतरं] एक मास और वीस रात्रि के व्यतीत होने पर [सुक्कपंचमीए] शुक्ल पंचमी के दिन [संवच्छरीपव्वो] संवत्सरी पर्व की [समाराहणिज्जो हवइ] आराधना करनी चाहिये। [जओ णं] उसके बाद [सत्तरिराइंदियसमणंतरं] सत्तर (७०) रात्रि–दिवस के व्यतीत होने पर [वासावासो समत्तिमेइ] वर्षावास समाप्त हो जाता है। [तत्थ एगं संवच्छरीपव्वदिणं] एक दिन संवत्सरी पर्व का [तद्दिणाओ पुव्वअव्ववहियाणि] और उससे अव्यवहित पहले के, [सत्तदिणाणि य

मिलिऊण] सात दिन मिलाकर [अट्ठदिणाणि] आठ दिन होते हैं। [एसो पज्जुसणापव्वो पवुच्चइ] यही पर्युषणापर्व कहलाता है।

मूलम्—एएसु अट्ठसु पज्जुसणापव्वदिणेसु मुणिणो अंतगडदसंगं वाययंति भगवओ सिरिवद्धमाणसामिस्स चरित्तं च सावयंति इच्चेवं पुव्वेण सत्तमज्झयणेण सह अस्स संबंधो ॥३॥

शब्दार्थ—[एएसु अट्ठसु पज्जुसणापव्वदिणेसु] इस पर्युषणा पर्व के आठ दिनों में [मुणिणो अंतगडदसंगं] मुनि अंतकृद्दशाङ्ग का [वाययंति] वाचन करते हैं और [भगवओ सिरिवद्धमाणसामिस्स] भगवान श्री वर्द्धमानस्वामी का [चरित्तं च सावयंति] चरित्र सुनाते हैं। [इच्चेवं] इस प्रकार [पुव्वेण सत्तमज्झयणेण सह अस्स संबंधो] पूर्वोक्त सातवें अध्ययन के साथ इस आठवें अध्ययन का सम्बन्ध है।

मूलम्—इह पज्जुसणाभिहाणे अट्ठमे अज्झयणे समणस्स भगवओ महा-

वीरस्स हत्थुत्तराहिं संजायं चवणाइपंचगं आघवियं पण्णवियं परूवियं दंसियं निदंसियं उवदंसियं। तस्स इमं सुत्तं—

शब्दार्थ—[इह पज्जुसणाभिहाणे] इस पर्युषणा नामक [अट्ठमे अज्झयणे] आठवें अध्ययन में [समणस्स भगवओ महावीरस्स] श्रमण भगवान महावीर के [हत्थुत्तराहिं संजायं] हस्तोत्तरा (उत्तरफाल्गुनी) में हुए [चवणाइपंचगं] च्यवनादि पांचों कल्याण [आघवियं] कथित हैं, [पण्णवियं] प्रज्ञापित हैं [परूवियं] प्ररूपित हैं [दंसियं] दर्शित हैं [निदंसियं] निदर्शित हैं [उवदंसियं] उपदर्शित हैं [तस्स इमं सुत्तं] उसका यह सूत्र है—

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स पंच हत्थुत्तरा होत्था तं जहा—हत्थुत्तराहिं चुए, चइत्ता गब्भं वक्कंते। हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए। हत्थुत्तराहिं जाए। हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता अगा-

राओ अणगारियं पव्वइए। हत्थुत्तराहिं अणंते अणुत्तरे णिव्वाघाए णिरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवलवरणाणदंसणे समुप्पण्णे। साइणा परिनिव्वुए भगवं जाव भुज्जो भुज्जो उवदंसेइ–त्तिबेमि ॥१॥

शब्दार्थ—[तेणं कालेणं] उस काल [तेणं समएणं] उस समय में [समणस्स भगवओ महावीरस्स] श्रमण भगवान महावीर के [पंच हत्थुत्तरा होत्था] पांच कल्याण उत्तराफाल्गुनी में हुए। [तं जहा] वे इस प्रकार हैं–[हत्थुत्तराहिं चुए] हस्तोत्तरा में भगवान देवलोक से चवित हुए और [चइत्ता गब्भं वक्कंते] चवकर के गर्भ में प्रवेश किया। २ [हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए] उत्तराफाल्गुनी में एक गर्भ से दूसरे गर्भ में संहरण हुआ। ३ [हत्थुत्तराहिं जाए] उत्तराफाल्गुनी में जन्मे ४ [हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता] उत्तराफाल्गुनी में मुण्डित होकर [अगाराओ अणगारियं पव्वइए] गृहस्थ से अनगार बने। ५ [हत्थुत्तराहिं अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए] उत्तराफाल्गुनी में अणंत

अणुत्तर निर्व्याघात [निरावरणे] निरावरण–आवरणरहित [कसिणे] सम्पूर्ण [पडिपुण्णे] प्रतिपूर्ण [केवलवरणाणदंसणे] श्रेष्ठ केवलज्ञान और दर्शन [समुप्पण्णे] उत्पन्न हुआ। [साइणा] स्वाति नक्षत्र में [परिनिव्वुए भगवं] भगवान परिनिर्वाण को प्राप्त हुए [जाव भुज्जो भुज्जो उवदंसेइ] यावत् बार बार गौतमस्वामीने यह दिखलाया है। [त्तिबेमि] ऐसा मैं कहता हूँ।

मूलम्–एएणं सुत्तेण भगवओ सिरिवद्धमाणसामिस्स सव्वं णिरवसेसं कसिणं पडिपुण्णं चरित्तं विण्णेयं तं जहा–१ पढमाहिं हत्थुत्तराहिं देवलोगाओ गब्भावासागमणं गब्भपालणाइयं २ बीयाहिं हत्थुत्तराहिं इंदकारियगब्भसंहरणाइयं। ३ तइयाहिं हत्थुत्तराहिं इंदाइकयजम्ममहिमा बालकीलाइयं ४ चउत्थीहिं हत्थुत्तराहिं दिक्खापज्जंतो जीवणवित्तंतो। ५ पंचमाहिं हत्थुत्तराहिं

सव्वसामण्णवित्तिकेवलणाणुप्पत्ति–विहारचरियाइयं 'साइणा परिणिव्वुए' अणेण केवलणाणाणंतरं मोक्खगमणपज्जंतं सव्वं चरित्तं वण्णेयव्वं होइ ॥

शब्दार्थ—[एएणं सुत्तेणं] इस सूत्र से [भगवओ सिरिवद्धमाणसामिस्स] भगवान श्री वर्द्धमान स्वामी का [सव्वं णिरवसेसं कसिणं पडिपुण्णं] समस्त निरवशेष, कृत्स्न–परिपूर्ण [चरित्तं विण्णेयं] चरित्र जान लेना चाहिये। [तं जहा] वह इस प्रकार है–
१ [पढमाहिं हत्थुत्तराहिं] प्रथम हस्तोत्तरा-उत्तराफाल्गुनी में [देवलोगाओ गब्भावासागमणं] देवलोक से गर्भावास में आगमन और [गब्भपालणाइयं] गर्भ का पालन पोषण आदि। २ [बीयाहिं हत्थुत्तराहिं] दूसरी हस्तोत्तरा में [इंदकारियगब्भसंहरणाइयं] इन्द्र द्वारा करवाया हुआ गर्भ संहरण आदि ३ [तइयाहिं हत्थुत्तराहिं] तीसरी हस्तोत्तरा में [इंदाइकयजम्ममहिमा बालकीलाइयं] इन्द्रकृत जन्ममहोत्सव तथा बालक्रीडा आदि ४ [चउत्थीहिं हत्थुत्तराहिं] चौथी हस्तोत्तरा में [दिक्खापज्जंतो जीवणवित्तंतो] दीक्षा पर्यन्त का

जीवनवृत्तान्त ५ [पंचमाहिं हत्थुत्तराहिं] पाँचवीं हस्तोत्तरा में [सव्वसामण्णविच्ति] समस्त दीक्षा पर्याय का वर्णन तथा [केवलणाणुप्पत्ति] केवलज्ञान की उत्पत्ति [विहारचरियाइयं] और विहार चर्या आदि। [साइणा परिणिव्वुए] स्वाति नक्षत्र में मोक्ष में पधारे [अणेण केवलणाणाणंतरं] इससे केवलज्ञान के अनन्तर [मोक्खगमणपज्जंतं सव्वंचरित्तं] मोक्ष गमनतक का समस्त चरित्र [वण्णेयव्वं होइ] वर्णित हो जाता है।

मूलम्–एएण संखेवओ भगवओ सिरिवद्धमाणसामिस्स सव्वं जीवणचरियं वण्णियं, तत्थ भगवं वीरो तित्थयरो त्ति तस्स तित्थयर नाम गोत्तकम्मबंधणनिबंधण–चरित्ताचित्तिय–भवभवंतरा–णेगविहकहाऽवि कम्मवेचित्तप्पदंसगत्ताए सद्धाधणाणं सद्धादीणं दुरंतसंसारकंतारंतरमुत्तितीमूणमवस्समंतोमलपक्खालणत्थं सवणगोयरयं उवणेयत्ति णिरवहि–करुणावरुणा–लयस्स

भगवओ संमत्तमुत्ति सोवाणाइ चरित्तावली वित्थरेण णिरूविज्जइ ॥३॥

शब्दार्थ—[एएण संखेवओ] इस पूर्वोक्त कथन से [भगवओ सिरिवद्धमाणसामिस्स] भगवान श्री वर्द्धमान स्वामी के [सव्वं जीवणचरियं वण्णियं] समस्त जीवनचरित्र का संक्षेप से वर्णन हो जाता है [तत्थ भगवं वीरो तित्थयरोत्ति] भगवान महावीर तीर्थंकर थे [तत्थ तित्थयरनामगोत्तकम्म]—भगवानने तीर्थंकर नाम गोत्र—कर्म का [वंधन निबंधनचरित्तचित्तिय] बन्ध किस कारण से किया और किस प्रकार [भवभवंतराणेगविहकहाऽवि] भव भवान्तर में भ्रमण किया इस वृत्तांत से सम्बंधित [कम्मवेचित्तप्पदंसगत्ताए] अनेक प्रकार की कथाएँ कर्म की विचित्रता को प्रदर्शित करनेवाली है। अतः [दुरंतसंसारकंतारंतरमुत्तितीसूण] कठिनाई से पार पाने योग्य संसार रूपी कान्तार-अटवी से पार पाने की इच्छा रखनेवाले [सद्धाधणाणं सद्धादीणं] श्रद्धा ही धन है ऐसे श्रावक आदि को [अवस्सं अंतोमलपक्खालणट्ठं] अवश्य ही आन्तरिक मल के

प्रक्षालन के लिए [सवणगोयरयं] उन कथाओं का श्रवण [उवणेयत्ति] करना चाहिये। इसी कारण से [णिरवहि—करुणावरुणालयस्स] असीम करुणा के सागर [भगवओ संमत्त-मुत्तिसोवाणाइ] भगवान के सम्यक्त्व प्राप्ति का तथा मुक्ति के सोपान पर आरूढ होने का [चरित्तावली वित्थरेण निरूविज्जइ] वृत्तान्त—चरित्र विस्तार से निरूपण किया जाता है ॥३॥

मूलम्—अत्थि णं मज्झजंबूदीवे दीवे नररयणगेहपच्छिममहाविदेहदिप्पम्मि महावप्पम्मि नामं विजए भूविजयवेजयंती जयंतीनामं नयरी, तत्थ णं पबलभुयबलखवियविपक्खकक्खो जोहणदक्खो णियवीरियरक्खो णमियदेवो सिरिवासुदेवोव्व महाविहवो अन्नत्थभिहाणो सत्तुमद्दणो भूधणो भुवं सासइ। तप्परिपालिज्जमाणे पुहवीपइट्ठाभिहाणे पट्टणे सामिसेवासारो णयसारो णामं कोट्टवालो णिवसइ। सो य परावगारपरदोसाओ विसाओ विव परम्मुहो, दप्पणोव्व परगुण-

गहणुम्मुहो विवेगिजणवडिंसो, हंसो नीरेहिंतो खीरमिव विविच्चिय दोसेहिंतो गुणं चिणीअ। सो य एगया कयाइ वणावणविहीए नरनाहनिदेसमक्केसं सिरंसि धारेमाणो सावहाणो पहियबलं संबलं गहिय लसंतसहेज्जुक्करिसेहिं कइवएहिं पुरिसेहिं बलियबलिवद्दजोडियरहमारुहिय गहणवणमोगाहीअ ॥४॥

शब्दार्थ–[अत्थि णं मज्झजंबुद्दीवे दीवे] मध्य जम्बूद्वीप नामक द्वीप में [नररयणगेह] नररत्नों के घर समान [पच्छिमममहाविदेहदिप्पम्मि] पश्चिम महाविदेह क्षेत्र को प्रकाशित करनेवाले [महावप्पम्मि नामं विजए] महावप्रनामक विजय में [भूविजयवेजयंती] इस पृथ्वी की विजय वैजयन्ती–जयपताका के समान [जयंती नामं णयरी] जयन्ती नामक नगरी है। [तत्थ णं] उस नगरी में [पबलभुयबलखवियविपक्खवकक्खो] प्रबल बाहुबल से शत्रुओं के समूह को नष्ट करनेवाला [जोहणदक्खो] शूरों में श्रेष्ठ [णियवीरियरक्खो] अपने ही पराक्रम से रक्षित, [णमियदेवो] विरोधी राजाओं को नम्र

बनानेवाला [सिरिवासुदेवोव्व] श्री वासुदेव के समान [महाविहवो] महान वैभववाला [अन्नत्थभिहाणो] यथार्थ नामवाला [सत्तुमद्दणो भूधणो भुवं सासेइ] शत्रुमर्दन नामका राजा पृथ्वी पर शासन करता था। [तप्परिपालिज्जमाणे] उस राजा द्वारा शासित [पुहवीपइट्ठाभिहाणे पट्टणे] पृथ्वीप्रतिष्ठित नामक नगर में [सामिसेवासारो] स्वामी की सेवा में तत्पर [णयसारो णामं कोट्टवालो] नयसार नामका कोटवाल [णिवसइ] रहता था। [सो य] वह [परावगारपरदोसाओ विसाओ विव परम्मुहो] विष की तरह दूसरे के अपकार और दोष दर्शन से विमुख रहता था। [दप्पणोव्व परगुणगहणुम्मुहो] दर्पण जिस प्रकार प्रतिबिम्ब को ग्रहण करता है उसी तरह दूसरे के गुणों को ग्रहण करने में उन्मुख था। [विवेगिजणवडिंसो] विवेकी जनों में उत्तम [हंसो नीरेहिंतो खीरमिव विविच्चिय दोसेहिंतो गुणं चिणीअ] जैसे हंस नीर से क्षीर को पृथक् करलेता है उसी प्रकार वह भी दोषों में से भी गुण ग्रहण करता था।

[सो य एगया कयाइ] वह नयसार एक बार किसी समय [वणावणविहीए नरनाह निद्देसमक्केसं] राजा के आदेशको बिना किसी क्लेश के [सिरंसि धारेमाणे] शिरोधार्य करके [सावहाणो] वनभूमि की रक्षा करने के लिये सावधान हो [पहियबलं संबलं गहिय] पथिकों का सहायक पाथेय [भाता] लेकर [लसंतसहेज्जुक्करिसेहिं कइवएहिं पुरिसेहिं] तथा सहायता करनेवाले कुछ पुरुषों को साथ लेकर [बलियबलिवद्दजोडियरहमारुहिय] बलवान् बैल जिस में जुते हुए थे ऐसे रथ पर सवार हो कर [गहणवणमोगाहीअ] गहन वन में जा पहुँचा ॥४॥

मूलम्–तए णं सघणं वणं निरिक्खमाणस्स बुभुक्खमाणस्स तस्स मज्झण्हो आसी तया पचंडमत्तंडो पज्जलियानलोव्व महया तेएण तवइ, तंसि समयंसि सो वणगहणभूयले इओ–तओ परिभमंतो भग्गवसाओ तवं तवंतं, तवपहाहिं अनलं व जलंतं, जलहिमिव गंभीरं, पुक्खरपलासमिव निल्लेवं, सोममिव

सोम्मलेस्सं सव्वंसहमिव सव्वसहं, भक्खरमिव तवतेयसा भासमाणं, झाणानलेणं कम्मिंधणं दहमाणं, कच्छवमिव गुत्तिंदियं, फलिहरयणमिव विसुद्धं, णिरासवं, निम्मलं मंडवायारसुसीयलतरुतले विरायमाणं, सुहज्झाणमग्गं, मुणिंजणग्गं, जिणवरधम्मसोवत्थियं सदोरगमुहवत्थियं चंदो चंदियमिव मुहे धरंतं, कम्मचयं रित्तं करंतं, सारदिंदुपसन्नवयणधवलवसणं णाणविहाणं, अकिंचणं कंचण मुणिं दंसीअ ॥५॥

शब्दार्थ—[तए णं] उसके वाद [सघणं वणं] सघन वन का [निरिक्खमाणस्स] निरीक्षण करते हुए [बुभुक्खमाणस्स तस्स मज्झण्हो आसी] दो पहर हो गया। नयसार को भूख लग रही थी। [तया पचंडमत्तंडो पज्जलियानलोव्व महया तेएणं तवइ] प्रज्वलित आग की तरह प्रचण्ड सूर्य तेज से तप रहा था। [तंसि समयंसि] ऐसे समय

में [सो वणगहणभूयले इओ-तओ परिभमंतो] वनभूमि में इधर उधर परिभ्रमण करते हुए [भग्गवसाओ] भाग्यवशात् नयसार को एक मुनि दिखाइ दिये, वे मुनि कैसे थे वह बताते हैं-[तवं तवंतं] वे तप तप रहे थे [तवपहाहि अनलं व जलंतं] तपस्या की दीप्ति से अग्नि के समान देदीप्यमान थे। [जलहिमिव गंभीरं] समुद्र की तरह गम्भीर थे। [पुक्खरपलासमिव निल्लेवं] पुष्कर पलाश की तरह निर्लेप थे [सोममिव सोम्मलेसं] चन्द्रमा की तरह सौम्यकांतिवाले थे। [सव्वंसहमिव सव्वसहं] पृथ्वी की तरह सहनशील थे। [भक्खरमिव तवतेयसा भासमाणं] सूर्य के समान तप के तेज से भासमान थे। [झाणानलेण कम्मिंधणं दहमाणं] ध्यानरूपी अग्नि से कर्म-इंधन को जला रहे थे। [कच्छवमिव गुत्तिंदियं] कछुवे की तरह इन्द्रियों का गोपन करनेवाले थे। [फलिहरयणमिव विसुद्धं] स्फटिक रत्न के समान विशुद्ध थे। [निरासवं] आश्रवरहित थे। [निम्मलं] मलरहित थे। [मंडवायारसुसीयलतरुतले विरायमाणं] मण्डप के आकार

के शीतल वृक्ष के नीचे विराजमान थे। [सुहज्झाणमग्गं] शुभ ध्यान में मग्न थे। [मुणिजणग्गं] मुनिजनों में उत्तम थे। [जिणवरधम्मसोवत्थियं] जिनधर्म को सूचित करनेवाली [सदोरगमुहवत्थियं] डोरासहितमुखवस्त्रिका को [चंदो चंदियमिव मुहे धरंतं] मुख पर इस प्रकार धारण किये हुए थे जैसे चन्द्रमा चान्दनी को धारण करता है। [कम्मचयं रित्तं करंतं] आत्मा से कर्मसंचय को दूर करने में तत्पर [सारदिंदुपसन्नवयणं] एवं शरद् चन्द्रमा के समान प्रसन्नमुख थे [धवलवसनं] शुभ्रवस्त्रधारी [णाणनिहाणं] ज्ञान से निधान होते हुए भी [अकिंचणं कंचण मुणिं दंसीअ] अपरिग्रही थे ॥५॥

मूलम्—तए णं सो उदारो नयसारो भूनत्थमत्थयाइपंचंगो णायवंदणाविहि-पसंगो गुणगणधरं तं मुणिवरं उदारभावेण वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता तद्दंसणाणंदतुंदिलो आगमेसिभद्दंकुरकंदिलो सयं जम्मजीवियं सहलं मण्णमाणो परमभत्तिभावुल्लसियमणसा तं पज्जुवासमाणो तत्थ अदूरसामंते समुवविट्ठो॥६॥

शब्दार्थ—[तए णं] उस प्रकार के मुनिराज को देखने के बाद [उदारो णायवंदणविहिपसंगो] उदार वन्दना की विधि को जाननेवाले [भूनत्थमत्थयाइपंचंगो] तथा जिसने अपने पांचों अंगों को पृथ्वी पर टिका दिया है ऐसे [नयसारो] नयसारने [गुणगणधरं] गुणसमूह को धारण करनेवाले [तं मुणिवरं] उस मुनिवर को [उदारभावेणं] उदार भाव से [वंदइ] वन्दना की [नमंसइ] नमस्कार किया [वंदित्ता नमंसित्ता] वन्दना नमस्कार करके [आगमेसिभद्दंकुरकंदिलो] भावी भव में होनेवाले परमकल्याण के अंकुर के कन्दवाला वह [तद्दंसणाणंदतुंदिलो] उनके दर्शन के आनन्द से पुष्ट हो गया [सयं जम्मजीवियं सहलं मण्णमाणो] अपने जन्म और जीवन को सफल मानता हुआ [परमभत्तिभावुल्लसियमणसा] परमभक्ति भाव के कारण उल्लासयुक्त चित्तवाला [तं पज्जुवासमाणो] वह उनकी—मुनिराज की पर्युपासना करता हुआ [तत्थ अदूरसामंते समुवविट्ठो] वहां न बहुत दूर न बहुत पास—उचित स्थान पर बैठ गया ॥६॥

मूलम्–तए णं तं छज्जीवनिकायनाहो तवसंजमसनाहो मुणिणाहो अपुव्व-वच्छल्लेणं महुमज्जियमुद्दियामाहुरिमहरंतीए वाणीए पुग्गलपरियट्टं दसोयाहरणाइयं च दरिसंतो नरजम्मस्स दुल्लहत्तं देवगुरुधम्मसरूवं च विविहप्पयारेण उवएसीअ। साहुणो पगईए चेव परुद्धारपरायणा हवंति, तप्पभावेण तस्स हिययम्मि चिरकालट्ठियप्पयारो मिच्छत्तगाढंधयारो सूरोदयाओ लोयंधयारो विव सत्तरं पणट्ठो। तए णं उदारतरभावधारो सो नयसारो महव्वयसणाहं तं मुणिणाहं विविहवक्कवइगरेण थुणिय सट्ठाणं गओ। तओ सो नयसारो भोयणवेलाए गोयरियट्ठं विणिग्गयं तं मुणिवरं विण्णवेइ–भो परोवयारधुरंधरा मुणिवरा! मम वयणं ओहारिय सयचरणकमलरयपायाओ ममंगणं पवित्तं करेह॥७॥

शब्दार्थ—[तए णं] उसके बाद [छज्जीवनिकायनाहो] षड्जीवनिकायों के नाथ

[तवसंजमसनाहो] तप और संयम से सहित [मुणिणाहो] मुनिनाथ ने [अपुव्ववच्छल्लेणं] अपूर्व वात्सल्य भाव से [महुमज्जियमुद्दियामाहुरिमहरंतीए वाणीए] मधुमार्जित-शहद-मिश्रित द्राक्षा कीमधुरता से भी अधिक मधुरवाणी से [पुग्गलपरियट्टं] पुद्गलपरावर्तन के स्वरूप को [दसोयाहरणाइयं च] और मानव जन्म की दुर्लभता को बतानेवाले दस दृष्टान्तों से [दरिसंतो नरजम्मस्स दुल्लहत्तं] नरजन्म की दुर्लभता को दिखाते हुए [देवगुरुधम्मसरूवं च] देव गुरु और धर्म के स्वरूप का [विविहप्पयारेण उवएसीअ] विविध प्रकार से उपदेश किया। [साहुणो पगईए चेव परुद्धारपरायणा हवंति] साधुजन स्वभाव से ही पर के उद्धार में तत्पर होते हैं [तप्पभावेण तस्स हिययम्मि चिरकालट्ठियप्पयारो] अतएव उनके उपदेश के प्रभाव से नयसार के हृदय में चिरकाल से रहा हुआ [मिच्छत्तगाढंधयारो] मिथ्यात्वरूपी सघन अंधकार [सूरोदयाओ लोयंधयारो व्विव सत्तरं पणट्ठो] शीघ्र नष्ट हो गया, जैसे सूर्य के उदय से लोक का अंधकार नष्ट हो जाता है [तए णं

उयारतरभावधारो सो नयसारो] तदनंतर उदारतर परिणामों को धारण करनेवाला वह नयसार [महव्वयसनाहं तं मुणिणाहं] महाव्रतों से सहित उन मुनिराज की [विविहवक्कवइगरेण] विविध प्रकार की वाक्यावली से [थुणिय] स्तुति करके [सट्ठाणं गओ] अपने स्थान पर चला गया [तओ सो नयसारो भोयणवेलाए] उसके बाद उस नयसारने भोजन के समय [गोयरियट्ठं विनिग्गयं] गोचरी के लिए निकले हुए [तं मुणिवरं विन्नवेइ] उन मुनिराज से प्रार्थना की कि [भो परोवयारधुरंधरा मुणिवरा] हे परोपकार की धुरा को धारण करनेवाले मुनिवर! [मम वयणं ओहारिय] मेरे वचन पर ध्यान देकर [सयचरणकमलरयपायाओ] अपने चरण कमलों की धूल से [ममंगणं पवित्तं करेह] मेरे अंगन को पवित्र कीजिये ॥७॥

मूलम्—तए णं भत्तिभावसमाकिट्ठो मुनिवरिट्ठो उक्किट्ठभावसारस्स नयसारस्स आवासमणुपविट्ठो। तए णं पसन्नहिययो सविनयो नयसारो एवं वयासी—

भिक्षार्थे-नयसारस्य मुनिं प्रति-प्रार्थना

भदंत ! जहा सुतरू पुप्फं विणेव फलिज्जा, मरुम्मि अणब्भा जलवुट्ठी दीणसयणे सुवण्णवुट्ठी भवेज्जा, तहा अज्ज मज्झंगणे भगवओ चरणकमलरयपाओ जाओ। भगवओ दंसणेण अहं पीऊसपाणेण विव पीणिओऽम्हि। एवं वियत्तभत्तिधारो नयसारो मुनिवरं थुइय फासुएसणिज्जेहिं विउलेहिं असणपाणखाइमसाइमेहिं चउव्विहेहिं आहारेहिं पडिलाभेइ। तए णं सो नयसारो वणाओ नयरं गंतुमणं तं मुणिमणुगमिय मग्गं दंसिय वंदीअ। तए णं सो मुणिदंसणामियपिवासो पत्तसम्मत्तसारो नयसारो एवं वयासी—हे मुणिणाहा!

गंतव्वं जइ णाम निच्छयमहो! गंतासि केयं तरा,
दुत्ताणेव पयाणि चिट्ठउ भवं पासामि जावं मुहं।
संसारे घडियापणालविगलव्वारोवमे जीविए,

को जाणाइ पुणो तए सह ममं होज्जा न वा संगमो ॥१॥

तओ जाव मुणिवरो लोयणपहपहिओ आसी ताव नयसारो अणिमेसदिट्ठीए तं विलोगमाणो तत्थेव ठिओ। मुणिणाहे दिट्ठिपहाईए तओ नियट्टिय नयसारो विण्णायसंसारासारो धणजोव्वणजीवणाणि अंजलिजलाणि विव अत्थिराणि चंचलाणि पडिक्खणं खीयमाणाणि ओहारिय, सयलसुहनिहाणं सम्मत्तप्पहाणं मुणिनाहवयणसंदिट्ठं विसिट्ठं जिणोवइट्ठं धम्मं हिययम्मि धारेमाणो सहयरे अवि पडिबोहिय सयं ठाणं पडिगमीअ ॥८॥

शब्दार्थ—[तए णं] तब [भत्तिभावसमाकिट्ठो] भक्तिभाव से खिंचे हुए [मुणिवरिट्ठो] वह मुनिश्रेष्ठ [उक्किट्ठभावसारस्स] उत्कृष्ट भाववाले [नयसारस्स] नयसार के [आवासमणुपविट्ठो] निवासस्थान में प्रविष्ट हुए [तए णं] तब [पसन्नहिययो] प्रसन्नचित्त [सवि-

णयो नयसारो] और विनयी नयसारने [एवं वयासी] ऐसा कहा [भदंत !] भगवन् ! [जहा सुतरू] जैसे कल्पवृक्ष [पुप्फविणेव फलिज्जा] फूल आये विना अकस्मात् फल हो जाय [मरुम्मि] मरुभूमि में [अनब्भा जलवुट्ठी] मेघों के बिना ही जलवृष्टि हो जाय [दीणसयणे] और गरीब के घरमें [सुवण्णवुट्ठी य भवेज्जा] सोना बरस पडे [तहा] उसी प्रकार [अज्ज] आज [मज्झंगणे] मेरे आंगन में [भगवओ] आपके [चरणकमलरयपाओ जाओ] चरण कमलों की रज गिरी है। [भगवओ] आपके [दंसणेण अहं] दर्शन से मैं [पीऊसपाणेण वित्र] अमृतपान की तरह [पीणिओऽम्हि] प्रसन्न हूँ।

[एवं] इस प्रकार [वियत्तभत्तिधारो] प्रकट भक्ति को धारण करनेवाले [नयसारो] नयसारने [मुणिवर] मुनिवर की [थुइय] स्तुति करके [फासुएसणिज्जेहिं] उन्हें प्रासुक एवं एषणीय [विउलेहिं] विपुल [असणपाणखाइमसाइमेहिं] अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य रूप [चउव्विहेहिं आहारेहिं] चार प्रकार के आहार से [पडिलाभेइ] प्रतिलाभित किया

[तए णं] तदनंतर [सो नयसारो] वह नयसार [वणाओ] वन से [नयरं गंतुमणं] नगर की ओर जाने की इच्छा से [तं मुणिमणुगमिय] आगे चलनेवाले मुनि के पीछे पीछे [मग्गं दंसिय] चलते हुए वह मुनि को रास्ता बताकर [वंदीअ] वन्दना की। [तए णं] उसके बाद [सो मुणिदंसणामियपिवासो] वह मुनिदर्शनरूप अमृत का पिपासु [पत्त-समत्तसारो] एवं सम्यक्त्व का सार प्राप्त करनेवाले [नयसारो एवं वयासी] नयसारने ऐसा कहा–हे मुनिनाथ!

[गंतव्वं जइ नाम निच्छियमहो] यदि जाना निश्चित ही कर लिया है तो [गंतासि] जायेंगे ही [केयंतरा] पर जल्दी क्या है? [दुत्ताणेव पयाणि चिट्ठउ भवं] दो तीन कदम–अर्थात् थोडी देर आप खडे रहिये ताकि [पासामि जाव मुहं] मैं आपका मुख देखूँ [संसारे घडियापणालविगलव्वारोवमे जीविए] संसार में जीवन अरहट से बहनेवाले पानी के समान चंचल है अतः [को जाणइ?] कौन जाने? [पुणो तए सह ममं संगमो

होज्जा न वा] आपका पुनः समागम होगा या नहीं।

[तओ जाव मुणिवरो लोयणपहपहिओ आसी] जब तक विहार करते हुए मुनिराज आंखों से दिखाइ देते रहें [ताव नयसारो] तब तक नयसार उन्हें [अणिमेसदिट्ठीए तं विलोयमाणो] अनिमेष दृष्टि से देखता हुआ [तत्थेव ठिओ] वहीं खडा रहा। [मुणिणाहे दिट्ठिपहाईए] मुनिनाथ के दृष्टि से अदृष्ट होने पर वह [तओ नियट्टिअ] पीछे लौटा। [नयसारो विण्णायसंसारासारो] नयसारने संसार के असारस्वरूप को समझ लिया था। [धनजोव्वणजीवणाणि] तथा धन यौवन तथा जीवन को [अंजलिजलाणि विव अत्थिराणि] अंजलि में लिये जल के समान अस्थिर तथा [चंचलाणि पडिक्खणं खीयमाणानि ओहारिय] चंचल तथा प्रतिक्षण क्षीयमान जानकर [सयलसुहनिहाणं समत्तप्पहाणं] सकल सुखों के निधान प्रधान सम्यक्त्व को [मुणिणाहवयणसंदिट्ठं विसिट्ठं] तथा मुनिराजद्वारा उपदिष्ट, विशिष्ट [जिणोवइट्ठं धम्मं हिययम्मि धारेमाणो] जिनोपदिष्ट धर्म को हृदय में

धारण करता हुआ [सहयरे अवि पडिबोहिय सयं ठाणं पडिगमीअ] अपने साथियों को भी प्रतिबोध देता हुआ अपने स्थान की ओर चला गया ॥८॥

मूलम्—तए णं सो नयसारो गएसु कइपएसु वरिसेसु विसुद्धज्झाणजल-विसोहियदुब्भावमलो सब्भावभावियप्पो मुणिकप्पो कालमासे कालं किच्चा उक्किट्ठभावभरियचेयसा मुणिणाहविसुद्धाहारपाणप्पदाणप्पभावेण बीए भवे सोहम्मे कप्पे पलिओवमट्ठिइयदेवत्ताए उववन्नो ॥९॥

शब्दार्थ—[तए णं] उसके बाद [सो नयसारो] वह नयसार [कइपएसु वरिसेसु गएसु] कतिपय वर्षों के बीत जाने पर [विसुद्धज्झाणजलविसोहियदुब्भावमलो] विशुद्ध ध्यान रूपी जल से दुर्भावरूपी मल को धो डालनेवाला [सब्भावभावियप्पो] सद्भावनाओं से भावित आत्मावाला [मुणिकप्पो] तथा साधु की तरह जीवन बितानेवाला [सो नयसारो] वह नयसार [कालमासे कालं किच्चा] कालके अवसर में काल करके [उक्कि-

नयसारस्य मरणानन्तरं सौधर्मकल्पे देवत्वेनोत्पत्तिः

ट्ठभावभरियचेयसा] उत्कृष्ट भावना से परिपूर्ण चित्त से [मुणिणाहविसुद्धाहारपाणप्पदाणप्पभावेण] मुनिराज को विशुद्ध आहारपानी के दान के प्रभाव से [बीए भवे] द्वितीय भव में [सोहम्मे कप्पे] सौधर्म कल्प में [पलिओवमट्ठिइय] पल्योपम की स्थितिवाले [देवत्ताए उववन्नो] देव के रूप में उत्पन्न हुआ ॥९॥

मूलम्—तए णं सो नयसारजीवो सोहम्माओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं चयं चइत्ता तइए भवे विणीयाए णयरीए आइतित्थयरस्स उसभदेवपहुस्स नत्तुओ भरहचक्कवट्टिस्स पुत्तो जाओ। अम्मापिऊहिं तस्स मरीइत्ति नामं कयं। सो य उम्मुक्कबालभावो जोव्वणगमणुप्पत्तो उसभपहुस्स मोहसंदोहमयप्पमायमज्जुम्मायुम्मूलणवयणामयरसं सवणपुडेहिं आविऊण संजायसंवेगनिव्वेओ विवेगालोगालोगियमोक्खपहो असारसंसारपरिब्भमणानिवट्टणाइ दक्खं दिक्खं गहिअ संजममग्गे विहरइ ॥१०॥

तृतीयभवे नयसारजीवस्य विनीतानगर्यां मरीचित्वेन उत्पत्तिः

शब्दार्थ—[तए णं] उसके बाद [नयसारजीवो] नयसार का जीव [सोहम्माओ देवलोगाओ] सौधर्म देवलोक से [आउक्खएणं] आयु का क्षय करके, [भवक्खएणं] भव का क्षय करके, [ठिइक्खएणं] स्थिति का क्षय करके [चयं चइत्ता] देवशरीर को त्याग करके [तइए भवे] तीसरे भव में [विणीयाए नयरीए] विनीता नामक नगरी में [आइतित्थयरस्स उसभदेवपहुस्स] प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव प्रभुका [नत्तुओ] पौत्र [भरहचक्कवट्टिस्स पुत्तो जाओ] और भरतचक्रवर्ती का पुत्र हुआ [अम्मापिऊहिं तस्स मरीइत्ति नामं कयं] मातापिताने उसका नाम मरिची रक्खा [सो य उम्मुक्कबाल-भावो] वह बाल्यावस्था का अतिक्रमण करके [जोव्वणगमणुप्पत्तो] युवावस्था को प्राप्त हुआ [उसभपहुस्स मोहसंदोहमयप्पमायमज्जुम्मायुम्मूलणवयणामयरसं] भगवान ऋषभदेव के वचनामृतरूपरस का जो मोह समूह, मद एवं प्रमादरूपी मदिरा के प्रभाव को नष्ट करनेवाला है। [सवणपुडेहिं आविऊण] अपने श्रोत्रपुटो—कानों से पान करके

तृतीयभवे नयसार-जीवस्य विनीता-नगर्यां मरीचित्वेन उत्पत्तिः

[संजायसंवेगनिव्वेओ] संवेग और निर्वेद से युक्त हो गया। [विवेगालोगालोगिय-मोक्खपहो] उसने अपने विवेकरूपी आलोक (प्रकाश) से मोक्ष मार्ग को देख लिया [असारसंसारपरिब्भमणनिवट्टणाइदुक्खं] अतएव वह असार संसार में परिभ्रमण का निरोध करने में समर्थ ऐसी [दिक्खं गहिय संजममग्गे विहरइ] दीक्षा को ग्रहण करके संयममार्ग में विचरने लगा ॥१०॥

मूलम्—एगया संजममग्गे विहरमाणो सो असुहकम्मोदएण सीउण्हाइ-परीसहेहि पराजिओ संजमे सीयमाणो संजमं चइऊण तिदंडी तावसो जाओ। इमो य पाणितलगयं चिंतामणिरयणं परिच्चज्ज कायं गहीअ, मुत्ताहारमव-हाय गुंजाहारं धरीअ, सुरतरुमवहाय करीरं सेवीअ, हत्थिं विक्किय गद्दभं किणीअ, णंदणवणमवहेलिय एरंडवणमासाईअ। किं बहुणा? इमो भवब्भमणोवायं अन्नेसीअ। सच्चं, अण्णायवत्थुमाहप्पो जणो करयलगयमुत्तमं वत्थुं तणं विव

तिरक्करेइ एवं सो चारित्तरयणमवहाय तिदंडित्तं गहीअ। तहवि सो हिययट्ठिय-जिणोवइट्ठधम्मसंकारो चारित्तपासायखंतिमुत्तिप्पभिइसोवाणाओ खलिओवि उसभदेवगुणग्गामगाणरस्सिमवलंबमाणो नो सव्वहा मिच्छत्तभूयलपएसे पडिओ। जओ उच्छलंतदयामयधारो सो भवियजणे जिणोवइट्ठं चरित्तधम्मं मुहंमुहं, उवएसिय पहुसमीवे पव्वज्जट्ठं पेसेइ। सच्चं जणाणं हिययओ पुव्व-संकारो किमियरागोव्व पाएण न नियट्टइ ॥११॥

शब्दार्थ—[एगया] किसी समय [संजममग्गे विहरमाणो] संयम मार्ग में विचरता हुआ [सो असुहकम्मोदएण] वह मरीचि अशुभ कर्मोदय से [सीउण्हाइपरीसहेहिं] शीत-उष्ण आदि परीषहों से [पराजिओ] पराजित हो कर [संजमे सीयमाणो] संयम से घब-राकर [संजमं चइऊण] संयम का त्याग करके [तिदण्डी तावसो जाओ] त्रिदण्डी

तापस हो गया। [इमो य पाणितलगयं] उसने हथेली में आये [चिंतामणिरयणं परिच्चज्ज] चिन्तामणिरत्न को त्याग कर [कायं गहीअ] काच ग्रहण किया। [मुक्ताहारमवहाय] मुक्ताहार को छोडकर [गुंजाहारं धरीअ] गुंजा–चिरमियों के हार को अंगीकार किया [सुरतरुमवहायकरीरं सेवीअ] कल्पवृक्ष को छोडकर करीर का सेवन किया। [हत्थिं विक्किय गद्दभं किणीय] हाथी को बेचकर गदहा खरीदा [नंदणवणमवहेलिय एरंडवणमासाईअ] और नन्दनवन की अवहेलना करके एरण्डवन को प्राप्त किया। [किं बहुणा?] अधिक क्या कहा जाय, [इमो भवब्भमणोवायं अन्नेसीअ] उसने भवभ्रमण का उपाय खोज-निकाला [सच्चं] सच है, [अण्णायवत्थुमाहप्पो जणो करयलगयमुत्तमं वत्थुं] जो जिस वस्तु की महत्ता को नहीं जानता, वह हथेली में आई हुई उस उत्तम वस्तु को भी [तणं विव तिरक्करेइ] तृण की तरह त्याग देता है। [एवं सो चारित्तरयणमवहाय] इस प्रकार उसने चारित्ररत्न को त्याग करके [तिदंडित्तं गहीअ] त्रिदण्डीपनको स्वीकार किया।

[तहवि] तथापि [सो] वह [हिययट्ठियजिणोवइट्ठधम्मसंकारो] उसके हृदय में तीर्थंकर द्वारा उपदिष्ट धर्म के संस्कार थे [चारित्तपासायखंतिमुत्तिप्पभिइसोवाणाओ खलिओवि] वह चारित्ररूपी महल की क्षमा, मुक्ति (निर्लोभता) आदि सोपानों से स्खलित हो चुका था [उसभदेवगुणग्गामगाणरस्सिमवलंबमाणो] फिर भी ऋषभदेव के गुणगण के गान की रस्सी का सहारा ले रहा था। क्योंकि वह [नो सव्वहा मिच्छत्त भूयलपएसे पडिओ] सर्वथा मिथ्यात्व के धरातल पर नहीं पहुँचा था। [जओ उच्छलंत-दयामयधारो] उसके हृदय से अनुकम्पारूपी अमृत की धारा उछल रही थी। [सो भवियजणे] वह भव्यजनों को [जिणोवइट्ठं चरित्तधम्मं] जिनप्ररूपित चारित्र धर्म का [मुहुंमुहुं उवएसिय] बार बार उपदेश देकर [पहुसमीवे पव्वज्जट्ठं पेसेइ] प्रव्रज्या के लिए भगवान के पास भेजता था। [सच्चं] सच है, [जणाणं हिययओ पुव्वसंकारो] प्रायः मनुष्यों के हृदय से पूर्व का संस्कार [किमियरागोव्व पाएण न नियट्टइ] कृमिका राग की तरह दूर नहीं होता ॥११॥

मूलम्-तए णं एगया कयाइं जगसंतावकलावनिकंदणो नाहिणंदनो पढू विणीयाए नयरीए समोसरिओ। तत्थ समोसरणे विरायमाणो उसभजिणो देवा-सुरतिरियमणुयपरिसाए सयसयभासापरिणामिणीए गिराए धम्मं कहेइ। धम्म-देसणासमणंतरं भगवं पज्जुवासमाणो भरहचक्कवट्टी तं पुच्छइ-भदंत! वट्टइ कोवि देवाणुप्पियाणं समोसरणे एयारिसो जीवो जो अणागयकाले बलदेवो वासुदेवो चक्कवट्टी तित्थयरो वा भविस्सइत्ति।

तओ भयवं एवं वयासी-भरहा! नत्थि एत्थ समोसरणे एयारिसो कोवि जीवो। समोसरणाओ बहिं तुज्झ पुत्तो तिदंडिवेसधारी मरीई चिट्ठइ। इमो कालक्कमेण एत्थ भरहे पोयणपुरे तिविट्ठू नामं पढमो वासुदेवो, अवरविदेहे मूयाए नयरीए पियमित्तनामे चक्कवट्टी, एत्थ भरहखित्ते महावीरनामो चरिमो

तित्थयरो य भविस्सइ। एवं सोच्चा भरहचक्कवट्टी बहिट्ठियं मरीइमुवागमिय एव वयासी—भो तिदंडीमरीई! तुज्झ एरिसं वेसं वंदिउं मे न कप्पइ। तुवं पुण अणागयकाले इमाए ओसप्पिणीए एयस्सिं भरहे वासे पोयणपुरे तिविट्ठू नाम पढमो वासुदेवो, अवरविदेहे मूयाए नयरीए पियमित्तनामे चक्कवट्टी, एत्थ भरहे महावीरनामे अंतिमतित्थयरो य भविस्ससि। अओ तित्थयरत्तणेण भाविणं तुमं वंदामि। नियपिडणो भरहचक्किस्स एवं वयणसवणेणं मरीइं पावभारो कारो कुलमओ आविसीय। कुलाइकडो मओ समयमासाइय सज्जो विहङ्गमो नीडमिव जणमाविसइत्ति मरीइ तक्खणे अवारसंसारकंतारपरिब्भमणकारगं सयलसुहतरुमूलुम्मूलगं माणहालाहलं पिबीअ। तए णं सो हरिसवसाविसप्पमाणहियओ नच्चंतो एवं वयासी—अहो! केरिसं मज्झ उत्तमं कुलं, जंसि महिड्ढिएहिं

महावीरस्य मरीचिनामक स्तृतीय भव निरूपणम्

महज्जुइएहिं महप्पभावेहिं महब्बलेहिं महाजसेहिं चउसट्ठिइंदेहिं अन्नेहिवि देवेहिं य देवीहिं य वंदिओ तेलुक्कनाहो धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी उसभजिणो मम पितामहो अत्थि १। चक्करयणप्पहाणो एगछत्तं ससागरं वसुहं सासमाणो नवनिहिसमिद्धकोसो कयसयलजणतोसो छक्खंडाहिवई नरसीहो भरहो चक्कवट्टी मम पिया अत्थि। २ अहं पुण सत्तुमद्दणो सीहगज्जणो अइबलो महाबलो पियदंसणा विमलकुलसम्भूओ अजिओ रायउलतिलओ सिरिवच्छलंछणो तिखण्डाहिवई पुरिसुत्तमो पुरीससीहो पोयणपुरे तिविट्ठु णामं पढमो वासुदेवो भविस्सामि ३। अवरविदेहे मूयाए नयरीए तेयसा पचंडमत्तंडपयावो पुव्वकडतवप्पभावो निविट्ठसंचियसुहो नरवसहो विउलविस्सुयजसो सारयण हत्थणियमहुरगम्भीरणिद्धघोसो सम्पत्तसयलजणमणतोसो पिउसरीसो पियमित्तो णामं

चक्कवट्टी भविस्सामि ४। किं बहुणा इमाए चेव ओसप्पिणीए पुरससीहो पुरिसवरपुण्डरीओ विमलकुलसंभवो महासत्तो सायरवरगम्भीरो चंदाओवि निम्मलयरो सुज्जाओवि अहियपयासयरो नामेण महावीरो चरिमो तित्थयरो भविस्सामि ५। मम पियामहो तित्थयरेसु पढमो, मम ताओ चक्कवट्टीसु पढमो जाओ, अहं पुण वासुदेवेसु पढमो भविस्सामि। इमाए चेव ओसप्पिणीए पुणो अवरविदेहे मूयाए नयरीए छक्खंडाहिवई जगप्पिओ पियमित्तो नामं चक्कवट्टी भविस्सामि। इमाए चउवीसीए पुणो चउवीससंखापूरगो चरिमो तित्थयरो भविस्सामित्ति। भुयाप्फालणपुव्वं उच्चणायं कुणमाणो पुणो पुणो णच्चंतो सो मरीई नीयं गोयं उवज्जिणेइ। हेओवाएयविवेगविगलो जणो तत्तं न निच्चिणेइ, अभिमाणविसमविसजालकवलियम्मि मणतरुम्मि णाणपल्लवो णो

परोहेइ। जीवाणं मणगगणंगणे मणागंपि माणमेहे समुग्गए समाणे हियय-भूमीए तण्हा विसलया सज्जो परोहेइ। सा हिमराई राइवराइमिव नाणाइ गुण-सेणिं पणिहंति। मइरेव दुच्चज्जमोहसंदोहजणणी दुप्पारसंसारवित्थारिणी य हवइ। एवमभिमाणमस्सिओ मरीई विस्सरीयविवेगो वागुरिओ जाले विहंगमामिव दुक्खभवे सयमप्पाणं पाडीय। इच्चेव मणत्थणिहाणं विसालकुलजम्मणमयं आसयंतो सो मरीई तया नीयगोयं बंधीय॥१२॥

शब्दार्थ—[तए णं एगया] एक बार किसी समय [जगसंतावकलावनिकंदणो] संसार के संतापसमूह को नष्ट करनेवाले [नाभिदंसणो पहू] नाभिनन्दन (ऋषभदेव) प्रभु [विणीयाए नयरीए समोसरीओ] विनीतानगरी में पधारे। [तत्थ समोसरणे] वहां समवसरण में [विरायमाणो उसभजिणो] विराजमान ऋषभजिनने, [देवासुरतिरियमणुय-

परिसाए] देवों, असुरों, मनुष्यों, और तिर्यंचों की परिषद् में [सयसयभासापरिणामिणीए] श्रोताओं की अपनी-अपनी भाषा में परिणत होनेवाली [गिराए धम्मं कहेह] वाणी में धर्मदेशना दी। [धम्मदेसणासमणंतरं] धर्मदेशना के पश्चात् [भगवं पज्जुवासमाणो] भगवान् की सेवा करते हुए [भरहचक्कवट्टी तं पुच्छेइ] भरतचक्रवर्तीने भगवान् से प्रश्न किया-[भदंत! वट्टइ कोवि देवाणुप्पियाणं समोसरणे] हे भगवन्! देवानुप्रिय के-आपके-समवसरण में [एयारिसो जीवो जो अणागयकाले] ऐसा कोई जीव है जो भविष्य काल में [बलदेवो, वासुदेवो चक्कवट्टी तित्थयरो वा भविस्सइत्ति] बलदेव, वासुदेव चक्रवर्ती या तीर्थंकर होगा? [तओ भयवं एवं वयासी] तब भगवान् इस प्रकार बोले-[भरहा! नत्थि एत्थ समोसरणे एयारिसो कोवि जीवो] भरत! इस समवसरण में ऐसा कोई जीव नहीं है। [समोसरणाओ बहिं तुज्झ पुत्तो] हां, समवसरण से बाहर तुम्हारा पुत्र [तिदंडी वेसधारी मरीई चिट्ठइ] त्रिदण्डधारी मरीचि है। [इमो कालक्कमेण]

वह कालक्रम से [एत्थ भरहे] इस भारतवर्ष में [पोयणपुरे तिविट्ठु नामं पढमो वासुदेवो] पोतनपुर नगर में त्रिपृष्ठ नामक प्रथम वासुदेव होगा [अवरविदेहे मूयाए नयरीए] पश्चिम महाविदेह की मूकानगरी में [पियमित्त नामे चक्कवट्टी] प्रियमित्र नामका चक्रवर्ती होगा। [एत्थ भरहखित्ते महावीर नामो चरिमो तित्थयरो य भविस्सइ] और फिर इस भरतक्षेत्र में महावीरनामक अन्तिम तीर्थंकर होगा।

[एवं सोच्चा] इस प्रकार सुनकर [भरहचक्कवट्टी] भरत चक्रवर्ती [बहिट्ठियं मरीइमुवागमिय एवं वयासी] बाहरस्थित मरीचि के समीप जाकर इस प्रकार कहने लगे—[भो तिदंडी मरीई!] हे त्रिदण्डधारी मरीचि! [तुज्झ एरिसं वेसं वंदिउं मे न कप्पइ] तेरे इस वेश को वन्दन करना मुझे नहीं कल्पता [तुवं पुण अणागयकाले] तुम आगामीकाल में [इमाए ओसप्पिणीए] इसी अवसर्पिणी में, [एयस्सिं भरहे वासे] इसी भारतवर्ष में [पोयणपुरे] पोतनपुर में [तिविट्ठू नाम पढमो वासुदेवो] त्रिपृष्ठ नामक प्रथम

वासुदेव होओगे, [अवरविदेहे मूयाए नयरीए] अपरविदेह में मूका नामक नगरी म [पियमित्तनामे चक्कवट्टी] प्रियमित्र नामक चक्रवर्ती होओगे, [एत्थ भरहे महावीरनामे] इसी भरतक्षेत्र में महावीर नामक [अंतिमतित्थयरो य भविस्ससि] अन्तिम तीर्थंकर भी होओगे। [अओ तित्थयरत्तणेण भाविणं तुमं वंदामि] इसलिये भावी तीथकर के रूप में मैं तुम्हें वन्दना करता हूं। [नियपिउणो भरहचक्किस्स] अपने पिता भरतचक्रवर्ती के [एवं वयणसवणेणं] इस प्रकार के वचन सुनने से [मरीइं पावभारो फारो] मरीचि के अन्तःकरण में पापों का समूहरूप अतिशय [कुलमओ आविसीय] कुलमद प्रवेश कर गया, [कुलाइकडो मओ] कुल आदि मद [समयमासाइय सज्जो] अवसर पाकर मनुष्य में उसी प्रकार प्रवेश कर लेता है। [विहङ्गमो नीडमिव जणमाविसइत्ति] जैसे पक्षी घोसले में प्रवेश कर लेता है। इसी कारण [मरीई तक्खणे] मरीची ने उसी समय [अपार-संसारकंतारपरिब्भमणकारगं] अपार संसाररूपी कांतार में परिभ्रमण करानेवाले [सय-

महावीरस्य मरीचि नामक स्तृतीय भव निरूपणम्

लसुहतरुमूलुम्मूलगं] और समस्त सुखरूप वृक्ष के मूल को उखाडने वाले [मानहलाहलं पिबीअ] मानरूपी हलाहल विष का पान किया [तए णं सो हरिसवस] उसका हृदय हर्ष के वश होकर [विसप्पमाणहियओ] विकसित हो गया। [नच्चंतो एवं वयासी] वह नाचता हुआ इस प्रकार कहने लगा [अहो ! केरिसं मज्झ उत्तमं कुलं] अहो ! मेरा कुल कैसा उत्तम है, [जंसि महिड्ढिएहिं] जिसमें महती ऋद्धिवाले [महज्जुइएहिं] महतीद्युतिवाले [महप्पभावेहिं] महान् प्रभाववाले [महब्बलेहिं] महान् बलवाले [महाजसेहिं] और महानयशवाले [चउसट्ठिइंदेहिं] चौसठ इन्द्रों के द्वारा [अन्नेहि वि देवेहिं य देवीहिं य] तथा अन्यदेवों और देवियों द्वारा [वंदिओ] वन्दित [तेलुक्कनाहो धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी] तीनलोक के नाथ धर्मरूपी श्रेष्ठ चातुरन्तचक्र के प्रवर्तक [उसभजिणो मम पियामहो अत्थि] ऋषभजिन मेरे पितामह [दादा] है ! [चक्करयणप्पहाणो] और जिस कुल में प्रधान चक्ररत्नवाले [एगछत्तं ससागरं वसुहं सासमाणो] समुद्रसहित पृथिवी

पर एकछत्र शासन करनेवाले, [नवनिहिसमिद्धकोसो] नौ निधियों से समृद्धकोषवाले [कयसयलजणतासो] सबको सन्तोष देनेवाले [छक्खंडाहिवई] षट्खंड के अधिपति [नरसीहो] नरों में सिंह के समान [भरहो चक्कवट्टी मम पिया अत्थि] भरतचक्रवर्त्ती मेरे पिता हैं ! [अहं पुण] और मैं [सत्तुमद्दणो] शत्रुओं का मर्दन करनेवाला [सीहगज्जणो] सिंह के समान गर्जना करनेवाला [अइबलो] अतिबलवान् [महाबलो] महाबलवान् [पियदंसणो] प्रियदर्शन [विमलकुलसम्भूओ] विमलकुल में उत्पन्न [अजियो] अजेय [रायउलतिलओ] राजकुल में श्रेष्ठ [सिरिवच्छलंछणो] श्रीवत्स के चिह्नवाले [तिखंडाहिवई] तीन खंड के स्वामी [पुरिसुत्तमो] पुरुषों में उत्तम [पुरिससीहो] पुरुषों में सिंह [पोयणपुरे] पोतनपुर में [तिविट्ठू नामं पढमो वासुदेवो भविस्सामि] त्रिपृष्ठ नामक प्रथम वासुदेव होऊँगा। [अवरविदेहे] और फिर मैं पश्चिम महाविदेह में [मूयाए नयरीए] मूका नामक नगरी में [तेयसा पचंडमत्तंडपयावो] प्रखर सूर्य के

समान प्रतापवाला [पुव्वकडतवप्पभावो] पूर्वकृत तप के प्रभाव से सम्पन्न [निविट्ठसंचियसुहो] पूर्वसंचित सुखों को प्राप्त करनेवाला [नरवसहो] नरों में वृषभ के समान [विउलविस्सुयजसो] विपुल और विख्यात कीर्तिवाला [सारयण हत्थणियमहुरगम्भीरणिद्धघोसो] शरदृऋतु के मेघों के समान मधुर गंभीर और स्निग्ध घोष [गर्जना] वाला, [संपत्तसयलजणमणतोसो] सब जनों को सन्तोष देनेवाला [पिउसरिसो पियमित्तो णामं चक्कवट्टी भविस्सामि] अपने पिता के समान प्रियमित्र नामक चक्रवर्ती होऊँगा ! [किं बहुणा] अधिक क्या कहूं, [इमाए चेव ओसप्पिणीए] इसी अवसर्पिणीकाल में [पुरिससीहो] पुरुषसिंह [पुरिसवरपुंडरीओ] पुरुषवरपुण्डरीक [विमलकुलसंभवो] निर्मलकुल में उत्पन्न [महासत्तो] महासत्वशाली [सायरवरगंभीरो] समुद्र के समान गम्भीर [चंदाओवि निम्मलयरो] चन्द्रमा से भी अधिक निर्मल [सुज्जाओविअहियपयासयरो] सूर्य से भी अधिक प्रकाश करनेवाले [नामेण महावीरो चरिमो तित्थयरो भविस्सामि] महा-

वीर नामक अन्तिम तीर्थंकर होऊँगा।

[मम पियामहो तित्थयरेसु पढमो] मेरे पितामह [दादा] तीर्थंकरों में प्रथम तीर्थंकर हैं। [मम ताओ चक्कवट्टीसुं पढमो जाओ] मेरे पिता चक्रवर्तियों में प्रथम चक्रवर्ती हैं। [अहं पुण वासुदेवेसु पढमो भविस्सामि] और मैं भी वासुदेवों में प्रथमवासुदेव होऊँगा। [इमाए चेव ओसप्पिणीए पुणो] मैं भरतक्षेत्र की अपेक्षा से इसी अवसर्पिणी में [अवरविदेहे मूयाए नयरीए] पश्चिम महाविदेह की मूका नगरी में [छखंडाहिवई] छखंड के स्वामी [जगप्पिओ पियमित्तो] जगत्प्रिय प्रियमित्र नामक [नामं चक्कवट्टी भविस्सामि] चक्रवर्ती होऊँगा। [इमाए चउवीसाए पुणो] मैं इसी चौवीसी में चउवीस संखा पूरगो] चौवीस की संख्या को पूरा करनेवाला [चरिमो तित्थयरो भविस्सामित्ति] अन्तिम तीर्थंकर होऊँगा। [भुयाप्फालणपुव्वं] इस प्रकार भुजाओं को फटकार–फटकार कर [उच्चाणायं कुणमाणो] जोर जोर से सिंहनाद करते हुए [पुणो पुणो

णच्चंतो] बार--बार नाचते हुए [सो मरीई नीयं गोयं उवनिज्जेइ] मरीचि ने नीच गोत्र का उपार्जन किया।

[हेओवाएय विवेगविगलो जणो] हेय और उपादेय के विवेक से हीन जन [तत्तं न निच्चिणेइ] तत्व का निश्चय नहीं कर सकता [अभिमाणविसमविसजालकवलियम्मि] अभिमानरूपी विषमविषरूपी ज्वालाओं से ग्रस्त [मणतरुम्मि णाणपल्लओ] मनरूपी वृक्ष में ज्ञान का पल्लव [णो परोहेइ] नहीं उगता। [जीवाणं मणगगणंगणे] जीवों के मनोगगनरूप आंगन में [मणागम्मि माणमेहे समुग्गए] तनिक से भी मान-मेघ का उदय [समाणे हिययभूमीए तण्हा] होता है तो हृदयभूमि में तृष्णा [विसलया सज्जो परोहेइ] की विषलता तत्काल उग आती है। [सा हिमराई राईवराइमिव णाणाइगुणसेणिं पणिहंति] वह तृष्णा, ज्ञान आदि गुणों के समूह को उसी प्रकार नष्ट कर देती जैसे तुषार (हिम) का समूह कमलों के समूह को नष्ट कर देता है।

महावीरस्य मरीचिनामक स्तृतीयभवनिरूपणम्

[मइरेव] मदिरा के समान [दुच्चज्जमोहसंदोहजणणी] दुस्त्यज मोह के समूह को उत्पन्न करती है [दुप्पारसंसारवित्थारिणी य हवइ] और अपारसंसार को बढाने वाली होती है।

[एवमभिमाणमस्सिओ] इस प्रकार अहंकार के वशीभूत और [विस्सरीयविवेगो मरीई] विवेक को भूलादेनेवाले मरीचिने [वागुरिओ जाले विहंगममिव दुक्खसवे भवे सय अप्पाणं पाडीअ] अपनी आत्मा को उसी प्रकार दुःखजनक संसार में फंसा लिया जैसे व्याध जाल में पक्षी को फसा लेता है। [इच्चेवमणत्थणिहाणं] इस प्रकार अनर्थों के भण्डार, [विसालकुलजम्मणमयं] विशाल कुल में जन्म लेने के मद का [आसयंतो] आश्रय लेकर [सो मरीई तया नीयगोयं बंधीय] उस मरीचिने नीचगोत्र का बन्ध कर लिया ॥१२॥

मूलम्—तए णं से मरीई उसभसामिम्मि मोक्खं गए समाणे भवियजणे पुणो पुणो पडिबोहिय पव्वज्जट्ठं मुणिसमीवे पेसेइ। तए णं एगया तस्स मरी-

इस्स सरीरे काससासाइया सोलस रोगायंका पाउब्भवित्था तेण गिलाणिमावण्णो सो मणम्मि चिंतेइ–जइ अहं वाहिमुत्तो भविस्सामि, तया कंपि एगं सिस्सं करिस्सामि जो मं परिचरिस्सइ ॥१३॥

शब्दार्थ—[तए णं से मरीई] उसके बाद वह मरीचि [उसभसामिम्मि मोक्खं गए समाणे] भगवान ऋषभस्वामी के मोक्ष जाने पर [भवियजणे पुणो पुणो पडिवोहिय] भव्यजनों को बार बार प्रतिबोध देकर [पव्वज्जट्ठं मुणिसमीवे पेसेइ] दीक्षा के लिए उन मुनियों के समीप भेजता रहा। [तए णं एगया] उसके बाद किसी समय [तस्स मरीइस्स सरीरे] उस मरीचि के शरीर में [काससासाइया] कास–(खांसी) श्वास आदि [सोलस रोगायंका पाउब्भवित्था] सोलह रोग रूप आतंग उत्पन्न हुए [तेण गिलाणिमावण्णो] इस कारण से ग्लानि को प्राप्त [सो मणम्मि चिंतेइ] मरीचिने मनमें विचार किया [जइ अहं वाहिमुत्तो भविस्सामि] अगर मैं व्याधिमुक्त हो जाउँगा [तया कंपि

एगं सिस्सं करिस्सामि] तो किसी भी एक को अपना शिष्य बना लूंगा [जो मं परिचरिस्सइ] जो मेरी शुश्रूषा करेगा ॥१३॥

मूलम्—एवं विचिंतमाणस्स तस्स अंतिए एगो धम्मकामी कविलनामो कुलपुत्तो समागओ। तं मरीई जिणधम्मं वण्णिय उवदेसीय। तं सोच्चा कविलो पुच्छिय—जइ जिणधम्मो सव्वुत्तमो, ताहे तं तुमं कम्हा नो समायरसि? तए णं मरीई एवं वयासी—कविला! आरहयं धम्मं पालिउं न सक्केमि कढिणो सो धम्मो ण तं मारिसा कायरा परिपालिउं सक्कंति। तए णं कविलो कहीय-किं तव मग्गे धम्मो नत्थि, जं तुमं मं जिणधम्मं उवदिससि? एएण पण्हेण मरीई कविलं जिणधम्मकामुयं मुणिय सिस्सलालसाए एवं वयासी—कविला! जहा जिणमग्गे धम्मो अत्थि, एवं मम मग्गेवि धम्मो अत्थि। एवं सोच्चा सो

मरीइस्स सिस्सो संजाओ। तए णं जिणमग्गेवि धम्मो अत्थि मम मग्गेवि धम्मो अत्थित्ति उस्सुत्तपरूवणस्स मिच्छाधम्मोवएसस्स य अणालोइओ अप्पडिक्कंतो य सो मरीई बहुलं संसारं उवज्जिणिय चउरासीसयसहस्सपुव्वाउयं परिपालिय अणसणेण कालमासे कालं किच्चा चउत्थे भवे पंचमदेवलोए दससागरोवमट्ठिइयदेवत्ताए उववन्नो ॥१४॥

शब्दार्थ—[एवं विचिंतमाणस्स] इस प्रकार विचार करते हुए [तस्स अंतिए एगो] उस मरीचि के समीप [धम्मकामी कविलनामो कुलपुत्तो समागओ] धर्म की अभिलाषा करनेवाला कपिल नामक एक कुलपुत्र आगया। [तं मरीई जिणधम्मं वण्णिय उवदेसीय] उस कपिल को मरीचि ने जिन प्ररूपित धर्म का वर्णन करके उपदेश दिया [तं सोच्चा कविलो पुच्छीय] मरीचि द्वारा उपदिष्ट जिनधर्म को सुनकर कपिल ने मरीचि से

पूछा-[जइ जिणधम्मो सव्वुत्तमो] यदि जिन धर्म सर्वोत्तम है [ताहे तं तुमं कम्हा नो समायरसि] तो तुम उस धर्म का आचरण क्यों नहीं करते ?

[तए णं मरीई एवं वयासी] मरीचि ने कपिल को उत्तर दिया [कविला ! आरहयं धम्मं पालिउं न सक्केमि] मैं अर्हत् धर्म का पालन नहीं कर सकता, [कढिणो सो धम्मो] क्योंकि उस धर्म का पालन करना कठिन है। [न तं मारिसा कायरा परिपालिउं सक्कंति] अतएव मेरे जैसे कायर जन उस धर्म का पालन करने के लिए समर्थ नहीं हैं। [तए णं कविलो कहीय] तब कपिल बोला-[किं तव मग्गे धम्मो नत्थि] क्या तुम्हारे मार्ग में धर्म नहीं है, [जं तुमं मं जिणधम्मं उवदिससि ?] जो तुम मुझे जिन धम का उपदेश देते हो ? [एएण पण्हेण मरीई कविलं जिणधम्मकामुयं मुणिय] कपिल के इस प्रश्न से मरीचि ने समझ लिया कि कपिल जिनधर्म का अभिलाषी है [सिस्सलालसाए एवं वयासी-अतएव वह शिष्य की लालसा से बोला-[कविला ! जहा जिणमग्गे

धम्मो अत्थि] हे कपिल ! जैसे जिनमार्ग में धर्म है [एवं मम मग्गेवि धम्मो अत्थि] वैसे मेरे मार्ग में भी धर्म है। [एवं सोच्चा सो मरीइस्स सिस्सो संजाओ] यह सुनकर कपिल मरीचि का शिष्य हो गया। [तए णं जिणमग्गेवि धम्मो अत्थि] मरीचि ने जिन मार्ग में भी धर्म है [मम मग्गेवि धम्मो अत्थि] और मेरे मार्ग में भी धर्म है, [त्ति उस्सुत्तपरूवणस्स] इस प्रकार उत्सूत्र प्ररूपणा करने से [मिच्छाधम्मोवएसस्स य] तथा धर्म के मिथ्या उपदेश की [अणालोइओ अप्पडिक्कंतो य सो] आलोचना प्रतिक्रमण न करने से [मरीई बहुलं संसारं उवज्जिणिय] उस मरीचि ने दीर्घ संसार उपार्जन किया। [चउरासीसयसहस्सपुव्वाउयं] वह चौराशी लाख पूर्व की आयु [परिपालिय] भोगकर [अणसणेण कालमासे कालं किच्चा] अनशनपूर्वक मृत्यु के अवसर पर काल करके [चउत्थे भवे पंचमदेवलोए] नयसार के भव से चौथे भव में पांचवें ब्रह्मलोक नामक स्वर्ग में [दससागरोवमट्ठिइयदेवत्ताए उववन्नो] दससागरोपम की स्थितिवाला देव हुआ ॥१४॥

मूलम्—तए णं सो देवो आउभवट्ठिइक्खएणं चयं चइत्ता पंचमे भवे धरणिमणिभूसणायमाणे कोल्लागसंनिवेसे कस्सइ बंभणस्स असीइलक्खपुव्वाउओ पुत्तो जाओ। तस्स य अम्मापिऊहिं कोसिउत्ति नामं कयं। सो य उम्मुक्कबालभावो जोव्वणगमणुप्पत्तो अईवबुद्धिमंतो परमचउरो बुद्धिबलेणं धुत्तविज्जाए बहुयं धणं समुवज्जीय। तए णं धुत्तविज्जाए अणालोइओ अप्पडिक्कंतो य सो कालमासे कालं किच्चा अणेगासु पसुपक्खिकीडपयंगाइजोणीसु भमं भमं अच्चंतदुक्खभायणं भवीअ। एए अणेगे भवा खुड्डगत्तणेण भगवओ सत्तवीसइभवेसु ण गणिया। एवमग्गे वि ॥१५॥

शब्दार्थ—[तए णं सो देवो] तदनन्तर वह देव [आउभवट्ठिइक्खएणं] आयु, भव, और स्थिति का क्षय होने से [चयं चइत्ता पंचमे भवे] देव शरीर का त्याग करके पांचवें

भव में [धरणिमणिभूसणायमाणे] पृथ्वी के रत्नमय आभूषण के समान [कोल्लागसंनिवेसे] कोल्लाग नामक सन्निवेश में [कस्सइ बंभणस्स] किसी ब्राह्मण का [असीइलक्खपुव्वाउओ] अस्सीलाख पूर्व की आयुवाला [पुत्तो जाओ] पुत्र हुआ। [तस्स य अम्मापिऊहिं] माता पिता ने उसका [कोसिउत्ति नामं कयं] कौशिक, इस प्रकार नाम रक्खा। [सो य उम्मुक्कबालभावो] उसकी बाल्यावस्था समाप्त हुइ। [जोव्वणगमणुप्पत्तो] युवा होने पर [अईव बुद्धिमंतो] वह अत्यन्त बुद्धिमान [परमचउरो] और बडा चतुर हो गया [बुद्धिबलेणं धुत्तविज्जाए] उसने अपने बुद्धिबल से तथा धूर्तविद्या से [बहुयं धणं समुवज्जीय] बहुत धन उपार्जन किया। [तए णं धुत्तविज्जाए] उसके बाद धूर्तविद्या की [अणालोइओ अप्पडिक्कंतो य] आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना ही [सो कालमासे कालं किच्चा] कालमास म काल करके [अणेगासु पसुपक्खिकीडपयंगाइजोणीसु] अनेक कीट पतंग आदि की योनियों में [भमं भमं] बार बार भ्रमण करके [अच्चंतदुक्खभायणं

भवीअ] अत्यन्त दुःख का भागी बना [एए अणेगे भवा]ये अनेक भव [खुड्डगत्तणेण] छोटे छोटे होने से [भगवओ सत्तावीसइभवेसु न गणिया] भगवान के सत्तावीस भवों में नहीं गिने गये हैं। [एवमग्गे वि] इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिये ॥१५॥

मूलम्—एवं अणेगजोणीसु भममाणो सो नयसारजीवो कस्सवि सुहकम्मस्स बलेणं पुणो छट्ठे भवे थाणाउरनयरे बंभणकुलम्मि दुसत्तइलक्खपुव्वाउओ पुप्फमित्तसम्मनामओ बंभणो जाओ। तत्थ णं जमनियमसंपन्नोजिणधम्मं अणुमोयमाणो मरिय सत्तमे भवे सोहम्मदेवलोए मज्झिमट्ठिइओ देवो जाओ ॥१६॥

शब्दार्थ—[एवं] इस प्रकार [अणेगजोणीसु] अनेक योनियों में [भममाणो] परिभ्रमण करता हुआ [सो नयसारजीवो] वह नयसार का जीव [कस्सवि सुहकम्मस्स बलेणं] किसी शुभ कर्म के बल से [पुणो छट्ठे भवे] पुनः छठे भव में [थाणाउरनयरे] स्थानपुर नगर में [बंभणकुलम्मि] ब्राह्मणकुल में [दुसत्तइलक्खपुव्वाउओ] बहत्तरलाख

की पूर्व आयुवाला [पुप्फमित्तसम्मनामओ] पुष्पमित्र शर्मा नामक [बंभणो जाओ] ब्राह्मण हुआ। [तत्थ णं जमनियमसंपन्नो] उस भव में यमनियमों से युक्त वह [जिणधम्मं अणुमोयमाणो] जिन धर्म की अनुमोदना करता हुआ [मरिय] मरकर [सत्तमे भवे] सातवें भवमें [सोहम्मदेवलोए] सौधर्म देवलोक में [मज्झिमट्ठिइओ] मध्यम स्थितिवाला [देवो जाओ] देव हुआ ॥१६॥

मूलम्—तए णं सो देवलोयाओ चुओ अट्ठमे भवे विचित्तसंनिवेसे चउसट्ठिलक्खपुव्वाउओ अग्गिजोइणामो माहणो जाओ। तत्थ णं सो तिदंडी परिव्वायगो होऊण अंते कालधम्मं पत्तो ॥१७॥

शब्दार्थ—[तए णं सो] इसके बाद वह [देवलोयाओ चुओ] नयसार का जीव देवलोक से च्युत होकर [अट्ठमे भवे] आठवें भव में [विचित्तसंनिवेसे] विचित्र नामक सन्निवेश में [चउसट्ठिलक्खपुव्वाउओ] चौसठ लाख पूर्व की आयुवाला [अग्गिजोइ-

णामो] अग्निज्योति नामक [माहणो जाओ] ब्राह्मण हुआ [तत्थ णं] उस भवमें [सो तिदंडी परिव्वायगो होऊण] वह त्रिदण्डी परिव्राजक होकर [अंते कालधम्मं पत्तो] अन्त में काल धर्म को प्राप्त हुआ ॥१७॥

मूलम्-नवमे भवे सो ईसाणलोगम्मि मज्झिमाउओ देवो जाओ ॥१८॥

शब्दार्थ—[नवमे भवे सो] नौवे भव में वह [ईसाणदेवलोगम्मि] नयसार का जीव ईशान देवलोक में [मज्झिमाउओ देवो जाओ] मध्यम आयुवाला देव हुआ ॥१८॥

मूलम्-तए णं सो दसमे भवे सुंदरे संनिवेसे अग्गिभूइ णामे माहणो छप्पन्नं पुव्वसयसहस्ससव्वाउओ तत्थ वि परिव्वायगो जाओ ॥१९॥

शब्दार्थ—[तए णं सो] ईशान देवलोक से चवकर वह [दसमे भवे] दशवें भव में [सुंदरे संनिवेसे] नयसार का जीव सुंदर सन्निवेश में [अग्गिभूइ णामे माहणो] अग्निभूति नामक ब्राह्मण हुआ [छप्पन्नं पुव्वसयसहस्ससव्वाउओ] वहां उसने छप्पन लाख पूर्व

की सर्वायु प्राप्त कर [तत्थ वि परिव्वायगो जाओ] वहां पर भी वह परिव्राजक बना ॥१९॥

मूलम्—तओ चुओ सो एगारसमे भवे सेयंवियाए नयरीए भरद्दाज—नामओ विप्पो जाओ। तत्थ वि तिदंडी होऊण चोयालीसलक्खपुव्वाउयं पालिय कालगओ समाणो बारसमे भवे महिंदाभिहे चउत्थे कप्पे मज्झिमट्ठिइओ देवो जाओ॥२०॥

शब्दार्थ—[तओ चुओ सो] सनत्कुमार देवलोक से च्यव कर नयसार का जीव [एगारसमे भवे] ग्यारहवें भव में [सेयंवियाए नयरीए] श्वेताम्बिका नगरी में [भरद्दाज—नामओ विप्पो जाओ] भारद्वाज—नामक ब्राह्मण हुआ। [तत्थ वि तिदंडी होऊण] उस जन्म में भी त्रिदण्डी होकर [चोयालीसलक्खपुव्वाउयं पालिअ] चवालीसलाख पूर्व की आयु को भोगकर [कालगओ समाणो] मृत्यु को प्राप्त होकर [बारसमे भवे] बारहवें भव में [महिंदाभिहे चउत्थे कप्पे] माहेन्द्रनामक चौथे कल्प में [मज्झिमट्ठिइओ देवो जाओ] मध्यम स्थितिवाला देव हुआ॥२०॥

मूलम्-तओ चुओ अणेगासु जोणीसु भमं भमं तेरसमे भवे रायगिहे-नयरे थावरो णामं विप्पो जाओ। तत्थ वि तिदंडी होऊण चउव्वीसइलक्खपुव्वाउयं पालइत्ता कालगओ चउद्दसमे भवे बंभलोए कप्पे मज्झिमट्ठिइओ देवो जाओ ॥२१॥

शब्दार्थ—[तओ चुओ] वहां से च्यवकर [अणेगासु जोणीसु भमं भमं] अनेक योनियों में बार बार भ्रमण करता हुआ [तेरसमे भवे] तेरहवें भव में [रायगिहे नयरे] राजगृह नगर में [थावरो नामं विप्पो जाओ] स्थावर—नामक विप्र हुआ। [तत्थ वि तिदंडी होऊण] वहां पर भी त्रिदण्डी होकर [चउव्वीसइलक्खपुव्वाउयं पालइत्ता] चौवीस लाख पूर्व की आयु को भोगकर [कालगओ] कालधर्म को प्राप्त हुआ [चउद्दसमे भवे] चौदहवें भव में [बंभलोए कप्पे] ब्रह्म लोक कल्प में [मज्झिमट्ठिइओ देवो जाओ] मध्यम स्थितिवाला देव हुआ॥२१॥

मूलम्—तओ चइत्ता बहुसु भवेसु भामं भामं पण्णरसमे भवे रायगिहे नयरे विस्सनंदिस्स रन्नो लहुभाउयस्स विसाहभूइजुवरायस्स धारिणीए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णो। माउपिऊहिं तस्स विस्सभूइत्ति नामं कयं। सो य माउपिऊणं आणंदवड्ढगो आसी। तए णं सो उम्मुक्कबालभावो जोव्वणगमणुपत्तो एगया अंतेउरवरगओ पुप्फकरंडए उज्जाणे सच्छंदं कीडइ। विस्सनंदिस्स रण्णो विसाहनंदी नामं पुत्तो आसी। जो य विसाहभूइस्स जुवरायपयप्पदाणाणंतरं समुप्पण्णो। तस्स माया तं विस्सभूइं जुवरायपुत्तं पुप्फकरंडएउज्जाणे सच्छंदं कीडमाणं पासिअ ईसाविद्धहियया कोवघरं पविट्ठा। राया तं पासाएइ, न सा पसन्ना हवइ, कहेइ य किं अम्हं रज्जेण वा? बलेण वा? जइ विसाहनंदी एवंविहे भोए न भुंजइ, जइ भवंते जीवमाणे वि अम्हाणं एरिसा

दसा। ताहे भवंतरस अणुवट्टिईए का अम्हाणं दसा भविस्सइ? अम्हं नाममेत्तेण रज्जं, अहिगारो पुण जुवरण्णो तप्पुत्तस्स य। एवं सोच्चा राया अमच्चं आहविय एवं वयासी—अम्हाणं वंसे अण्णेण अभिगयं उज्जाणं णो अण्णो अच्चेइ। तं कहं जुवरायपुत्तं तओ अभिनिक्खामेमित्ति। अमच्चो भणइ—अत्थि उवाओ। तस्स कूडलेहो पेसिज्जउ जं अमुगो पच्चंतराया उक्किट्ठो, तस्स निग्गहट्ठं महाराजा गच्छइ। रण्णा एवं कयं। तं सोऊण विस्सभूइ कहीअमए जीवमाणे महाराया किमट्ठं निग्गच्छइ-त्ति कट्टु सो जुद्धत्थं गओ॥२२॥

शब्दार्थ—[तओ चइत्ता] वहां से च्यवकर [बहुसु भवेसु भामं भामं] अनेक भवों में भ्रमण करता हुआ [पण्णरसमे भवे] पन्द्रहवें भवमें [रायगिहे नयरे] राजगृह नगर में [विस्सनंदिस्स रन्नो] विश्वनंदी राजा के [लहुभाउयस्स विसाहभूइ जुवरायस्स]

लघुभ्राता विशाखभूति युवराज की [धारिणीए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णो] धारिणी देवी की कूख में पुत्ररूप से उत्पन्न हुआ। [माउपिऊहिं तस्स विस्सभूइत्ति नामं कयं] मातापिता ने उसका नाम विश्वभूति रक्खा। [सो य माउपिऊणं आणंद-वड्ढगो आसी] वह मातापिता के आनन्द का वर्द्धक था। [तए णं सो उम्मुक्कबाल-भावो] वह बाल्यावस्था को पार करके [जोव्वणगमणुपत्तो] यौवन अवस्था को प्राप्त हुआ [एगया अंतेउरवरगओ] एक बार श्रेष्ठ अंतःपुर के साथ [पुप्फकरंडए उज्जाणे] वह पुष्प-करंडक उद्यान में [सच्छंदं कीडइ] स्वच्छंद क्रीडा कर रहा था।

[विस्सनंदिस्स रण्णो] राजा विश्वनन्दी का [विसाहनंदी नामं पुत्तो आसी] विशा-खनन्दी—नामक पुत्र था। [जो य विसाहभूइस्स जुवरायपयप्पदाणाणंतरं समुप्पण्णो] जो विशाखभूति को युवराजपद प्रदान करने के पश्चात् जन्मा था। [तं विस्सभइं जुव-रायपुत्तं] उस विश्वभूति युवराजपुत्र को [पुप्फकरंडए उज्जाणे सच्छंदं कीडमाणं पासिय]

पुष्पकरंडक उद्यान में स्वच्छंद क्रीडा करते देखकर [तस्स माया] विशाखनन्दी की माता का हृदय [ईसाविद्धहियया कोवघरं पविट्ठा] ईर्ष्या से विंध गया। वह कोप गृह में चली गइ। [राया तं पासाएइ] राजा ने उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न किया [न सा पसन्ना हवइ] पर वह प्रसन्न नहीं हुइ। [कहेइय–किं अम्हं रज्जेण वा? बलेण वा?] वह कहने लगी–राज्य से और बल से हमें क्या लाभ हुआ [जइ विसाहनंदी एवंविहे भोए न भुंजइ] यदि विशाखनन्दी इस प्रकार के भोग नहीं भोगता [जइ भवंते जीवमाणे वि अम्हाणं एरिसा दसा] यदि आपके जीतेजी हमारी ऐसी दशा है [ताहे भवंतस्स अणुवट्टिइए का अम्हाणं दसा भविस्सइ?] तो आपकी अनुपस्थिति में हमारी क्या दशा होगी? [अम्हं नाममेत्तेण रज्जं] हमारा तो नाम मात्र का राज्य है, [अहिगारो पुण जुवरण्णो तप्पुत्तस्स य] अधिकार तो युवराज और उसके पुत्र का है।

[एवं सोच्चा] यह सुनकर [राया अमच्चं आहविय एवं वयासी] राजा ने अमात्य

को बुलाकर कहा [अम्हाणं वंसे अण्णेण] हमारे वंश में दूसरे के द्वारा [अभिगयं उज्जाणं णो अण्णो अच्चेइ] अभिगत उद्यान में दूसरा अभिगमन नहीं करता [तं कहं जुवरायपुत्तं] तो युवराजपुत्र को [तओ अभिनिक्खामेमित्ति] उद्यान से किस प्रकार निकालूं ? [अमच्चो भणइ–अत्थि उवाओ] अमात्य ने कहा–उपाय है । [तस्स कूडलेहो पेसिज्जउ] उसे झूठा पत्र भेज दीजिए [जं अमुगो पच्चंतराया उक्किट्ठो] कि अमुक सीमावर्ती राजा प्रबल हो गया है । [तस्स निग्गहट्ठं महाराजा गच्छइ] महाराज उसका निग्रह करने के लिए जा रहे हैं। [रण्णा एवं कयं] राजा ने ऐसा किया [तं सोऊण विस्सभूई कहीअ] उसे सुनकर विश्वभूति ने कहा–[मए जीवमाणे] मेरे जीवित रहते [महाराया किमट्ठं निग्गच्छइ] महाराज क्यों जाते हैं ? [त्ति कट्टु] ऐसा कहकर [सो जुद्धत्थं गओ] वह युद्ध के लिए चला गया ॥२२॥

मूलम्–तए णं विसाहनंदी रायकुमारो तमुज्जाणं रित्तं मुणिय तत्थ कीडइ।

जुद्धट्ठं गओ विस्सभूई न तत्थ कंचि पच्चंतरायं पेच्छइ ताहे पुप्फकरंडगं उज्जाणं पच्चागओ दंडगहियग्गहत्थेहिं दारवालेहिं ओरुद्धो—मा एहि सामी! एत्थ विसाहनंदी रायकुमारो कीडइ। एवं सोऊण विस्सभूइणा णायं छम्मेण अहं निग्गमिओ कुविएण तेण तत्थ ठिया अणेगफलभरसमोणया कविट्ठलया मुट्ठिप्पहारेण आहया, फला तुडिया। तेहिं कविट्ठफलेहिं उज्जाणभूमी अत्थरिया। सो भणइ—एवं तुम्हाणं सीसाणि पाडेउं सक्केमि, जेट्ठतायस्स गारवमास्सिओ नो एवं करेमि। अहं मे छम्मेण बहिं नीणिओ। सयणा अवि नियसत्थपरायणा होउं एवं समायरंति धी! धी! कामभोगे—

सल्लं कामा विसं कामा कामा आसीविसोवमा।
कामे पत्थयमाणा य, अकामा जंति दुग्गइं ॥१॥

तम्हा अलाहि कामभोगेहिं। कामभोगा दुग्गइमूलंति कट्टु तओ निग्गओ संजायसंवेगो सुद्धभावणो अज्जसंभूयाणं थेराणं अंतिए पव्वइओ। तए णं से विस्सभूई अणगारे ईरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी बहूहिं छट्ठट्ठमाइएहिं तिव्वेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥२३॥

शब्दार्थ—[तए णं विसाहनंदी] तब विशाखनंदी [रायकुमारो] राजकुमार [तमुज्जाणं रित्तं] उस उद्यान को खाली [मुणिय] जानकर [तत्थ कीडइ] उसमें क्रीडा करने लगा [जुद्धट्ठं गओ विस्सभूई] युद्ध के लिए गया हुआ विश्वभूति [न तत्थ कंचि] वहां किसी भी [पच्चंतरायं पेच्छइ] विरोधी राजा को न देखकर [ताहे पुप्फकरंडगं उज्जाणं पच्चागओ] पुष्पकरंडक उद्यान में वापिस आया तो [दंडगहियग्गहत्थेहिं दारवालेहिं ओरुद्धो] उसे दण्डधारी द्वारपालोंने रोक दिया [मा एहि सामी !] और कहा—स्वामिन्!

यहां मत आइए [एत्थ विसाहनंदी रायकुमारो कीडइ] यहां राजकुमार विशाखनन्दी क्रीडा कर रहे हैं।

[एवं सोऊण विस्सभूइणा णायं छम्मेण अहं निग्गमिओ] यह सुनकर विश्वभूति समझ गया कि धोखे से मुझे निकाला गया है [कुविएण तेण तत्थ ठिया अणेगफल भरसमोणया] उसने कुपित होकर वहां की अनेक फलों के भारसे नमी हुइ [कविट्ठलया मुट्ठिप्पहारेण आहया] कपित्थ लताएँ मुट्ठियों का प्रहार करके तोड डालीं [फला तुडिया] और फल भी तोड डाले [तेहिं कविट्ठफलेहिं उज्जाणभूमी अत्थरिया] कपित्थ के फलों से उद्यानभूमि भर गई। [सो भणइ] उसने कहा–[एवं तुम्हाणं सीसाणि पाडेउं सक्केमि] इसी प्रकार मैं तुम्हारे सिर भी गिरा सकता हूँ [जेट्ठतायस्स गारवमस्सिओ नो एवं करेमि] परन्तु बडे पिताजी के बडप्पनका विचार करके ऐसा नहीं कर रहा हूं [अहं मे छम्मेण बहिं नीणिओ] मुझे तुम लोगों ने कपट से बाहर निकाला है [सयणा अवि

नियसत्थपरायणा होउं एवं समायरंति] स्वजन भी स्वार्थ के वशीभूत होकर ऐसा व्यवहार करते हैं। [धी ! धी ! कामभोगे] इन कामभोगों को धिक्कार है। कहा भी है—

[सल्लं कामा] काम भोग कांटे के समान है [विसं कामा] कामभोग विष के समान है [कामा आसीविसोवमा] कामभोग आशीविष के समान है [कामे पत्थयमाणाय] कामभोगों को प्राप्त करनेवाले किन्तु उनकी कामना करनेवाले भी [अकामा जंति दुग्गइं] दुर्गति को प्राप्त करते हैं।

[तम्हा अलाहि कामभोगेहिं] अतएव कामभोग वृथा है [कामभोगा दुग्गइमूलंति कट्टु] कामभोग दुर्गति के मूल हैं इस प्रकार कहकर [तओ निग्गओ] वह निकल गया [संजाय संवेगो] उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया [सुद्धभावणो] वह शुद्धभाव से [अज्ज संभूयाणं थेराणं अंतिए पव्वइओ] आर्यसम्भूत नामक स्थविर के पास दीक्षित हो गया [तए णं से विस्सभई अणगारे] इसके बाद वह विश्वभूति अनगार [ईरियासमिए जाव

गुत्तबंभयारी] ईर्यासमिति से सम्पन्न होकर यावत् गुप्त ब्रह्मचारी होकर [बहूहिं छट्ठट्ठमाइएहिं तिव्वेहिं तवोकम्मेहिं] अनेक छट्ठ अट्ठम् आदि की तीव्र तपश्चर्या से [अप्पाणं भावेमाणे विहरइ] आत्मा को भावित करते विचरने लगे ॥२३॥

मूलम्–तओ तवप्पभावलद्धाणेगविहलद्धिसंपण्णो सो विस्सभूई अणगारो एगया आयरियं आपुच्छिय एगल्लविहारेण विहरमाणो महुरं नयरिं गओ। तया तत्थ रायकण्णापाणिग्गहट्ठं विसाहनंदी रायकुमारो वि आगओ। तस्स रायमग्गे आवासो आसी। सो य विस्सभूई अणगारो मासक्खमणपारणगे तत्थ भिक्खट्ठं अडमाणे तेण मग्गेण गच्छइ तं गच्छमाणं दट्ठूण विसाहनंदीपुरिसा नियसामिं परिचाइंसु–सामी! एसो विस्सभूई अणगारोत्ति। तए णं विसाहणंदी तं सत्तुमिव विलोएइ। एत्थंतरे तत्थेव सो अणगारो मूइयाए एगाए गावीए

पेल्लिओ भूयले पडिओ। ताहे तेहिं उक्किट्ठकलकलो कओ। पच्चुत्थिय गच्छंतो सो विसाहनंदिणा भणिओ—रे भिक्खू! कविट्ठपाडणं तं बलं तुज्झ कहिं गयं? ताहे तेण पलोइयं दिट्ठो य सो विसाहनंदी, तए णं सो अणगारो अमरिसेण हत्थेहिं तं गाविं अग्गसिंगेहिं गहाय उड्ढं वहइ। दुब्बलस्स वि सीहस्स बलं किं सिगालेहिं लंघिज्जइ? अंधयारो किं पगासं अइक्कमइ? खज्जोओ किं चंदमसा सह फद्धइ? तं दट्ठुं सो विसाहनंदी लज्जिओ जाओ। तए णं से विस्सभूई अणगारे 'इमो दुरप्पा मइ अज्जवि वेरं वहइ' त्ति कट्टु तत्थ नियाणं करेइ—जइ इमस्स मम तव नियम-बंभचेरवासस्स कोवि फलवित्तिविसेसो हवइ तोऽहं आगमेस्साए अस्स वहाए होमि' त्ति। तए णं सो अणालोइय अप्पडिक्कंतो सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता

कालमासे कालं किच्चा सोलसमे भवे महासुक्के उक्किट्ठट्ठिइओ देवो जाओ ॥२४॥

शब्दार्थ—[तओ] उसके बाद [तवप्पभावलद्धाणेगविहलद्धिसंपण्णो] तप के प्रभाव से प्राप्त होनेवाली अनेक प्रकार की लब्धियों से संपन्न [सो विस्सभूई अणगारो] वह विश्वभूति अनगार [एगया आयरियं आपुच्छिय] एकबार आचार्य की आज्ञा लेकर [एगल्लविहारेण विहरमाणो] एकाकी विहार से विचरते हुए [महुरं नयरिं गओ] मथुरा नगरी में पहुँचे। [तया तत्थ रायकन्ना] संयोगवश उसी समय राजकन्या का [पाणिग्गहणट्ठं] पाणिग्रहण करने के लिए [विसाहनंदी रायकुमारोत्ति आगओ] विशाखनंदी राजकुमार भी वहां आया हुआ था। [तस्स रायमग्गे आवासो आसी] राजमार्ग पर उसका निवास था। [सो य विस्सभूई अणगारो] विश्वभूति अनगार [मासक्खमणपारणगे तत्थ भिक्खट्ठं] मासखमण के पारणे के दिन भिक्षा के लिए [अडमाणे] भ्रमण करते हुए [तेण मग्गेण गच्छइ] उसी मार्ग से निकले। [तं गच्छमाणं दट्ठूण विसाहनंदीपुरिसा] उन्हें जाते

देखकर विशाखनंदी के आदमियोंने [नियसामिं परिचाइंसु] अपने स्वामी को परिचय कराया–[सामी! एसो विस्सभूई अणगारोत्ति] स्वामिन्! यह विश्वभूति अनगार है। [तए णं विसाहणंदी तं सत्तुमिव विलोएइ] तब विशाखनंदी उन्हें इस प्रकार देखने लगा जैसे शत्रु को देखता हो। [एत्थंतरे तत्थेव सो अणगारो] इसी बीच विश्वभूति अनगार [सूइयाए एगाए गावीए पेल्लिओ भूयले पडिओ] एक नवप्रसूता गाय के धक्के से जमीन पर गिरपडे [ताहे तेहिं उक्किट्ठकलकलो कओ] यह देख विशाखनन्दी आदि ने कह कहा लगाया–अर्थात् जोरों से हँसने लगे [पच्चुत्थिय गच्छंतो सो विसाहनंदीणा भणिओ] वह उठकर जा रहे थे कि विशाखनन्दी ने कहा–[रे भिक्खू ! कविट्ठपाडणं तं बलं तुज्झ कहिं गयं ?] अरे भिक्षुक कपित्थफलों को गिरानेवाला तुम्हारा वह बल कहा चला गया ?' [ताहे तेण पलोइयं] तब मुनि ने देखा [दिट्ठो य सो विसाहनंदी]–यह विशाखनंदी है ! [तए णं सो अणगारो अमरिसेण] उसके बाद मुनिने क्रुद्ध होकर [हत्थेहिं तं गाविं

अग्गसिंगेहिं गहाय उड्ढं वहइ] उस गाय को सीगों के अग्रभाग से पकडकर ऊपर उठा लिया। [दुब्बलस्स वि सीहस्स बलं] सिंह कितना ही दुर्बल हो जाय, उसके बल को [किं सिगालेहिं लंघिज्जइ?] क्या शृगाल उल्लंघन कर सकता है? [अंधयारो किं पगासं अइक्कमइ?] अंधकार क्या प्रकाश का अतिक्रमण कर सकता है? [खज्जोओ किं चंदमसा सह फद्धइ] जुगनू क्या चन्द्रमा के साथ स्पर्द्धा कर सकता है? [तं दट्ठुं सो विसाहनंदी लज्जिओ जाओ] यह देखकर विशाखनंदी लज्जित हो गया। [तए णं से विस्सभूइ अणगारे] तदनन्तर विश्वभूति अणगार मनमें विचार करने लगे–[इमो दुरप्पा मइ अज्जवि वेरं वहइ] यह दुरात्मा अब भी मुझ से वैर रखता है [त्ति कट्टु तत्थ नियाणं करेइ] यह सोचकर उन्होंने निदान किया [जइ इमस्स मम तवनियमबंभचेरवासस्स कोवि फलवित्तिविसेसो हवइ] मेरे तप नियम और ब्रह्मचर्य का अगर कुछ फल हो तो [तोऽहं आगमेस्साए अस्स वहाए होमि' त्ति] आगामी जन्म में मैं इसका

वध करनेवाला होऊँ!' [तए णं सो अणालोइय अप्पडिक्कंतो] इसके बाद आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना [सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता] अनशन से साठ भक्त का छेदन करके [कालमासे कालं किच्चा] कालमास में काल करके [सोलसमे भवे महासुक्के] सोलहवें भवमें महाशुक्रनामक देवलोक में [उक्किट्ठट्ठिइओ देवो जाओ] सत्रह सागरोपम की उत्कृष्ट स्थितिवाला देव हुआ ॥२४॥

मूलम्–तए णं से आउभवट्ठिइक्खएणं महासुक्काओ चइत्ता सत्तरसमे भवे भरयखित्ते पोयणपुरनयरे पयावइनामस्स रन्नो मियावई देवीए कुच्छिंसि सत्तसुमिणसूइओ वासुदेवो पुत्तत्ताए उववन्नो। तस्स जेट्ठभाया अयलाभिहो बलदेवो आसी। जायमायस्स इमस्स वासुदेवस्स तिण्णि पिट्ठकरंडगाणि भविसुंत्ति तस्स अम्मापिउहिं तिविट्ठुत्ति नामं कयं। सो य अम्मापिऊणं अइसयवल्लहो

आसी। कमेण सो तिविट्ठू उम्मुक्कबालभावो जोव्वणगमणुप्पत्तो। तए णं अस्स पुव्वभववेरिओ विसाहनंदी जीवो अणेगेसु भवेसु भमं भमं संखपुरसमीवट्टिय तुंगगिरिम्मि संखपुरोवद्दवकारगो सीहो जाओ। एगया तिविट्ठुणा स सीहो बाहुजुद्धेण मारिओ। तयणंतरं च णं तस्स तिविट्ठुस्स पडिवासुदेवेण संखपुराधीसरेण अस्सग्गीवेण सह जुद्धं संजायं। तत्थ तेण अस्सग्गीवस्स सीसं तिण्णि क्खित्तेणेव चक्केण छेइयं। देवेहिं च घुट्ठं—एसो तिविट्ठू पढमो वासुदेवो समुप्पण्णोत्ति। तओ सव्वे रायाणो नमिया। उदइयं अड्ढभरहं कोडिया सिला बाहाहिं धारिया॥२५॥

शब्दार्थ—[तए णं से] उसके बाद [आयुभवट्ठिइक्खएणं] आयु, भव और स्थिति का क्षय होने से [महासुक्काओ चइत्ता] वह नयसार का जीव महाशुक्र देवलोक से चव-

कर [सत्तरसमे भवे] सत्तरहवें भव में [भरयखित्ते पोयणपुरनयरे] भरतक्षेत्र के पोतनपुर नगर में [पयावइनामस्स रन्नो] प्रजापति नामक राजा की [मियावई देवीए] मृगावती देवी के [कुच्छिंसि] कुंख में [सत्तसुमिणसूइओ] सात स्वप्नों को सूचित कर [वासुदेवो पुत्तत्ताए उववन्नो] वासुदेव के रूप में पुत्रपन से उत्पन्न हुआ [तस्स जेट्ठभाया अयलाभिहो] उसका बडा भाई अचलनामक [बलदेवो आसी] बलदेव था [जायमायस्स इमस्स] उत्पन्न होते ही उस बालक के [तिण्णि पिट्ठकरंडगाणि] तीन पीठ की पसलियां [भविंसुत्ति] होने से [तस्स अम्मा पिउहिं] उसके मातापिताने [तिविट्ठुत्ति नामं कयं] त्रिपृष्ठ ऐसा नाम रक्खा।

[सो य अम्मापिऊणं]वह माता पिता के लिये [अइसयवल्लहो आसी] अत्यन्त प्रिय था। [कमेण सो तिविट्ठू] क्रम से वह त्रिपृष्ठ [उम्मुक्कबालभावो] बालवय को पार करके [जोव्वणगमणुप्पत्तो] यौवन अवस्था को प्राप्त हुआ।

[तए णं अस्स] उधर इसका [पुव्वभववेरिओ] पूर्वभव का वैरी [विसाहनंदी जीवो] विशाखनंदी का जीव [अणेगेसु भवेसु भमं भमं] अनेक योनियों में भ्रमण करके [संखपुरसमीववट्टिय] शंखपुर के समीपवर्ती [तुंगगिरिम्मि] तुंगगिरि—तुंग नामक पर्वत में [संखपुरोवद्दवकारगो सीहो जाओ] शंखपुर में उपद्रव करनेवाला सिंहपने से उत्पन्न हुआ।

[एगया तिव्विट्ठुणा] एक समय त्रिपृष्ठने [स सीहो बाहुजुद्धेण मारिओ] उस सिंह को बाहु युद्ध से मार डाला [तयाणंतरं च णं] उसके बाद [तस्स तिविट्ठुस्स] उस त्रिपृष्ठ को [पडिवासुदेवेण संखपुराधीसरेण अस्सग्गीवेण] शंखपुर के राजा अश्वग्रीव नामके प्रतिवासुदेव के [सह युद्धं संजायं] साथ युद्ध हुआ। [तत्थ तेण] उस युद्ध में इसने [अस्सग्गीवस्स सीए] अश्वग्रीव का मस्तक [तण्णिक्खित्तेणेव चक्केण छेइयं] उसीके द्वारा फेंके गये हुए चक्र से काट दिया। [देवेहिं च घुट्ठं] उस समय देवों ने घोषणा की—[एसो तिविट्ठू पढमो वासुदेवो] ये त्रिपृष्ठ प्रथम वासुदेव के रूप में [समुप्पण्णोत्ति]

उत्पन्न हुए हैं। [तओ सव्वे रायाणो] तब सब राजाओं ने [नमिया] वासुदेव को प्रणाम किया [उदइयं अड्ढभरहं] त्रिपृष्ठ ने अर्द्धभरत का राज्य प्राप्त किया [कोडिया सीला बाहाहिं धारिया] एक करोड मन की शिला हाथों से उठा ली ॥२५॥

मूलम्—तए णं से एगया सयणसमयम्मि पवट्टमाणे नाडए सिज्जावालगं एवमाणावीअ जाहेऽहं निद्दिओ होमि ताहे तुवं नट्टगमंडलं निवारेज्जा इय आणावियं तिविट्ठू वासुदेवो नाडगं पेक्खमाणो निद्दावसगओ। निद्दिए वि तम्मि सोइंदियसुहवसंगओ सिज्जापालओ संगीयरसमुच्छिओ णो तं निवारेइ, पच्चुयं कहेइ कुव्वउ नाडगं निस्संकं तेण नाडयं पुव्वमिय पवट्टं आसी।

एवं सिज्जावालगे नाडगरसमुच्छिए समाणे तन्निनाएण तिविट्ठु वासुदेवस्स निद्दा भग्गा। भग्गनिद्दो सो नट्टगनायगं पुच्छीअ—तुवं अहुणावि जं

नाडगं करेसि तं कस्स आणाए? तए णं सो कहीअ सामी! सिज्जावालगस्स आणाए। एवं तस्स वयणं सोच्चा सो तिविट्ठू आसुरुत्तो मिसिमिसेमाणो कोहेण धमधमेंतो उक्कालिज्जमाणं सीसगदवं तस्स सिज्जावालगस्स कण्णेसु पक्खिवावीअ। तए णं सो तिंविट्ठू अणेगाइं जुद्धाइं करिय बहुइं पावकम्माइं समज्जिणिय चुलसीइवाससयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता कालमासे कालं किच्चा अट्ठारसमे भवे सत्तमाए पुढवीए अप्पइट्ठाणे नयरे तेत्तीससागरोवम-ट्ठिइओ नेरइओ उववन्नो ॥२६॥

शब्दार्थ—[तए णं से एगया] उसके बाद एक बार [सयणसमयम्मि] सोने के समय [पवट्टमाणे नाडए] जब नाटक चल रहा था उस समय [सिज्जावालगं एवमाणावीअ] त्रिपृष्ठ वासुदेव ने शय्यापालक को इस प्रकार आदेश दिया–[जाहेऽहं निद्दिओ होमि]

जब मैं निद्राधीन होजाऊं [ताहे तुवं नट्टगमण्डलं निवारेज्जा] तब तुम नटों को रोक देना [इयआणावियतिविट्ठू वासुदेवो] इस प्रकार की आज्ञा देकर त्रिपृष्ठ वासुदेव [नाडगं पेक्खमाणो निद्दावसगओ] नाटक देखतादेखता सो गया। [निद्दिए वि तम्मि सोइंदियसुहवत्तं] वासुदेव के सो जाने पर भी श्रोत्रेन्द्रिय के सुख के वशीभूत [संगीयरसमुच्छिओ गओ सिज्जापालओ] और संगीत के रस में आसक्त हुए शय्यापालक ने [णो तं निवारेइ] नटों को नहीं रोका [पच्चुय कहेइ] यही नहीं वरन् उनसे कह दिया कि [कुव्वउ नाडगं निस्संकं] तुम निशंक होकर नाटक किये जाओ [तेण नाडयं पुव्वमिय पवट्टं आसी] इस कारण नाटक पहले की भांति ही चालू रहा।

[एवं सिज्जावालगे] इस प्रकार शय्यापालक के [नाडगरसमुच्छिए समाणे] नाटक रस में मूर्च्छित होजाने पर [तन्निनाएण] नाटक की आवाज से [तिविट्ठूवासुदेवस्स] त्रिपृष्ठ वासुदेव की [निद्दा भग्गा] निद्रा भंग हो गई [भग्गनिद्दो] निद्रा भंग होने पर [सो नट्टगना-

यगं] त्रिपृष्ठवासुदेव ने नटों के नायक को [पुच्छीअ] पूछा [तुमं अहुणा वि] तुम इस समय भी [जं नाडगं करेसि] जो नाटक कर रहे हो [तं कस्स आणाए ?] सो किसकी आज्ञा से ? [तए णं सो कहीअ] तब नटनायकने कहा–[सामी ! सिज्जवालगस्स] स्वामिन् ! शय्यापालक की [आणाए ?] आज्ञा से । [एवं तस्स वयणं सोच्चा] उनके ये वचन सुनकर [सो तिविट्ठू आसुरुत्तो] त्रिपृष्ठ वासुदेव रुष्ट हुआ [मिसिमिसेमाणो कोहेण धमधमेंतो] क्रोध की आग से जल उठा क्रोध से धमधमायमान हो गया। [उक्कालिज्जमाणं] उसने उबलते हुए [सीसगद्वं तस्स सिज्जावालगस्स] शीशे को शय्यापालक के [कण्णेसु पक्खिवावीअ] दोनों कानों में डलवा दिया।

[तए णं सो तिविट्ठू] उसके बाद भी त्रिपृष्ट [अणेगाइं जुद्धाइं करीअ] अनेक युद्ध करके [बहुइं पावकम्माइं समज्जिणिय] और बहुत पापकर्मों का उपार्जन करके [चुलसीइवाससयसहस्साइं] चौरासी लाख वर्ष की आयु [सव्वाउयं पालइत्ता] सम्पूर्ण

आयु को भोगकरके [कालमासे कालं किच्चा] कालमास में काल करके [अट्ठारसमे भवे] अठारहवे भव में [सत्तमाए पुढवीए अप्पइट्ठाणे नयरे] सातवीं पृथ्वी अप्रतिष्ठान नामक नरक में [तेत्तीससागरोवमट्ठिइओ नेरइओ उववन्ना] तेत्तीस सागरोपम की स्थितिवाला नारक हुआ॥२६॥

मूलम्—तए णं से ताओ नरयाओ उव्वट्टिय एगूणवीसइमे भवे एगम्मि महावणे सीहत्तेण उववण्णो॥२७॥

शब्दार्थ—[तए णं से] उसके बाद वह [ताओ नरयाओ उव्वट्टिय] उस नरक से निकल कर नयसार का जीव [एगूणवीसइमे भवे] उन्नीसवें भव में [एगम्मि महावणे] एक बडे वनमें [सीहत्तेण उववन्नो] सिंह के रूप में उत्पन्न हुआ॥२७॥

मूलम्—तए णं सो सीहो मरिऊण वीसइमे भवे चउत्थे नरए नेरइयत्ताए उववन्नो॥२८॥

महावीरस्य एकोनविंशति-विंशतितमभवयोर्निरूपणम्

शब्दार्थ—[तए णं सो सीहो मरिऊण] उसके वाद वह सिंह मरकर [वीसइमे भवे] वीसवें भव में [चउत्थे नरए] चौथी नरक में [नेरइयत्ताए उववन्नो] नारकी रूप से उत्पन्न हुआ ॥२८॥

मूलम्–तए णं से चउत्थनरयाओ उव्वट्टिय अणेगासु तिरियमणुयाइगईसु भमंतो नरए उववन्नो। तओ उव्वट्टिय सो नयसारजीवो एगवीसइमे भवे अवरविदेहे मूयाए रायहाणीए धणंजयस्स रण्णो धम्मधारिणीए धारिणीए देवीए कुच्छिंसि चउद्दससुमिणसूइओ विलक्खणो विलक्खणपभावजुत्तो पुत्तत्तेण उववन्नो। नाणाविहमहोच्छवेहिं निव्वत्ते सूइजायकम्मकरणे संपत्ते बारसाहदिवसे अम्मापिऊहिं तस्स पियमित्तेति नामं कयं। सो य बालो पंचधाईहिं परिवालिज्जमाणो सुक्कदुलबितिया चंदोविव कमेण वुड्ढिं गओ। उम्मुक्कबालभावो

जोव्वणगमणुप्पत्तो छक्खंडाहिवई चक्कवट्टी राया जाओ ॥२९॥

शब्दार्थ—[तए णं सो चउत्थनरयाओ उव्वट्टिय] उसके बाद चौथे नरक से निकलकर [अणेगासु तिरियमणुयाइगईसु] अनेक तिर्यंच और मनुष्य आदि की योनियों में [भमंतो नरए उववन्नो] भ्रमण करता हुआ वह फिर नरक में उत्पन्न हुआ। [तओ उव्वट्टिय] नरक से निकलकर [सो नयसारजीवो एगवीसइभवे] वह नयसार का जीव इक्कीसवें भवमें [अवरविदेहे] पश्चिम विदेह की [मूयाए रायहाणीए] मूका नामक राजधानी में [धणंजयस्स रण्णो] धनंजय राजा की [धम्मधारिणीए धारिणीए देवीए] धर्मधारिणी धारिणी देवी के [कुच्छिंसि] उदर में [चउद्दससुमिणसूइओ] चौदह स्वप्नों से सूचित [विलक्खणो] विशिष्ट लक्षणों से युक्त [विलक्खणपभावजुत्तो] विलक्षण प्रभाव से युक्त [पुत्तत्तेण उववन्नो] पुत्ररूप से उत्पन्न हुआ [नाणाविहमहोच्छवेहिं निव्वत्ते] तब नाना प्रकार के महोत्सवों के साथ उसका [सूइजायकम्मकरणे संपत्ते] सूतिकर्म तथा जातकर्म

नामक संस्कार किया गया। इनके सम्पन्न होने पर [बारसाहदिवसे] बारहवां दिन आने पर [अम्मापिऊहिं तस्स पियमित्तेत्ति नामं कयं] माता–पिता ने उसका नाम प्रियमित्र रक्खा। [सो य बालो पंचधाईहिं परिवालिज्जमाणो] वह बालक पांच धायों द्वारा पालन किया जाता हुआ [सुक्कदलबितिया चंदोविव कमेण वुड्ढिं गओ] शुक्लपक्ष की द्वितीया के चंद्रमा के समान क्रम से बढता हुआ। [उम्मुक्कबालभावो] बालवय को उल्लंघन करके [जोव्वणगमणुप्पत्तो] युवावस्था को प्राप्त हुआ। [छक्खंडाहिवइ] आगे चलकर वह छहों खण्डों का अधिपति [चक्कवट्टी राया जाओ] चक्रवर्ती राजा हुआ ॥२९॥

मूलम्—तए णं से पयं परिवालेमाणे चक्कवट्टिसिरिमणुभवमाणे एगया मूयाए नयरीए उज्जाणे समागयस्स पोट्टिलायरियस्स धम्मदेसणं सोच्चा संजायसंवेगो पुत्तं रज्जे ठवेत्ता तयंतिए पव्वइओ। तए णं से पियमित्तमुणिकोडिवासाइं उक्किट्ठं तवं तवित्ता चउरासीइलक्खपुव्वाउयं परिपालिय कालमासे

कालं किच्चा सत्तमे महासुक्कदेवलोके देवत्तेणं उववन्ने। तओ आउभवट्ठिइ-क्खएणं चुओ सो अणेगभवं किच्चा बावीसमे भवे वच्छदेसे कोसंबीणयरीए पोट्टाभिहस्स रण्णो पउमावईए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णो। गब्भ-गयंसि तंसि सुभिक्खाइणा सयलजणाणं पोट्टं भरियं। तेण अम्मापिऊहिं तस्स पोट्टलत्ति नामं कयं। सो य उम्मुक्कबालभावो जोव्वणगमणुप्पत्तो बावत्तरिक-लाकुसलो जाओ। एगया कयाइं पासायगवक्खे उवविट्ठो सो नयरसोहं पासंतो रायपहे गच्छमाणं मुहोवरि सदोरयमुहवत्थियं धारेमाणे णाणनिहाणं तवकिरिय-खाणिं मुणिं दट्ठूण संजायसंवेगो विगयाविसयवेगी उज्जाणम्मि समवसरिय सुदंसणायरियसमीवे धम्मं सोच्चा पव्वइओ ॥३०॥

शब्दार्थ—[तए णं से] उसके बाद राजा होकर [पयं परिवालेमाणे] प्रजा का परि-

पालन करता हुआ और [चक्कवट्टिसिरिमणुभवमाणे] चक्रवर्ती की लक्ष्मी का उपभोग करता हुआ [एगया] एक समय [मूयाए नयरिए उज्जाणे] मूकानगरी के उद्यान में [समागयस्स पोट्टिलायरियस्स] पधारे हुए पोट्टिलनामके आचार्य का [धम्मदेसणं सोच्चा] धर्मोपदेश श्रवणकर [संजायसंवेगो] वैराग्ययुक्त होकर [पुत्तं रज्जे ठवित्ता] तथा अपने पुत्र को राज्य पर स्थापित करके [तयंतीए पव्वइओ] उनके समीप प्रव्रजित हो गया। [तए णं से पियमित्तमुणी] उसके बाद प्रियमित्र मुनि [कोडिवासाइं] करोड वर्ष तक [उक्किट्ठं तवं तवित्ता] उत्कृष्ट तपस्या करके [चउरासीइ लक्खपुव्वाउयं] चौरासी लाख पूर्व की आयु [परिपालिय] भोगकर [कालमासे कालं किच्चा] काल के समय काल करके [सत्तमे महासुक्कदेवलोए] सातवें महाशुक्रदेवलोक में [देवत्तेण उववन्नो] देवरूप से उत्पन्न हुआ।

[तओ आउभवट्ठिइक्खएणं] उसके बाद देवलोक से आयु भव और स्थिति के

क्षय होने पर [चुओ] चवकर [सो अनेगभवं किच्चा] उसने अनेक भव किये फिर गिनने योग्य [बाइसमे भवे वच्छदेसे कोसंबी नयरीए] बाइसवें भव में वत्स नामक देश में कोशाम्बी नगरी में [पोट्टाभिहस्स रण्णो] पोट्टनामक राजा की [पउमावईए देवीए] पद्मावती नामक देवी के [कुच्छिंसि] उदर में [पुत्तत्ताए उववण्णो] पुत्ररूप से उत्पन्न हुआ।

[गब्भगयंसि तंसि] जब वह गर्भ में था तब [सुभिक्खाइणा] सुभिक्षा आदि द्वारा उसने [सयलजणाणं पोट्टं भरियं] समस्त जनता का पेट भरा [तेण अम्मापिऊहिं तस्स पोट्टिलत्ति नामं कयं] इस कारण माता पिता ने उसका नाम पोट्टिल रक्खा। [सो य उम्मुक्कबालभावो] बालवय को पूर्ण करके [जोव्वणगमणुप्पत्तो] जब यौवनवय को प्राप्त हुआ तो [बावत्तरिकलाकुसलो जाओ] वह बहत्तर कलाओं में कुशल हो गया।

[एगया कयाइ] एक बार कभी [पासायगवक्खे] प्रासाद के गवाक्ष में [उवविट्ठो] बैठा हुआ [सो नयरसोहं पासंतो] वह नगर की शोभा देख रहा था। [रायपहे गच्छ-

माणं] उस समय उसने राजमार्ग में जाते हुए [मुहोवरिसदोरयमुहवत्थिधारेमाणं] मुख पर डोरा सहित मुखवस्त्रिका धारण किये हुए [नाणणिहाणं] ज्ञान के निधान [तवकिरियखाणिं मुणिं] और तपश्चर्या तथा क्रिया की खान मुनि को [दट्ठूण] देखकर [संजायसंवेगो] उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया और [विगयविसयवेगो] विषयों का वेग नष्ट हो गया [उज्जाणम्मि समवसरिय] वह उद्यान में जाकर, [सुदंसणायरिय समीवे धम्मं सोच्चा पव्वइओ] सुदर्शन नामक आचार्य से धर्म श्रवण कर उनके पास प्रव्रजित हो गया॥३०॥

मूलम्—तए णं सो पोट्टिलो मुणी तिव्वतवसंजमाराहणओ मुहुं मुहुं वीसइ ठाणसमाराहणेणं ठाणगवासित्तं समाराहित्ता अणवरयं मासभत्तेणं कोडिवारसाइं उग्गं तवं तवित्ता चउरासीइलक्खपुव्वाइं सव्वाउयं पालइत्ता सुहेण झाणेण पसत्थेणं अज्झवसाणेण कालमासे कालं किच्चा तेवीसइमे भवे सह-

स्सारे कप्पे सव्वट्ठविमाणे एगूणवीससागरोवमट्ठिइय देवत्तेण उववन्नो ॥२१॥

शब्दार्थ—[तए णं सो पोट्टिलो मुणी] उसके बाद पोट्टिलमुनि ने [तिव्वतवसंजमाराहणओ] तीव्र तप और संयम की आराधना से तथा [मुहुं मुहुं वीसइठाणसमाराहणेणं] बार–बार वीस स्थानों का सेवन करके [ठाणगवासित्तं समाराहित्ता] तथा स्थानकवासिपने की आराधना करके [अणवरयं मासभत्तेणं] निरन्तर मासखमण की तपस्या करके [कोडिवरिसाइं उग्गं तवं तवित्ता] एक करोड वर्ष तक उग्रतप करके [चउरासीइलक्खपुव्वाइं] चौरासी लाख पूर्व की [सव्वाउयं पालइत्ता] समग्र आयु भोगकर [सुहेण झाणेण] शुभध्यान और [पसत्थेणं अज्झवसाणेण] प्रशस्त अध्यवसाय के साथ [कालमासे कालं किच्चा] काल के समय काल करके [तेवीसइमे भवे] तेवीसवें भव में [सहस्सारे कप्पे] सहस्रारनामक कल्प के [सव्वट्टविमाणे] सर्वार्थनामक विमान में [एगूणवीससागोवमट्ठिइय]

महावीरस्य द्वाविंशतित्रयोविंशतितमभवयोः निरूपणम्

मूलम्--तए णं से देवे आउभवट्ठिइक्खएणं ताओ देवलोगाओ चविय चोवीसइमे भवे अस्सिं चेव भरयक्खित्ते सालदेसे रहपुरनयरे पियमित्तस्स रण्णो विमलाए देवीए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववण्णो। तस्स अम्मापिऊहिं विमलेत्ति नामं कयं। कमेण उम्मुक्कबालभावो जोव्वणगमणुप्पत्तो सो पिऊणा रज्जे अभिसित्तो पुढवी सासीअ। एगया सो विमलो राया कीडिउं वणं पत्तो। तत्थ एगं मिगं पासबद्धं मियमाणे पासिय तं पासाओ विमोइयं निब्भयं करीअ।

तए णं से सव्वत्थे रज्जे अमारी घोसणं घोसीअ। तेण सो विमलो राया महइमहालयं विमलं सुकयं आवज्जीअ। भावेइ य दया चेव सयलाणं सुकडाणं कम्माणं मूलंति सव्वसत्थेसु पडिवाइयं नो एत्थ कस्सवि विरोहो। अवि य दया परमं रयणं, दया धम्मसरिसो अण्णो उत्तमो धम्मो न होइ। दया चिंता-

मणी विव चिंतियं फलं देइ, कप्पलएव वंछियट्ठं पयच्छइ, कामधेणूविव कामं पपूरेइ, किं बहुणा? इमं धम्मसिरोमणिं दयं पालेमाणो सुहियओ जीवपहिओ चाउरंतसंसारकंतारे चउरासीइलक्खजीवजोणिदुप्पहं वीइक्कमि य सयलपाणिपीहणिज्जं मणुस्सभवसुट्ठाणं पावेइ। तत्थ मुत्तिमहिला दयागुणसमलंकियं तं जीवं आकरिसेइ। तेण स सासयसुहभागी हवइ॥३२॥

शब्दार्थ–[तए णं से देवे] उसके बाद वह देव [आउभवट्ठिइक्खएणं] आयु भव और स्थिति का क्षय होने से [ताओ देवलोगाओ चविय] उस देवलोग से चवकर [चोवीसइमे भवे] चौवीसवें भव में [अस्सिं चेव भरयक्खित्ते] इसी भरतक्षेत्र के [सालदेसे रहपुरनयरे] शाल्वदेश में, रथपुर नामक नगर में [पियमित्तस्स रण्णो] प्रियमित्र राजा की [विमलाए देवीए] विमला नामक देवी के [कुच्छिंसि पुत्तत्ताए उववन्नो] उदर

से पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ। [तस्स अम्मापिऊहिं विमलेत्ति नामं कयं] माता पिता ने उसका नाम विमल रक्खा [कमेण उम्मुक्कबालभावो] क्रमशः बालत्व को पार करके [जोव्वणगमनुप्पत्तो] वह युवा हुआ। [सो पिऊणा रज्जे अभिसित्तो] तब वह पिता के द्वारा राज्याभिषिक्त किया गया [पुढवी सासीअ] वह पृथ्वी का शासन करने लगा। [एगया सो विमलो राया] एक समय वह विमल राजा [कीडिउं वणं पत्तो] क्रीडा करने के लिए बनमें गया। [तत्थ एगं मिगं पासबद्धं मियमाणं] वहा एक मृग को जाल में फंसा और मरणासन्न [पासिय] देखकर [तं पासाओ विमोइय निब्भयं करीअ] उसे जाल से छुडाया और निर्भय किया।

[तए णं से सव्वत्थरज्जे] उसके बाद उसने समस्त राज्य में [अमारी घोसणं घोसीअ] अमारी की घोषणा करवाई। [तेण सो विमलो राया महइमहालयं] इससे विमल राजा को अत्यंत महान् [विमलं सुकयं आवज्जीअ] पुण्य की प्राप्ति हुई। [भावेइ य

दया चेव, सयलाणं] वह इस प्रकार की भावना किया करता था कि दया ही सकल पुण्यकर्मों का [मूलंति] मूल है। [सव्वसत्थेसु पडिवाइयं] ऐसा सर्व शास्त्रों में प्रतिपादित है [नो एत्थ कस्सवि विरोहो] दया के विषय में किसी का विरोध नहीं हैं। [अवि य दया परमं रयणं] इतना ही नहीं दया परम रत्न है [दया धम्मसरिसो] दया धर्म के समान [अण्णो उत्तमो धम्मो न होइ] अन्य कोई उत्तम धर्म नहीं हैं [दया चिंतामणी विव] दया चिन्तामणि के समान [चिंतियं फलं देइ] चिन्तित फल देती है [कप्पलएव वंछियट्ठं] कल्पलता के समान सब कामनाओं को [पयच्छइ] पूर्ण करती है [कामधेणू विव कामं पपूरेइ] कामधेनू के समान सब कुछ देती है [किं वहुणा?] अधिक क्या कहें, [इमं धम्मसिरोमणिं दयं] धर्मों में शिरोमणि इस दया को [पालेमाणो] पालता हुआ [सुहियओ] शुद्ध अन्तःकरणवाला [जीवपहिओ] जीवरूपी पथिक [चाउरंतसंसारकंतारे] चारगतिरूप संसारकान्तार में [चउरासीइलक्खजीवजोणि] चौरासीलाख जीव योनिरूप

[दुप्पहं वीइक्कमिय] दुर्गम मार्ग को लांघकर [सयलपाणिपीहणिज्जं] समस्त प्राणियों द्वारा इच्छा करने योग्य [मणुस्सभवसुट्ठाणं] मनुष्यभवरूपी सुन्दर स्थान को [पावेइ] प्राप्त करता है। [तत्थ मुत्तिमहिला दया गुणसमलंकियं तं जीवं आकरिसेइ] मनुष्य भव में दयागुण से विभूषित उस जीव को मुक्तिरूपी महिला अपनी ओर आकर्षित करती है। [तेण स सासयसुहभागी हवइ] इस कारण वह शाश्वत सुख का भागी हो जाता है।

कल्लाणकोडी कारणी, दुग्गइ दुहनिट्ठवणी,
संसारजलतारणी, एगंत होइ जीवदया ॥१॥
एवं खु नाणिणो सारं जं न हिंसइ किंचणं।
अहिंसासमयं चेव, एयावंतं वियाणिया ॥२॥

मूलम्—एवं दयाभावेण भावियप्पा सो कालमासे कालं किच्चा पंच-वीसइमे भवे छत्ताए णयरीए जियसत्तुस्स रण्णो भद्दाए देवीए कुच्छिंसि पुत्त-

त्ताए उववन्नो। सुहे दिने माऊपिऊहिं तस्स णंदेति नामं कयं। कमेण उम्मुक्कबालभावो जोव्वणगमणुप्पत्तो सो नंदकुमारो पिउणा रज्जे अभिसित्तो राया जाओ। सो य णायणीईए पयं व पयं पालेमाणो चउवीसइलक्खवरिसाइं रज्जसुहं परिभोगियं जायसंवेगो पोट्टिलायरियसमीवे पव्वज्जं पडिवज्जिय अणगारो जाओ ॥२३॥

शब्दार्थ—[एवं दयाभावेण] इस प्रकार दया भाव से [भावियप्पा] भावित आत्मावाला [सो] नयसार का वह जीव [कालमासे कालं किच्चा] कालमास में काल करके [पंचवीसइमे भवे] पच्चीसवें भव में [छत्ताए नयरीए] छत्रा नाम की नगरी में [जियसत्तुस्स रण्णो] जितशत्रु राजा की [भद्दाए देवीए कुच्छिंसि] भद्रा नामकी रानी के उदर में [पुत्तत्ताए उववन्नो] पुत्ररूप से उत्पन्न हुआ। [सुहे दिने] शुभ दिन में [माऊ-

पिऊहिं तस्स नंदेति नामं कयं] माता-पिता ने उसका नाम नंद रक्खा। [कमेण उम्मुक्क-बालभावो] नंदकुमार धीरे धीरे बाल्यकाल पूर्ण करके [जोव्वणगमणुप्पत्तो] युवावस्था को प्राप्त हुआ [सो णंदकुमारो पिऊणा रज्जे अभिसित्तो राया जाओ] पिताने उसका राज्याभिषेक किया। वह राजा हो गया [सो य णायणीईए] वह राजा न्याय--नीति के साथ [पयं व पयं पालेमाणो] सन्तान की तरह प्रजा का पालन करता हुआ [चउवीसइलक्खवरिसाइं] चोबीसलाख वर्षों तक [रज्जसुहं परिभोगिय] राज्य का सुख भोगकर [जाय संवेगो] वह संवेगवान हुआ [पोट्टिलायरियसमीवे पव्वज्जं पडिवज्जिय] पोट्टिलाचार्य के पास दीक्षा अंगिकार करके [अणगारो जाओ] मुनि हो गया ॥३३॥

मूलम्--तए णं से अणगारे पंचसमिइसमिओ तिगुत्तिगुत्तो गुत्तो गुत्तिंदिओ गुत्तबंभयारी जिइंदिओ जिय कोहमाणमायलोहो चत्तमाया नियाणमिच्छादंसणसल्लो जियरागदोसो चत्तावज्झाणो सण्णा चउक्करहिओ विगहावज्जिओ

मणवयकायदंडमुक्को धम्मपरायणो उवसग्गचउक्के समुवट्ठिए वि अक्खलिय-संजमुज्जमो महव्वयजुत्तो पंचविहसंज्झायसत्तो छज्जीवणिगायरक्खणदक्खो सत्तभयट्ठाणमुक्को अट्ठमयट्ठाणवियलो नवविहबंभचेरगुत्तिगुत्तो दसविह समणधम्मधरो एगारसंगाविऊ बारसविह तवजुत्तो सत्तरसविह संजमसंपन्नो बावीसविह दुस्सहपरीसहसहणधीरो निरीहो बहुविहतवं तवीअ। एवं इमो महातवस्सी मुणिवरो अरिहंतभत्तिप्पभिइवीसइठाणेसु पत्तेयं ठाणं पुणो पुणो समाराहिय दुल्लहं तित्थयरनामगोत्तकम्मं समुवज्जीअ ॥३४॥

शब्दार्थ—[तए णं से अणगारे] तदनंतर वह अणगार [पंचसमिइसमिओ] पांच समितियों से समित [तिगुत्तिगुत्तो गुत्तो] तीन गुप्तियों से गुप्त, [गुत्तिंदिओ] गुप्तइन्द्रियों का गोपन करनेवाले [गुत्तबंभयारी] गुप्तब्रह्मचारी [जिइंदिओ] जितेन्द्रिय [जियकोहमाण-

मायलोहो] क्रोध, मान, माया और लोभ को जीतनेवाले [चत्तमायानिदानमिच्छादंसणसल्लो] माया मिथ्यात्व और निदानशल्य का त्याग करनेवाले [जियरागदोसो चत्तावज्झाणो] रागद्वेष को जीतनेवाले अप्रशस्त ध्यान के त्यागी [सण्णा चउक्करहिओ] आहार आदि चार संज्ञाओं से रहित [विगहावज्जिओ] चार विकथाओं से वर्जित [मणवयकायदंडमुक्को] मन, वचन और काया के दण्ड से विमुक्त [धम्मपरायणो] धर्मपरायण [उवसग्गचउक्के] चार प्रकार के उपसर्ग के [समुवट्ठिए वि] उपस्थित होने पर भी [अक्खलियसंजमुज्जमो] संयम में अस्खलित रूप से उद्यम करनेवाले [महव्वयजुत्तो] महाव्रतों से युक्त [पंचविह सज्झायसत्तो] पांच प्रकार के स्वाध्याय में लीन [छज्जीवणिगायरक्खणदक्खो] षड्जीवनिकाय के रक्षण में दक्ष [सत्तभयट्ठाणमुक्को] सात प्रकार के भय के स्थानों से मुक्त [अट्ठमयट्ठाणवियलो] आठ मदस्थानों से रहित [नवविहबंभचेरगुत्तिगुत्तो] ब्रह्मचर्य की नौ गुप्तियों से गुप्त [दसविहसमणधम्मधरो] दस प्रकार के श्रमण धर्म

को धारण करनेवाले [एगारसंगविउ] ग्यारह अंगों के ज्ञाता [बारसविहतवजुत्तो] बारह प्रकार के तप से युक्त [सत्तरसविहसंजमसंपन्नो] सत्रह प्रकार के संयम से संपन्न [बावीसविहदुस्सहपरिसहसहणधीरो] बाइस प्रकार के दुस्सह परिषह को सहन करने में धीर [निरीहो बहुविह तवं तवीअ] निष्काम होकर अनेक प्रकार के तप तपने लगे [एवं इमो महातवस्सी] इस प्रकार इन महातपस्वी मुनिवरने [अरिहंतभत्तिप्पभिइवीसइट्ठाणेसु] अर्हद् भक्ति आदि वीस स्थानों में से [पत्तेयं ठाणं पुणो पुणो] प्रत्येक स्थान का पुनः पुनः [समाराहिय] आराधन करके [दुल्लहं तित्थयरनामगोत्तं कम्मं समुवज्जीअ] दुर्लभ तीर्थंकर गोत्र का उपार्जन किया ॥३४॥

मूलम्—अह य अंते दंतिंदिओ नितंतसंतसंतो नंदमुणी एवंविहं आराहणं आराहेइ ॥३५॥

शब्दार्थ—[अह य अंते दंतिंदिओ] उसके बाद इन्द्रियों का दमन करनेवाले

[नितंतसंतसंतो] और क्षान्ति आदि गुणों के सेवन से [नंदमुणी एवंविहं आराहणं आराहेइ] अत्यन्त शान्तचित्तवाले नन्दमुनिने अंत समय में इस प्रकार की आराधना की॥३५॥

मूलम्—१ कालविणयाइ—अट्ठप्पगारे नाणायारे जे अइयारा जाया, ते मणवयकाएहिं अहं निंदामि। २ निस्संकियाइं—अट्ठप्पगारे दंसणायारे जे केइ अइयारा जाता ते सयले मणवयकाएहिं वोसिरामि। ३ समिइगुत्तिरूवे अट्ठप्पगारे चरित्तायारे जे केइ अइयारा जाया ते सव्वे मणवयकाएहिं निंदामि। ४ बज्झब्भंतरभेयभिन्नं दुवालसविहं तवं चरमाणस्स मज्झ जाणमाणस्स वा अजाणमाणस्स वा जो कोइ अइयारो जाओ तं मणवयकाएहिं निंदामि। ५ धम्मायरणे केण वि पयारेण जं किंचि संतंपि वीरियं तं वीरियायाराइयारं मणवयकाएहिं निंदामि। ६ लोहाओ वा मोहाओ वा सुहुमाणं वा बायराणं वा

पाणीणं मए जा विराहणा कया, तं मणवयकाएहिं वोसिरामि। ७ हासभय-कोहलोहाईसु जइ मुसाभासणं कडं तं सव्वं मणसा वयसा कायसा निंदामि। ८ रागाओ वा दोसाओ वा अप्पं वा बहुयं वा सचित्तं वा अचित्तं वा एगओ वा परिसागओ वा जं किं च अदत्तं मए गहियं तं सव्वं वोसिरामि। ९ पुव्वं दिव्वमाणुसतेरिच्छं मेहुणं जइ मए मणसा वाएणं काएणं करणकारणाणु-मोयणेणं सेवियं तं सव्वं मणवयकाएहिं तिविहं तिविहेणं वोसिरामि। १० लोह-दोसाओ धणधन्नहिरण्णवत्थुदुपयचउप्पयपभिईणं अचित्ताणं वा सचित्ताणं वा जेसिं केसिं वत्थूणं अप्पो वा बहुओ वा पुव्वं परिग्गहिओ तं सव्वं तिविहं तिविहेणं मणवयकायजोगेणं वोसिरामि। ११ पुव्वं इत्थीपसुदासदासीधणधन्नहिरण्ण सुवण्णभवणवसणाईसु ममत्तं कयं तं सव्वं वोसिरामि। १२ जिब्भिंदिय-

वसंगएणं मए जइ रत्तीए चउव्विहाणं असणपाणखाइमसाइमाणं आहारो आहरिओ तं मणवयकाएहिं निंदामि। १३ कोहमाणमायालोहरागदोसकलहअब्भक्खाणपेसुन्नं परपरिवायाइयं जं किंचि मए आयरियं तं सव्वं मणवयकाएहिं वोसिरामि। १४ जइ मए कसायकलुसियत्तेण एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया हणिया पारिताविया उवद्दविया ठाणाओ ठाणं संकामिया फरुसवयणेहिं उद्धंसिया, देवा वा मणुस्सा वा तिरिक्खा वा विराहिया ते सव्वे जीवे खामेमि, खमंतु मं ते सव्वं जीवा, नो अज्जप्पभिइं एवं करिस्सामि त्ति अकरणयाए पच्चक्खामि। १५ अज्जप्पभिइं च णं अहं सयलं छज्जीवनिकायं समाणं पासेमि। सव्वे जीवा समदंसिस्स मज्झ भायरा एवं संति। १६ रूवजोव्वणधणकणगपियजणसमागमणाइं पवणखुद्धसिंधुतरंगा इव

चंचलाणि विज्जुकचवलाणि कुसग्गट्ठिय ओसबिन्दू विव अथिराणि य संति तत्थ को अणुरंजइ। १७ जम्मजरामरणणाणाविहाहिवाहिघत्थाणं पाणीणं तावकलावगिरि भेयणकुलिसं अरिहंतभासियं धम्मं विणा अस्सिं अवारे असारे संसारे अन्नं किंपि नालं ताणाए वा सरणाए वा हवइ १८ निमित्तमासाइय सयणा परयणा हवंति परयणा य सयणा हवंति न एत्थ जीवस्स कोवि सयणो वा परयणो वा, जइ एवं ताहे को विवेगी तत्थ मणायंपि मणं संजाएज्जा। १९ जीवा एगल्लो एवं कम्मसहयरो जायइ मरइ य, नो तेण सह कोइ आगच्छइ, गच्छइ य, नियकम्मोवणीयं चेव सुहं वा दुहं वा अणुहवइ, न अन्नो कोइ तं सुहयइ दुहयइ वा। २० जहत्थविवेगओ उ सरीरप्पाणं परोप्परं गिहगिहीणं विव अच्चंत भेओ विज्जइ, एवं धणधन्नपरियणाइपयत्थाणं

अप्पस्स य भिसं भेओ, तहवि मोहमुच्छिया मूढा जणा मुहेव अणत्तभूएसु सरीराईसु मुज्झंति, नो पुण जाणंति सरीरे अन्नं अप्पा अन्नोत्ति अत्थिमेयमंस-सोणियसणाउमुत्तपुरिसपुण्णे नवद्दारस्सवंतमले अमूइ आगारे अस्सिं सरीरे मइमं मणुस्सो कहं मुज्झिज्जा? अहो! मोहविजंभियं, जेणाक्कंतो जणो णो विजाणाइ, जं ओहिए पुण्णाए भाडगभवणामिव पियंतरंपि इमं सरीरं अवस्समेव चयणिज्जं हवइ, जयणसएण लालियं पालियंपि इमं सरीरं विणस्सरमेव अत्थि। देवाणं पलिओवमसागरोवमट्ठिइयं सरीरं होइ तंपि एगदिवसे चयणिज्जमेव हवइ, ताहे अम्हारिसाणं सरीरस्स का गणणा? एयारिसे खणियट्ठिइए सरीरे को मइमं मुज्झिज्जा? अओ धीरपुरिसेणं सरीरे एवं चयणिज्जं जेण पुणो सरीरं नो भवेज्जा, एवं मरियव्वं जेण पुणो मरणं न भवेज्जा ॥३६॥

शब्दार्थ—[कालविणयाइ] काल विनय आदि [अट्ठप्पगारे णाणायारे] आठ प्रकार के ज्ञानाचार में [जे अइयारा जाया] जो अतिचार लगे हों [ते मणवयकाएहिं अहं निंदामि] मैं मन, वचन काय से उनकी निंदा करता हूँ।

२ [निस्संकियाइ] निःशंकित आदि [अट्ठप्पगारे दंसणायारे] आठ प्रकार के दर्शन के अतिचारों में [जे केइ अइयारा जाता] जो कोई भी अतिचार हुए हों [ते सयले मणवयकाएहिं] तो उन सबका मन वचन और काया से [वोसिरामि] त्याग करता हूं।

३ [समिइगुत्तिरूवे] पांच समिति तीन गुप्तिरूप [अट्ठप्पगारे चारित्तायारे] आठ प्रकार के चारित्राचार में [जे केइ अइयारा जाया] जो कोई अतिचार लगे हों [ते सव्वे मणवयकायेहिं] उन सब की मन वचन और काया से [निंदामि] निन्दा करता हूँ।

४ [बज्झब्भंतरभेयभिन्नं] बाह्य और आभ्यंतर भेदवाले [दुवालसविहं तवं चरमाणस्स] बारह प्रकार के तप का आचरण करते हुए [मज्झ जाणमाणस्स वा अजाण-

माणस्स वा] जान में या अजान में [जो कोई अईयारो जाओ] जो कोई अतिचार हुआ हो, [तं मणवयकाएहिं निंदामि] मन वचन काया से उसकी निंदा करता हूँ।

५ [धम्मायरणे केण वि पयारेण] धर्म के आचरण में किसी भी प्रकार से [जं किंचि संतंपि वीरियं] किसी भी वीर्य का गोपन किया हो तो [तं वीरियायाराइयारं] उस वीर्याचार के अतिचारों की [मणवयकाएहिं निंदामि] मन वचन काया से निंदा करता हूँ।

६ [लोहाओ वा मोहाओ वा] लोभ से या मोह से [सुहुमाणं वा बायराणं वा] सूक्ष्म अथवा बादर [पाणिणं मए जा विराहणा कया] प्राणियों की मैंने जो विराधना की हो तो [तं मणवयकाएहिं वोसिरामि] उसका मन वचन काया से त्याग करता हूँ।

७ [हासभयकोहलोहाईसु] हास, भय, क्रोध, या लोभ आदि किसी भी कारण से [जइ मुसाभासणं कडं] यदि मृषावाद का सेवन किया हो [तं सव्वं मणसा वयसा कायसा निंदामि] तो मन वचन काया से उन सबकी निंदा करता हूँ।

८ [रागाओ वा दोसाओ वा] राग से अथवा द्वेष से [अप्पं वा बहुयं वा] अल्प या बहुत [सचित्तं वा अचित्तं वा] सचित्त अथवा अचित्त [एगओ वा परिसागओ वा] अकेले में या जनसमूह में [जं किंच अदत्तं मए गहियं तं सव्वं वोसिरामि] रहकर जो भी अदत्त ग्रहण किया हो उस सबका परित्याग करता हूँ।

९ [पुव्वं दिव्वमाणुसतेरिच्छं मेहुणं] पहले देव मनुष्य या तिर्यंच सम्बन्धी मैथुन का [जइ मए मनसा वाएण काएणं] मन वचन काया से [करणकारणाणुमोयणेणं सेवियं] कृत कारित या अनुमोदना से यदि सेवन किया हो [तं सव्वं मणवयकायजोगेहिं] उन सब का मन वचन और काय योग से [तिविहं तिविहेणं वोसिरामि] तथा तीन करण तीन योग से उसका त्याग करता हूँ।

१० [लोहदोसाओ] लोभदोष से प्रेरित होकर [धणधन्नहिरण्णसुवण्णवत्थुदुपयचउपयपभिईणं] धन, धान्य, हिरण्य, सुवर्ण, वस्तु, द्विपद, चतुष्पद आदि [अचित्ताणं वा

सचित्ताणं वा] अचित्त अथवा सचित्त [जेसिं केसिं वत्थूणं] जिन किन्हीं वस्तुओं का [अप्पो वा बहुओ वा] अल्प या बहुत [पुव्वं परिग्गहो परिग्गहियं तं सव्वं] जो पूर्व काल में परिगृहित किया हो उन सब का [तिविहं तिविहेणं मणवयकायजोगेणं वोसिरामि] मन वचन कायरूप तीन करण तीन योग से परित्याग करता हूँ।

११ [पुव्वं इत्थीपसुदासदासीधणधन्नहिरण्णसुवण्णभवणवसणाईसु] स्त्री, पशु, दास, दासी, धन धान्य, हिरण्य, सुवर्ण, भवन वस्त्र आदि में [ममत्तं कयं तं सव्वं वोसिरामि] जो ममत्व किया हो तो उन सब का त्याग करता हूँ।

१२ [जिब्भिंदियवसंगएण] जिह्वा इन्द्रिय के वशीभूत होकर [मए जइ रत्तीए] यदि मैंने रात्रि में [चउव्विहाणं असणपाणखाइमसाइमाणं] अशनपान–खाद्य–स्वाद्य-रूप चार प्रकार का [आहारो आहरिओ तं मणवयकाएहिं निंदामि] आहार किया हो तो मन वचन काया से उसकी निंदा करता हूँ।

१३ [कोहमाणमायालोहरागदोसकलहअब्भक्खाणे पेसुन्नपरपरिवायाइयं] क्रोध, मान, माया लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान पैशुन्य, परपरिवाद आदि किसी भी प्रकार का [जं किंचि मए आयरियं] जो कोई पाप का आचरण मैंने किया हो तो [तं सव्वं मणवयकायेहिं वोसिरामि] उन सब का मन, वचन, काया से त्याग करता हूँ।

१४ [जइ मए कसायकलुसियत्तेण] यदि मैंने कषाय से कलुषित होकर [एगिंदिया बेइंदिया] एकेन्द्रि द्विन्द्रीय [तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया] त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय पंचेन्द्रिय [हणिया पारिताविया] इन जीवों का घात किया (विराधना की) हो उन्हे परिताप पहुंचाया हो [उवद्दविया] किसी प्रकार का उपसर्ग किया हो [ठाणाओ ठाणं संकामिया] उन्हें एक स्थान से हटाकर दूसरे स्थान पर डाल दिया हो [फरुसवयणेहिं उद्धंसिया] कठोर वचन से उनकी भर्त्सना की हो [देवा वा मणुस्सा वा तिरिक्खा वा विराहिया] देवों, मनुष्यों और तिर्यंचों की विराधना की हो तो [ते सव्वजीवे खामेमि] उन सबसे क्षमा याचना करता हूँ।

[खमंतु मं ते सव्वे जीवा] वे सब जीव मुझे क्षमा प्रदान करे [नो अज्जप्पभिइं एवं करिस्सामि] अब से इस प्रकार का व्यवहार नहीं करूँगा। [त्ति अकरणयाए पच्चक्खामित्ति] इस प्रकार अकरण रूप से उसका प्रत्याख्यान करता हूँ।

१५ [अज्जप्पभिइं च णं अहं] आज से मैं [सयलं छज्जीवनिकायं समाणं पासेमि] छषट्जीवनिकाय के सब जीवों को समभाव से देखता हूँ। [सव्वे जीवा समदंसिस्स मज्झ भायरा एव संति] मुझ समदर्शी के लिये सभी जीव बन्धु के समान है।

१६ [रूव जोव्वणधणकणगापियजणसमागमगाइ] रूप, यौवन, धन, सुवर्ण, और प्रियजनों के समागम [पवणखुद्धसिंधुतरंगा इव चंचलाणि] वायु से क्षुब्ध समुद्र की लहरों की तरह चंचल है। [बिज्जुव्व चललाणि] बिजली की चमक के समान चपल है। [कुसग्गट्ठिय ओसबिन्दू विव अथिराणि य संति] और कुश की नोक पर स्थित ओस

होगा ? अर्थात् कोई नहीं ।

१७ [जम्मजरामरणणाणाविहाहिवाहिघत्थाणं] जन्म, जरा, मरण तथा नाना प्रकार की आधि–व्याधियों से ग्रस्त [पाणीणं] प्राणियों के [ताव कलावगिरिभेयणकुलिसं] ताप समूह रूप पर्वत को भेदने के लिये वज्र के समान [अरिहंतभासियं धम्मं विणा] अर्हत् भाषित धर्म के अतिरिक्त [अस्सिं अवारे असारे अन्नं] इस अपार व असार संसार में अन्य [किंपि नालं ताणाए वा सरणाए वा हवइ] और कोइ त्राण करनेवाला या शरण देनेवाला नहीं है।

१८ [निमित्तमासाइय सयणा परयणा हवंति] निमित्त मिलने पर स्वजन परजन बन जाते हैं। [परयणा य सयणा हवंति] और परजन भी स्वजन बन जाते हैं [न एत्थ जीवस्स कोवि सयणो वा परयणो वा;] इस संसार में न कोई अपना है, न पराया है [जइ एवं ताहे को विवेगी] और जब यह स्थिति है तो कौन विवेकी [तत्थ मणायंपि मणं संजोएज्जा] उनमें थोडा भी मन लगाएगा ?

१९ [जीवो एगल्लो एव कम्मसहयरो जायइ मरइ य] जीव अकेला ही अपने कृत कर्मों के साथ जन्मता और मरता है [नो तेण सह कोइ अगच्छइ गच्छइ य,] उसके साथ न कोई आता हैं न जाता है। [नियकम्मोवणीयं चेव सुहं वा दुहं वा अणुहवइ] अपने कर्मों से उदय में आये सुख या दुःख का अनुभव करता है। [न अन्नो कोइ तं सुहयइ दुहयइ वा] दूसरा कोई भी सुख या दुःख नहीं पहुँचा सकता।

२० [जहत्थ विवेगओ ३] वास्तविक विवेक दृष्टि से देखा जाय तो [सरीरप्पाणं परोप्परं गिहगिहीणं विव अच्चंत भेओ विज्जइ] शरीर और आत्मा में गृह और स्वामी के समान अत्यन्त भिन्नता है [एवं धणधन्नपरियणाइ पयत्थाणं अप्पस्स य भिसं भेओ] इसी प्रकार धन, धान्य, परिवार आदि भी आत्मा से अत्यन्त भिन्न है [तहवि मोहमुच्छिया मूढा जणा मुहेव अणत्तभूएसु सरीराईसु मुज्झंति] फिर भी मोह से मूर्छित हुए मूढ प्राणी वृथा ही शरीर आदि में आसक्त होते हैं। [नो पुण जानंति सरीरं अन्नं

अप्पा अन्नोत्ति] वे नहीं जानते हैं कि शरीर भिन्न है और आत्मा भिन्न है। [अत्थिमेयमंससोणियसणाउमुत्तपुरीसपुण्णे] यह शरीर अस्थि, मेद, मांस, रुधिर, स्नायु. मूत्र और मल से परिपूर्ण है [नवद्दारस्सवंतमलो] इसमें से नौ द्वारों से अशुचि पदार्थ झरते हैं [असुइ आगारे अस्सि सरीरे] अशुचि के अगार सम इस शरीर पर [मइमं मणुस्सो कहं मुज्झिज्जा ?] कौन मतिमान् मोहित होगा ? [अहो ! मोहविजंभियं] किन्तु मोह के वशीभूत होकर [जेणाक्कंतो जणो णो विजाणइ] मनुष्य यह नहीं जान पाता कि [जं ओहिए पुण्णाए] अवधि के पूरी होने पर [भाडगभवनमिव] भाडे के मकान के समान [पियतरं पि इमं सरीरं अवस्समेव चयणिज्जं हवइ] अतिशय प्रिय इस शरीर को अवश्य ही त्याग करना पडता है ! [जयणसयेण लालियं पालियं पि] इस शरीर का लालनपालन करने के लिये सैकडों यत्न किये जाए [इमं सरीरं विनस्सरमेव अत्थि] फिर भी यह शरीर तो विनाशशील ही है ! [देवाणं पलिओवमसागरोपमट्ठिइयं सरीरं होइ] देवों के शरीर पल्योपम और

सागरोपम तक रहनेवाला होता है [तंपि एगदिवसे चयणिज्जमेव हवइ] किन्तु एक न एक दिन उसे भी छोडना ही पडता है। [ताहे अम्हरिसाणं सरिरस्स का गणणा ?] तो फिर हमारे शरीर की क्या गिनती है। [एयारिसे खणियट्ठिइए] ऐसे क्षणस्थायी [सरीरे को मइमं मुज्झिज्जा ?] शरीर पर कौन बुद्धिमान् मोह धारण करेगा [अओ धीरपुरिसेण सरीरं] अतएव-धीर पुरुषों को शरीर का [चयणिज्जं जेण पुणो सरीरं नो भवेज्जा] इस प्रकार त्याग करना चाहिये जिससे पुनः शरीर की उत्पत्ति ही न हो। [एवं मरियव्वं] इस प्रकार मरना चाहिये कि [जेण पुणो मरणं न भवेज्जा] जिससे फिर कभी मरना ही न पडे ॥३६॥

मूलम्—१ दयासायरा विस्सभायरा भगवंतो अरिहंतो मे सरणमत्थु। २ असरीरा जीवघणा सिद्धा भगवंतो मे सरणमत्थु। ३ निक्कारणं जगजीवजोणी जायरक्खणकज्जसाहवो साहवो मे सरणमत्थु। ४ मुक्करागदोसो केवलिपन्नत्तो धम्मो मे सरणमत्थु।

एयाणि चत्तारि सरणाणि दुक्खहरणाणि मोक्खकारणाणि मज्झ होंतु। अज्जप्पभिइं मम माया जिनवाणी, पिया निग्गंथो गुरु, देवो जिनदेवो, धम्मो अरिहंतभासिओ, सोयरिया साहुणो, बंधवा साहम्मिया संति, ते विना अण्णे सव्वे वि अस्सिं जगम्मि जालतुल्ला। इमाए चउवीसाए ओइण्णे उसभाई तित्थयरे जिणे य अहं वंदामि नमंसामि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि। जणसंकप्पकप्पतरू तित्थयरनमुक्कारो सयलसत्थसारो संसारीणं पाणीणं बोहिलाहट्ठं संसारच्छेयणट्ठं च हवइ १ झाणानलदड्ढभवपरंपरा संजायकम्मिंधणे भगवंते सिद्धे नमंसामि २ भवभयच्छेयणसययतप्परत्तेण धरियपवयणे पंचविहाय पालणसमत्थे आयरिए नमंसामि। ३ समस्सियसमत्थसुए सुयज्झावए उवज्झाए नमंसामि। ४ सवइ-

नासियभवलक्खे सत्तावीससाहूगुणविसारए अट्ठारससहस्ससीलंगरहधारए साहू नमंसामि। ८ एसो पंचणमुक्कारो जगजीवजीवणसारो सव्वपावविणासणगारो सव्वमंगलागारो अत्थि। अज्जप्पभिइं अहं सव्वं सावज्जजोगं जाव जीवं मणोवाक्काएहिं वोसिरामि। जावज्जीवं चउव्विहाहारं वोसिरामि। अंतिमुच्छासमए सरीरं पि वोसिरामि ॥३७॥

शब्दार्थ--[दयासायरा] दया के सागर [विस्सभायरा] विश्व के भ्राता [भगवंतो अरिहंता मे सरणमत्थु] अरिहंत भगवंत मेरे लिए शरण हो।

२ [असरीरा जीवघणा सिद्धा भगवंतो मे सरणमत्थु] शरीररहित जीवघण--जीवप्रदेशमय सिद्ध भगवान मेरे लिए शरण हों।

३ [निक्कारणं जगजीवजोणी जायरक्खणकज्जसाहवो मे सरणमत्थु] निष्कारण

भाव से जगत के जीवों की रक्षा करनेवाले साधुजन मेरे लिए शरण हों।

४ [मुक्करागदोसो केवलिपण्णत्तो धम्मो मे सरणमत्थु] रागद्वेष से मुक्त केवलि प्ररूपित धर्म मेरे लिए शरण हो।

[एयाणि चत्तारि सरणाणि दुक्खहरणाणि मोक्खकारणाणि मज्झ होंतु] ये दुःख का हरण करनेवाले और मोक्ष के कारण चार शरण मेरे लिए हो।

[अज्जप्पभिइं मम माया जिणवाणी] आज से जिनवाणी मेरी माता है। [पिया निग्गंथो गुरु] निर्ग्रन्थ गुरु मेरे पिता हैं [देवो जिनदेवो] जिनदेव मेरे देव हैं, [धम्मो अरिहंतभासिओ] अरिहंत भाषित धर्म मेरा धर्म है [सोयरिया साहुणो] साधु मेरे सहोदर है [बंधवा साहम्मिया संति] साधर्मी मेरे बान्धव हैं। [ते विणा अन्ने सव्वे वि] इनके विना अन्य सभी [असिंस जगम्मि जालतुल्ला] इस जगत में बन्धन के समान हैं।

[इमाए चउवीसीए ओइण्णे] इस चोवीसी में अवतीर्ण हुए [उसभाई तित्थयरे]

ऋषभ आदि तीर्थंकरों को

[जिणे य अहं वंदामि नमंसामि] जिनेश्वर देवों को वंदन करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। [पज्जुवासामि] उनकी उपासना करता हूँ [कल्लाणं, मंगलं] क्योंकि वे कल्याण मंगलमय [देवयं चेइयं] देव और ज्ञानमय हैं [जनसंकप्पकप्पतरू] मनुष्यों के संकल्प की पूर्ति करने के लिए कल्पवृक्ष के समान [तित्थयरनमुक्कारो] तीर्थंकरों को किया हुवा नमस्कार [सयलसत्थसारो] सब शास्त्र का सार है। [संसारीणं पाणीणं] वह संसार के प्राणियों को [बोहिलाहट्ठं संसारच्छेयणट्ठं च हवइ] बोधिलाभ के लिये और संसार का अंत करने के लिए होता है। [झाणानलदड्ढभवपरंपरासंजायकम्मिंधणे] जिन्होंने भवपरम्परा में उपार्जित कर्मरूपी इन्धन को शुक्लध्यानरूपी अग्नि से भस्म कर डाला है [भगवंते सिद्धे नमंसामि] ऐसे जो सिद्ध भगवन्त है उनको नमस्कार हो।

[भवभयच्छेयणसययतप्परत्तेण] जीवों के संसारजनित भय के उन्मूलन करने में

सर्वदा तत्पर रहने के कारण जिन्होंने [धरियपवयणे] प्रवचन—जिनवाणी को धारण किया है। [पंचविहायारपालणसमत्थे] जो ज्ञानाचार दर्शनाचार आदि पांच आचार के पालन करने में समर्थ हैं। [आयरिए नमंसामि] ऐसे आचार्यों को नमस्कार हो। [समस्सिय समत्थसुए] समस्तश्रुतों—आगमों को जिन्होंने यथावत् ग्रहण करलिया है अर्थात् सकल आगमों के ज्ञाता [सुयज्झावए उवज्झाए नमंसामि] तथा जो आगमों को पढानेवाले है ऐसे उपाध्याय को वन्दन करता हूँ।

[सवइनासियभवलक्खे] शीघ्र ही लाखों भवों का अन्त करनेवाले [सत्तावीससाहु-गुणविसारए] सत्तावीस साधु के गुणों में विशारद [अट्ठारससहस्ससीलंगरहधारए [अठा-रहहजार शीलांगरथ को धारण करनेवाले [साहू नमंसामि] साधू को नमस्कार करता हूँ।

[एसो पंच नमुक्कारो] यह पंच नमस्कार [जगजीवजीवणसारो] जगत के समस्त जीवों के लिए जीवन का सार है [सव्वपावविणासणगारो] समस्त पापों को नष्ट करनेवाला है

[सव्वमंगलागारो अत्थि] और सकल मंगलों का घर है।

[अज्जप्पभिइं अहं सव्वं सावज्जं जोगं] आज से मैं सब प्रकार के सावद्ययोग को, [जाव जीवं मणोवाक्कायेहिं वोसिरामि] जीवन पर्यन्त मन, वचन व काय से त्याग करता हू। [जावज्जीवं चउव्विहाहारं वोसिरामि] साथ ही यावज्जीवन के लिए चार प्रकार के आहार का त्याग करता हूँ। [अंतिमुच्छाससमए सरीरंपि वोसिरामि] और अन्तिमश्वासोच्छ्वास के समय शरीर का भी त्याग करता हूँ॥३७॥

मूलम्—एवं से नंदमुणी दुक्कम्मनिंदणा पाणिखमावणा—भावणा—चउस्सरण-पंचनमुक्काराणसण—भेयाओ छव्विहं आराहणं आराहिय कमेण सयधम्मायरियं साहू साहुणी य खमावेइ। एवं वरिससयसहस्साइं अणवरयमासक्खमणेणं निरइयारं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झोसित्ता

सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते पणवीससयसहस्साइं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता कालमासे कालं करीअ ॥३८॥

शब्दार्थ—[एवं से नंदमुणी] इस प्रकार उस नन्दमुनिने [दुक्कम्मनिंदणा] दुष्कर्मों की निंदा [पाणिक्खमावणा--भावणा] प्राणी से खमत खामना, भावना [चउस्सरण] चार शरण ग्रहण करना [पंचणमुक्कारा] पंच नमस्कार [अणसण] अनशन [भेयाओ छव्विहं आराहणं आराहिय] इन भेद युक्त छ प्रकार की आराधना करके [कमेण सयधम्मायरियं साहू साहुणी य खमावेइ] क्रम से अपने धर्माचार्य को, साधु और साध्वियों को खमाया [एवं वरिससयसहस्साइं] इस प्रकार एक लाख वर्ष तक [अणवरयमासक्खमणेणं] निरंतर मास मास खमण की तपश्चर्या के साथ [निरइयारं सामण्णपरियागं] अतिचाररहित साधु पर्याय का [पाउणित्ता] पालन करके [मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झोसित्ता] एक मास की संलेखणा से अपनी आत्मा को भावित करके [सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता]

अनशन से साठ भक्त का छेद करके [आलोइयपडिक्कंते] आलोचना-प्रतिक्रमण करके [पणवीससयसहस्साइं] पच्चीसलाख वर्ष की [सव्वाउयं पालइत्ता कालमासे कालं करीअ] समग्र आयु पूर्ण करके नन्दनमुनि काल धर्म को प्राप्त हुए ॥३८॥

मूलम्—तए णं नंदमुणी छव्वीसइमे भवे पाणए कप्पे पुप्फुत्तरवडिंसए विमाणे मउडमंडियमउली कुंडलालंकियकण्णो पलंबहारविराइयवच्छत्थलो मुत्तामालाकरंबियकंठदेसो परिहियदिव्ववत्थो सियमेहे विज्जूविव विज्जोयमाणो निच्चलमच्छजुयलमिव लोयणजुयलं धरमाणो वीसइ सागरोवमट्ठिइय महिड्ढियदेवत्ताए उववण्णो। तउप्पत्तिसमए कप्परुक्खाहिंतो पुप्फाणि वरिसीअ। दुंदुहीओ आहयाओ। लहु जलबिंदू पक्खिवमाणो नंदणवणजाणं पसूणाणं परागमाक्खिवमाणो सीयलमंदसुगंधिपवणो वहीअ। तत्थ णं सो जया

सओवरिट्ठियं देवदूसमवणीय उवविसइ, ताहे सो अकम्हा उवणीयं विमाणं सोहमाणं देवगणं च पासइ। एवं महासमिद्धिं निरिक्खिय विम्हिओ वितक्क-जाले पडिओ चिंतेइ—इमं सव्वं मए केण तवसंजमाइ धम्मेण लद्धपत्तं अभि-समण्णागयं—त्ति। तओ ओहिं पउंजइ। ओहिं पउंजमाणो सयपुव्ववुत्तंतं सरइ। तेण सो मणंसि चिंतेइ—अहो! अरिहंतधम्मस्स केरिसो पहावो अत्थि, जं तेण पहावेण एरिसा उराला दिव्वा देवरिद्धि लद्धा पत्ता अभिसमण्णा-गया, मम सेवगीभूया सव्वे देवा संमिलिय एत्थ आगया। एत्थंतरे ते देवा बद्धंजलिया एवमवाइंसु—हे सामी! हे जगानंदा! हे जगमंगलकरा! तुवं जएहिं विजएहिं, सुहेण चिरं चिट्ठेहि तुवं अम्हाणं सामी जसंसी रक्खगो य आसि। इमा सव्वा दिव्वा देविड्ढी तुम्हाणं चेव। तओ सो देवो सोहमाणे तस्सि

सयविमाणे नानाविहाइं दिव्वाइं देवभोगाइं भुंजइ। एवं सो तत्थ वीसइसागरोवमट्ठिइयपरमाउयं जाव भावितित्थयरत्तेण निम्मोहो होऊण सुरलोगोचियसुहमणुभवंतो चिट्ठीअ ॥३९॥

शब्दार्थ—[तए णं से नंदमुणी] उसके बाद नन्दमुनि काल करके [छव्वीसइमे भवे पाणए कप्पे] छव्वीसवें भव में प्राणत कल्प में [पुप्फुत्तरवडिंसए विमाणे] पुष्पोत्तरावतंसक नामक विमान में [मउडमंडियमउली] मुकुट से मंडित शिरवाला [कुंडलालंकियकण्णो] कुंडलो से अलंकृत कानवाला [पलंबहारविराइयवच्छत्थलो] लंबे लटकते हुए हार से सुशोभित वक्षःस्थलवाला [मुत्तामाला करंबियकंठदेसा] मोतियों की माला से युक्त कण्ठवाला [परिहियदिव्ववत्थो] दिव्य वस्त्र को धारण किये हुए [सियमेहे विज्जूविव विज्जोयमाणो] श्वेतमेघो में विद्युत् के जैसे प्रकाशमान [निच्चलमच्छजुयलमिव लोयणजुयलं धर-

माणो] निश्चल मत्स्ययुगल के जैसे नयनयुगल को धारण करनेवाला [वीसइसागरोवमट्ठिइयमहिड्ढियदेवत्ताए उववण्णो] ऐसा बीस सागरोपम की स्थितिवाला महर्द्धिक देवरूप से उत्पन्न हुआ ।

[तउप्पत्तिसमये] उसको उत्पत्ति के समय [कप्परुक्खाहिंतो पुप्फाणि वरिसीअ] कल्पवृक्षो से फूलों की वर्षा हुइ [दुंदुहीओ आहयाओ] दुंदुभियों का घोष हुआ । [लहूझलबिंदूपक्खिवमाणो] बारीक बारीक जलबिन्दुओं की वर्षा करता हुआ । [नंदणवणजाणं पसूणाणं] तथा नन्दनवन के फूलों के [परागमाक्खिवमाणो] पराग को उडाता हुआ [सीयलमंदसुगंधिपवणो वहीअ] शीतल मंदमंद पवन बहने लगा ।

[तत्थ णं सो जया] वह देव जब जब [सओवरिट्ठियं देवदूसमवणीय उवविसइ] अपने उपर के देवदूष्य (वस्त्र) को हटाकर बैठा तो [ताहे सो अकम्हा उवणीयं विमाणं सोहमाणं देवगणं च पासइ] अकस्मात् अपने समीप स्थित विमानों और देव समूह को

देखकर [विम्हिओ वितक्कजाले पडिओ चिंतेइ] विस्मित हो गया और अपने विषय में तर्क वितर्क करता हुआ सोचने लगा—[इमं सव्वं] यह सब [मए केण तवसंजमाइ-धम्मेण] मुझे किस तप—संयम आदि रूप धर्म के प्रभाव से [लद्धा, पत्ता, अभिसमण्णा-गयं] लब्ध हुआ है, प्राप्त हुआ है और मेरे उपभोगयोग्य हुआ है। [तओ ओहिं पउं-जइ] तब उसने अवधिज्ञान का उपयोग लगाया [ओहिं पउंजमाणो सयपुव्ववुत्तंतं सरइ] अवधिज्ञान का उपयोग लगाते हुए उन्हें अपना पूर्वकालीन वृत्तान्त स्मरण हो आया। [तेण सो मणंसि चिंतेइ] तब वह मनमें सोचने लगा [अहो! अरिहंतधम्मस्स केरिसो पहावो अत्थि] अहो! अरिहंत धर्म का कैसा प्रभाव है? [जं तेण पभावेण एरिसा उराला] उसी धर्म के प्रभाव से मुझे ऐसी विशाल [दिव्वा देवरिद्धि लद्धा पत्ता अभिसमण्णागया] दिव्य देवरिद्धि लब्ध हुई है, प्राप्त हुइ है, ये मेरे उपभोग के योग्य हुइ है। [मम सेवगीभूया सव्वे देवा संमिलिय एत्थ आगया] ये सब देव सम्मिलित होकर मेरे

सेवक बन कर यहां आये हैं। [एत्थंतरे ते देवा] इतने में वे देव [बद्धंजलिया एवमवाइंसु] हाथ जोडकर इस प्रकार कहने लगे [हे सामी! जगानंदा! हे जगमंगलकरा!] हे स्वामिन्! हे जगत् को आनन्द देनेवाले हे जगत का मंगल करनेवाले! [तुवं जएहि, विजएहि,] आप की जय हो, आपकी विजय हो [सुहेण चिरं चिट्ठेहि] आप सुखपूर्वक चिरकाल तक यहां रहें [तुवं अम्हाणं सामी जसंसी रक्खगो य आसि] आप हमारे स्वामी हैं यशस्वी और रक्षक हैं। [इमा सव्वा दिव्वा देविड्ढी तुम्हाणं चेव] यह सभी देव सम्पत्ति आपकी ही है।

[तओ सो देवो] उसके बाद वह देव [सोहमाणे तस्सि सयविमाणे] अपने सुशोभित देवविमान में [णाणाविहाइं दिव्वाइं] नाना प्रकार के दिव्य [देवभोगाइं भुंजइ] देवों के भोगों को भोगने लगा। [एवं सो तत्थ वीसइसागरोवमट्ठिइयपरमाउयं] इस प्रकार वह देव यहां वीस सागरोपम की आयु तक [जाव भावितित्थयरत्तेण निम्मोहो

होऊण] भावी तीर्थंकर होने से निर्मोह—अनासक्त होकर [सुरलोगोच्चिय सुहमणुभवंतो चिट्ठिअ] देवलोक के योग्य सुखों का अनुभव करते हुए रहने लगे ॥३९॥

॥ इति नयसारादि षड्विंशति भव कथा ॥

अथ सप्तविंशतितम—महावीरभवकथा

मूलम्—अस्सिं चेव सयलंतरीवदीवे मज्झजंबुद्दीवे दीवे भरहहेमवयखित्त-सीमाकारगस्स भूनिमग्गपंचवीसइजोयणस्स जोयणसयोच्छियस्स एगूणवीसइ भागविभत्तेगजोयणदुवालसभागाहियबावण्णजोयणुत्तरेगसहस्सजोयणविक्खंभ - स्स, पुरत्थिम—पच्चत्थिमेणं एगूणवीसइभागविभत्तेगजोयणसद्धपंचदसभागा-हियपण्णाससहियतिसयजोयणुत्तरपंचसहस्सायामबाहस्स सव्वत्थ तुल्लवित्था-रस्स गगणमंडलुल्लिहियरयणमयएगारसकूडोवसोहियस्स तवणिज्जमयतलवि-

विहमणिकणगमंडियतडदसजोयणोगाढपुव्वपच्छिमजोयणसहस्सायामदक्खिणो-
त्तरपंचसयजोयणवित्थरियपउमद्दहोवसोहियसिरमज्झभागस्स हेममयस्स चीणप-
ट्टवण्णस्स कप्पपायवसेणिरमणिज्जपुव्वावरपज्जंतेहिं लवणजलहिजलसंफा-
सवओ चुल्लहिमवओ दक्खिणाए दिसाए निसि निसागरोव्व भरहमज्झमज्झा-
सीणो पुव्वाभिहाणो धरणिमणिमण्डलायमाणो विविहणयणईमालालंकियवेसो
देसो अत्थि तत्थ गोट्ठालद्धगामप्पइट्ठा, अभिरामा गामा य पईयमाणणगर-
विब्भमा, णगराणि य खेयरणगरसोयराणि जत्थ किसीवलेहिं सइं वावियाइं
अलुत्ताइं धन्नाइं लूणाइंपि दुव्वाव पुणो पुणो परोहंति । जणा य सुसमाकाल-
जाया इव णिरामया णिक्केसभया चिराउसो संतोसजुसो सभावधम्मपुसो परि-

वसंति। उव्वी य गुव्वी सव्वत्थ उव्वरा चेव। जलदो य समए चेव जलदत्तं सच्चावेइ ॥१॥

शब्दार्थ—[अस्सिं चेव सयलंतरीवदीवे मज्झजंबुद्दीवे दीवे भरहहेमवयखित्तसीमाकारगस्स भूनिमग्गपंचवीसइ जोयणस्स] समस्त द्वीपों में दीप के समान इसी जंबुद्वीपनामक द्वीप में, भरत और हैमवत क्षेत्र की सीमा करनेवाला चुल्लहिमवंत नाम का पर्वत है। यह पर्वत पृथ्वी में पच्चीस योजन गहरा है [जोयणसयोच्छियस्स] सौ योजन उँचा है [एगूणवीसइभागविभत्तेगजोयणदुवालसभागाहियबावण्णजोयणुत्तरेग सहस्सजोयणविक्खंभस्स] १०५२$\frac{१२}{१९}$ एक हजार बावन योजन और एक योजन के उन्नीसिया बारह भाग प्रमाण चौडा है। [पुरत्थिम—पच्चत्थिमेणं एगूणवीसइभागविभत्तेगजोयणसद्धपंचदसभागाहियपण्णाससहियतिसयजोयणुत्तरपंचसहस्सायामबाहस्स] और पूर्वपश्चिम से पांच हजार तीनसौ पचास योजन और एक योजन के उन्नीसिया साढे पन्द्रह

भाग प्रमाण ५३५०$\frac{१५}{१९}$॥ लम्बी बाहुवाला है। [सव्वत्थ तुल्लवित्थारस्स गगनमंडलुल्लिहियरयणमयएगारसकूडोवसोहियस्स] सब जगह समान विस्तारवाला है, आकाशमण्डल को स्पर्श करनेवाले ग्यारह रत्नमय कूटों से सुशोभित है। [तवणिज्जमयतलविविहमणिकणगमंडियतडदसजोयणोगाढपुव्वपच्छिमजोयणसहस्सायामदक्खिणोत्तरपंचसयजोयणवित्थरियपउमदहोवसोहियसिरमज्झभागस्स] ऊपर मध्यभाग में सुवर्णमय तलवाले, नानामणि और सुवर्ण से शोभायमान तटवाले, दस योजन गहरे पूर्व–पश्चिम में एक-हजार योजन लम्बे और दक्षिण–उत्तर में पांचसौ योजन विस्तृत पद्मनामक ह्रद से शोभित है [हेममयस्स चीणपट्टवण्णस्स] चाइनासिल्क के समान किंचित् पीतवर्ण सुवर्णमय है। [कप्पपायवसेणिरमणिज्जपुव्वावरपज्जंतेहिं] और उसके कल्पवृक्षों की कतारों से रमणीय पूर्वी तथा पश्चिमी छोर [लवणजलहिजलसंफासओ] लवणसमुद्र का स्पर्श करते हैं। [चुल्लहिमवओ दक्खिणाए दिसाए निसि निसागरोव्व भरहमज्झमज्झा-

सीणो] इस चुल्लहिमवंत पर्वत से दक्षिण दिशा में रात्रि में चन्द्रमा के समान भरत क्षेत्र के मध्य में स्थित [पुव्वाभिहाणो धरणिमणिमंडलायमाणो विविहणयनई-मालालंकियवेसो देसो अत्थि] पृथ्वी के मणिमय आभूषण के समान, अनेक नदों एवं नदियों से सुशोभित पूर्व नामक देश है। [तत्थ गोट्ठालद्धगामप्पइट्ठा] उस देश के गोष्ठ-(गायों के बाडे) ग्रामों की प्रतिष्ठा को प्राप्त किये हुए थे। अर्थात् वे ग्राम के समान जान पडते थे। [अभिरामा गामा य पईयमाण णगरविब्भमा] वहां के ग्रामों में नगर की सी शोभा प्रतीत होती थी [णगराणि य खेयरणगरसोयराणि] और नगर विद्याधरों के नगर के समान थे। [जत्थ किसीवलेहिं सइं वावियाइं अलुत्ताइं धन्नाइं] वहां के किसान एक बार धान्य बो देते थे तो वह प्रायः नष्ट नहीं होते थे और [लूणाइंपि] उपर से काट लेने पर भी [दुव्वाव] दूब के जैसे [पुणो पुणो परोहंति] पुनः पुनः बढते थे। [जणा य सुसमाकालजाया इव गिरामया] वहां के निवासी सुषमा काल में

उत्पन्न होनेवालों के समान रोगरहित [निक्केसभया] क्लेश एवं भय से रहित [चिराउसो संतोसजुसो] दीर्घजीवी संतोष का सेवन करनेवाले [सभावधम्मपुसो] और स्वभाव से ही धर्म का पोषण करनेवाले [परिवसंति] वहां निवास करते थे। [उव्वी य गुव्वी सव्वत्थ उव्वरा चेव] वहां की उत्तम भूमि सब प्रकार के धान्य को उत्पन्न करनेवाली–उपजाऊ थी [जलदो य समए चेव जलदत्तं सच्चावेइ] मेघ उचित समय पर ही अपनी जल देने की सच्चाई प्रमाणित करते थे। अर्थात् समय पर मेघ बरसते थे ॥१॥

मूलम्–तत्थ णगरीगरीयसी लच्छीलीलालयायमाणा खत्तियकुंडग्गामाभिहाणा सयलसिप्पकलाभासुरेहिं सुरेहिं सयचाउरीचुंचुत्तं पज्जवसाएउं कप्पिया इव पडिभासइ। तत्थ निकेयणेसु कंचनकेउकुंभकिरणा पावरिसेण्णकायंबिणी सोयामणीविब्भमं कलयंति। तमस्सिणीए तरलतरतरुणकिरणो रोहिणीरमणो

चंदकंतमणिगणसयलकप्पियवासपासायसंकंतो कत्थूरीपूरपूरियणिरावरणराय-यभायणविब्भमं भयइ। कंचणखंडरइओ सुंदरागारो पागारो सगीयाणप्पसिप्प-कलाकोसलादिदंसइसाए देवासिप्पिकप्पिओव्व भाइ। उभयवो पडिबिम्बिय-रयणसोवाणसऊहेहिं तडागाइं सलीलं निबद्ध सेउव्व आभाइ, णिसि दिवा य पागारो राययकंचणेहिं कविसीसगेहिं ससिभाणुभासुरपडिबिंबेहिं सुमेरू विव रायइ। वाससयणे अनलनिहिय धूमगंधाहिं वासिओ पवणो खेयरंगणंगसंगओ खेयरीणवि मणो अमंदमानंदयइ। एगायपत्तायमाण–आरहयधम्मे तत्थ नगरे हम्मेठिया बालिया कीलासुगसिसुणोऽवि महामहिमासिरिमंतअरिहंतथुइं सिक्खावेंति। मज्झण्हे अंबरमणी अंबरंगणे तन्नगरसुसमां दिदिक्खू विव विसम्मइ। अवणिभुओ भवणोवरियणज्झओ अमरावइं तिरक्करेइ विव।

महुमज्जियमाहीगमहुरस्सरेहिं गायंतीओ णगरसीमंतिणीओ किंनरी अवि अहरी कुव्वंति ॥२॥

शब्दार्थ--[तत्थ णगरीगरीयसी] उस पूर्व नामक देश में नगरीयों में श्रेष्ठ [लच्छीलीलालयायमाणा] तथा लक्ष्मी के क्रीडागृह के समान [खत्तियकुंडग्गामाभिहाणा] क्षत्रियकुण्डग्राम नामकी नगरी थी। [सयलसिप्पकलाभासुरेहिं सुरेहिं] वह ऐसी प्रतीत होती थी कि जैसे सकल शिल्पकला से सम्पन्न देवोंने [सय चाउरीचुंचुत्तं] अपनी चतुराई बतलाने के लिए ही [पज्जवसाएउं] उस नगरी का [कप्पियाइव] निर्माण किया हो ऐसा [पडिभासइ] प्रतीत होता था। [तत्थ निकेयणेसु] वहां के मकानों पर [कंचणकेउकुंभकिरणा] स्वर्ण की बनी हुई ध्वजाओं की और सुवर्णमय कुंभ कलशों की किरणें ऐसी चमकती थी, मानो [पावरिसेण्णकायंबिणीसोयामणी विब्भमं कलयंति] वर्षाकाल के मेघों में विजली चमक रही हो। [तमस्सिणीए तरलतरतरुणकिरणो] रात्रि में अत्यन्त फैलने-

वाली प्रौढ किरणों से युक्त [रोहिणीरमणो] चन्द्रमा [चंदकंतमणिगणसयलकप्पिय वासपासायसंकंतो] जब चन्द्रकांतमणियों के समूह के खण्डों से बने हुए प्रासादों पर प्रतिबिम्बित होता था तो ऐसा जान पडता था कि मानो [कत्थूरी पूरपूरियणिरावरण-राययभायणविब्भमं भयइ] कस्तूरी से भरा और खुला रक्खा चान्दी का पात्र हो।

अब उस नगरी के कोट आदि का वर्णन कहते हैं—

[कंचणखंडरइओ] सोने की इंटों का बना हुआ [सुंदरागारो] सुन्दर आकारवाला [पागारो] उस नगरी का कोट [सगीयाणप्पसिप्पकलाकोसलादिदंसइसाए देवसिप्पि-कप्पिओव भाइ] ऐसा प्रतीत होता था जैसे अपनी शिल्पकला की अत्यन्त निपुणता को प्रदर्शित करने की इच्छा से किसी देवशिल्पीने बनाया हो? [उभयओ पडिबिम्बि-यरयणसोवाणमऊहेहिं तडागाइं सलिलं निबद्धसेउव्व आभाइ] सरोवर आदि के दोनों किनारों पर प्रतिबिम्बित होनेवाली रत्नों की सीढियों की किरणों से सरोवर आदि का

जल ऐसा शोभित होता था जैसे जल पर पुल बना हो ! [णिसि दिवा य पागारो रायणकंचणेहिं] कोट पर चांदी-सोने के एक ही कतार में [कविसीसगेहिं] जो कंगूरे बने हुए थे उन पर रात्रि में [ससिभाणुभासुरपडिबिम्बेहिं सुमेरू विव रायइ] चन्द्रमा का और दिन में सूर्य का चमकदार प्रतिबिम्ब पडता था इस कारण वह कोट सुमेरू सरीखा दिखाई देता था ! [वाससयणे अनलनिहिय धूमगंधाहिवासिओ] निवासगृहों को सुगन्धित करने के लिये वहां अग्नि में डाले हुए धूप की गन्ध से सुवासित [पवणो] पवन [खेयरंगणंगसंगओ खेयरीणवि मणो अमंदमाणंदयइ] जब विद्याधरियों के अंग को छूता था तो उनके चित्त को अत्यन्त आल्हाद पहुंचता था, [एगायपत्ताय माण आरहयधम्मे तत्थणगरे] साधारण गृहस्थ की तो बात ही क्या है ! एकच्छत्र के समान पालन किये जानेवाले जैनधर्म से युक्त उस क्षत्रिय कुण्डग्राम नाम की नगरी में [हम्मेठिया बालिया] धनवानों के घरों की बालिकाएँ [कोलासुगसिसुणोऽवि] क्रीडा

के लिये पाले हुए तोतों के बच्चों को भी [महामहिमसिरिमंतअरिहंतथुइं सिक्खावेंति] महाप्रभावशाली श्री जिनेन्द्रदेव की स्तुतियां सिखाया करती थीं। तो मनुष्य बच्चों का तो कहना ही क्या! [मज्झण्हे अंबरमणी अंबरंगणे तन्नगरसुसमां] मध्याह्न के समय सूर्य उस क्षत्रियकुण्डग्राम नगरी की शोभा को [दिदिक्खूविव विसम्मइ] देखने का इच्छुक होकर मानो ठहरा हो ऐसा प्रतीत होता था। [अवणिभूओ भवणोवरियणज्झओ] राजा के महल पर फहराती हुइ ध्वजा [अमरावइं तिरक्करेइ विव] अमरावती नामक देवनगरी को भी तिरस्कृत करती हुइ प्रतीत होती थी। [महुमज्जियमाहीगमहुरस्सरेहिं गायंतीओ] मधु से संचित द्राक्षा के समान मधुर स्वरों से गाती हुइ [नगरसीमंतिणीओ किन्नरी अवि अहरी कुव्वंति] नागरीक महिलाए किन्नरियों को भी लज्जित करती थीं क्योंकि उनका गान किन्नरीयों से भी विशिष्ट था ॥२॥

मूलम्—तत्थ दाणे धणेसो, सोरिए वासुदेवो पयापोसी सदारतोसी सुणीइ-

जोसी माणधणिओ कारुणिओ सीलभूसणो निरत्थदूसणो महंत सेवासमत्थो सिद्धत्थो णाम राया रज्जं काहीअ। तम्मि भुवं सासमाणे राजहंसो एव सरोगो। चंदो एव दोसायरो, भिंगो एव महुपो, सप्पो एव बिजिब्भो, पदीवो एव णिस्सिणेहो, सत्तुहिययवणमेव भयट्ठाणं, गिद्धो एव मंसासणो ॥३॥

शब्दार्थ–[तत्थ] उस क्षत्रियकुण्डग्राम नाम की नगरी में [सिद्धत्थो णाम राया रज्जं काहीअ] सिद्धार्थ नामका राजा राज्य करता था वह [दाणे धनेसो] दान देने में कुबेर और [सोरीए वासुदेवो] शूरता में वासुदेव के समान था। [पयापोसी] प्रजा का पोषण करनेवाले, [सदारतोसी] स्वदार संतोषी [सुणीइ जोसी] नीति का पालन करनेवाले [माणधणिओ] मान के धनी [कारुणिओ] कारुणिक [सीलभूसणो] शील से विभूषित [निरत्थदूसणो] दोषो से वर्जित तथा [महंतसेवा समत्थो] उत्तम पुरुषों की सेवा में समर्थ थे।

[तम्मि भुवं सासमाणे] राजा सिद्धार्थ के शासन में [राजहंसो एव सरोगो] केवल

राजहंस ही सरोग थे, अर्थात्–सर–तालाब में, ग-गमन करनेवाले थे, [चंदो एव दोसायरो] चन्द्रमा ही दोषाकर था। अर्थात् दोषा रात्रि को करनेवाला था। [भिंगो एव महुपो] भौरे ही मधुप थे, अर्थात् पुष्पों का मधुरस पीनेवाले थे। [सप्पो एव बिजिब्भो] सर्प ही द्वीजिह्व थे, अर्थात् दो जीभवाले थे। [पदीवो एव णिस्सिणेहो] दीपक ही निःस्नेह थे। अर्थात् स्नेह–तेल से वर्जित थे। [सत्तुहिययवणमेव भयट्ठाणं] शत्रुओं के हृदयरूपी वन ही भयस्थान थे। [गिद्धो एव मंसासणो] गीध ही मांस भक्षक थे। इनके अतिरिक्त कोई सरोग [रोगी], दोषाकर (दोषों की खान) मधुप (मद्यपान करनेवाला) द्वीजिह्व (चुगली खानेवाला) स्नेह (प्रेम) से वर्जित, भयस्थान और मांस भक्षक नहीं था ॥३॥

मूलम्–तस्स रण्णो इंदाणीविव गुणखाणी तिसलाभिहाणा महिसी आसी। तीए णयणसुसमं समिक्खिऊण लज्जिअं कमलं जलम्मि निमज्जीअ विव, वयणं विलोइय विहू अंबरमवलंबीअ विव, वाणीमहुरीमाए लज्जिओ कोइलो

काणं अस्सीअ विव।

सा य सदोरगमुहवत्तियं मुहे बंधिऊण तिकालं सामाइयं करेमाणी आसी, उभओ कालम्मि आवस्सयं य। दीणहीणजणोवगारिणी पाइवच्चधारिणी धम्मविचलियजणमणम्मि धम्मसंचारिणी सुयगुरुवक्कसद्धाधारिणी पियधम्मा दढधम्मा कारुण्णवम्मसंरक्खियहिययमम्मो णवतत्तपंचवीसइकिरियाविउसी सा वयधम्मसुवेजुसी धम्मधारिणी धम्मसुमिणदंसिणी धम्माराहणसयकायव्वमाणिणी उभयकुलोज्जलकारिणी विगहावहारिणी सुकहाणुरागिणी लद्धट्ठा पुच्छियट्ठा गहियट्ठा विणिच्छियट्ठा अहिगयट्ठा य तिसला आसी ॥४॥

शब्दार्थ—[तस्स रण्णो] उन राजा सिद्धार्थ की [इंदाणीविव गुणखाणी] इन्द्राणी के समान गुणों की खाण [तिसलाभिहाणा महीसी आसी] त्रिशला नामकी महारानी

थी। [तीए णयणसुसमां] उनके नेत्र के सौंदर्य को [समिक्खिऊण] देखकर मानो [लज्जिअं कमलं जलम्मि निमज्जिअ विव] लज्जित हुआ कमल जल में डूब गया। [वयणं विलोइय विहू अंबरमवलंबीअ विव] मुख को देखकर चन्द्रमाने मानो आकाश का अवलम्बन किया [वाणी महुरीमाए लज्जिओ कोइलो काणणं अस्सीअ विव] और वाणी की मधुरिमा से मानो लज्जित होकर कोयलने वन का आसरा लिया।

[सा य सदोरगमुहवत्तियं] महारानी त्रिशला डोरासहित मुखवस्त्रिका [मुहे बंधिऊण] मुख पर बान्धकर [तिकालं सामाइयं करेमाणी आसी] त्रिकाल सामायिक और [उभओ कालम्मि आवस्सयं य] उभयकाल आवश्यक क्रिया करती थी। [दीणहीणजणोवगारिणी] वह दीन हीन जनों की उपकारिणी, [पाइवच्चधारिणी] पातिव्रत धर्म की धारिणी [धम्मविचलियजणमणम्मि] धर्म के विचलित होनेवाले जनों के मन में [धम्मसंचारिणी] धर्म का संचार करनेवाली, [सुयगुरुवक्कसद्धाधारिणी] श्रुत, गुरु वाक्य

पर श्रद्धा रखनेवाली [पियधम्मा] प्रियधर्मा तथा [दढधम्मा] दृढधर्मा थी। [कारुण्णवम्मसरक्खियहिययमम्मा] करुणा के कवच से अन्तःकरण के मर्म की रक्षा करनेवाली [णवतत्तपंचवीसइकिरिया विउसी] नौ तत्त्व और पच्चीस क्रियाओं के विषय में कुशल [सावयधम्ममुवेजुसी] श्रावक धर्म को धारण करनेवाली [धम्मधारिणी] धर्मधारिणी [धम्मसुमिणदंसिणी] धर्म का ही स्वप्न देखनेवाली [धम्माराहणसयकायव्वमाणिणी] धर्म की आराधना को ही अपना कर्तव्य माननेवाली [उभयकुल्लोज्जलकारिणी] दोनों कुलों कों उज्ज्वल करनेवाली [विगहावहारिणी] विकथाओं का त्याग करनेवाली [सुकहाणुरागिणी] सुकथाओं में अनुराग रखनेवाली [लद्धट्ठा] श्रुत के अर्थ को स्वयं समझनेवाली] [पुच्छियट्ठा] श्रुत के अर्थ को स्वयं पूछनेवाली [गहियट्ठा] अतएव विशेषरूप से अर्थ का निश्चय करनेवाली [विनिच्छियट्ठा अहियगयट्ठा य तिसला आसी] और इस प्रकार पूर्ण रीति से अर्थ को समझनेवाली थी ॥४॥

मूलम्—तस्सिं रायम्मि उरोभवा पयाइव पया पालयंतम्मि सुहं सुहेण दिणाणि अइवाहंयतम्मि जणेणं आणंदयंतो आसिणमासो आगमीय। किसीवला बहला सस्ससंपत्ती दंसं दंसं पहरिसीअ। वावारजीविणो य सम्मं वावारपवित्तीए आनंदसिंधूच्छलंततरलतरतरंगसु निमज्जीअ। सिद्धत्थ रायावि पयासत्थं कयत्थं विलोइय चंदं जलनिही विव मोदीअ ॥५॥

शब्दार्थ—[तस्सिं रायम्मि] राजा सिद्धार्थ [उरोभवा पयाइव पया] उदर जात सन्तान की तरह प्रजा का [पालयंतम्मि] पालन कर रहे थे और [सुहं सुहेण दिणाणि] सुखपूर्वक दिन [अइवाहयंतम्मि] व्यतीत कर रहे थे कि [जणे आनंदयंतो] लोगों को आनन्दित करनेवाला [आसिणमासो आगम्मिय] आश्विनमास आगया। [किसीवला बहला सस्ससंपत्ती] किसान बहुतसी सस्य सम्पत्ति को [दंसं दंसं पहरिसीअ] देख देखकर प्रसन्न हुए। [वावारजीविणो य] व्यापार जीवी [सम्मं वावारपवित्तीए] सम्यक्

प्रकार से-नीतिपूर्वक व्यापार चलने के कारण [आणंदसिंधूच्छलंततरलतररतरंगेसु निमज्जीअ] आनन्दरूपी समुद्र की उछलती हुइ अत्यन्त चपल लहरों में निमग्न थे। अर्थात् सुखी थे। [सिद्धत्थराया वि] राजा सिद्धार्थ भी [पयासत्थं कयत्थं विलोइय] प्रजाजन को कृतार्थ-प्रसन्न देखकर [चंदं जलनिही विव मोदीअ] उसी प्रकार आनन्द को प्राप्त होते थे जिस प्रकार चन्द्रमा को देखकर समुद्र प्रमोद को प्राप्त होता है ॥५॥

मूलम्-तस्सेव खत्तियकुंडग्गामस्स णयरस्स दाहिणे पासे माहणकुंडपुर-संनिवेसो अत्थि। तत्थ य चउव्वेयविऊ चउद्दसविज्जाकुसलो कोडालसगोत्तो उसभदत्तो नाम माहणो आसी। तस्स भज्जा अइसयलज्जा जालंधरायण-सगोत्ता सीलपवित्ता देवाणंदा नाम माहणी ॥६॥

शब्दार्थ—[तस्सेव खयत्ति य कुंडग्गामस्स णयरस्स] उसी क्षत्रियकुण्डग्राम नाम के नगर के [दाहिणे पासे] दक्षिण पार्श्व में [माहणकुंडपुरसंनिवेसो अत्थि] ब्राह्मणकुण्डपुर

नामक एक बस्ती थी। [तत्थ य] उसमें [चउव्वेयविऊ] चारों वेदों का ज्ञाता और [चउद्दसविज्जाकुसलो] चौदह विद्याओं में कुशल, [कोडालसगोत्तो] कोडाल गोत्रीय [उसभदत्तो नाम] ऋषभदत्त नामका [माहणो आसी] ब्राह्मण रहता था। और [अइ-सयलज्जा] अतिशय लज्जाशील [जालंधरायणसगोत्ता] जालंधरायणस गोत्रवाली और [सीलपवित्ता] शील से पवित्र [देवाणंदामाहणी] देवानन्दा–ब्राह्मणी उसकी [भज्जा] पत्नी थी ॥६॥

मूलम्–तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे इमाए ओसप्पि-णीए सुसमसुसमाए समाए वीइक्कंताए सुसमाए समाए वीइक्कंताए सुसमदुसमाए समाए वीइक्कंताए दुसमसुसमाए समाए बहुवीइक्कंताए पण्णत्तरीए वासेहिं मासेहि य अद्धनवएहिं सेसेहिं, जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे अट्ठमे पक्खे आसाढ सुद्धे, तस्स णं आसाढसुद्धस्स छट्ठीपक्खेणं हत्थुत्तराहिं णक्खत्तेणं जोगोवगएणं

महाविजय–सिद्धत्थ–पुप्फुत्तरपवरपुंडरीय दिसासोवत्थिय–वद्धमाणाओ महा-विमाणाओ वीसं सागरोवमाइं देवाउयं पालयित्ता आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइ-क्खएणं चुए, चइत्ता तीसं देवाणंदाए कुच्छिंसि सीहब्भगभूएणं तिणाणोवगएणं अप्पाणेणं गब्भं वक्कंते। से णं समणे भगवं महावीरे 'चइस्सामि' त्ति जाणइ, 'चुएमि' त्ति जाणइ चयमाणे' ण जाणइ, सुहुमे णं से काले पण्णत्ते ॥७॥

शब्दार्थ—[तेणं कालेणं तेणं समएणं] उस काल और उस समय में [समणे भगवं महावीरे] श्रमण भगवान् महावीर [इमाए ओसप्पिणीए] इस अवसर्पिणी काल में [सुसमसुसमाए समाए] सुषमसुषमा नामक आरक [वीइक्कंताए] के बीत जाने पर [सुसमाए समाए वीइक्कंताए] सुषमा आरक के बीत जाने पर [सुसमदुसमाए समाए वीइक्कंताए] सुषमदुषम आरक के बीत जाने पर [दुसमसुसमाए समाए बहु-

वीइक्कंताए] दुषमसुषम नामक आरक का बहुत भाग बीत जाने पर [पण्णत्तरिए वासेहिं मासेहिं य] और पचहत्तर वर्ष तथा [अद्धनवएहिं सेसेहिं] साढे आठ मास शेष रहने पर [जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे] ग्रीष्म ऋतु का चौथा मास [अट्ठमे पक्खे] आठवां पक्ष [आसाढसुद्धे] जो आषाढ शुक्ल है [तस्स णं आसाढसुद्धस्स] उस आषाढ शुक्ल की [छट्ठी पक्खेणं] षष्ठी तिथि में [हत्थुत्तराहिं णक्खत्तेहिं जोगोवगएणं] हस्तोत्तरा नक्षत्र का योग आजाने पर [महाविजय] महाविजय [सिद्धत्थ] सिद्धार्थ [पुप्फुत्तर] पुष्पोत्तर [पवरपुंडरीअ] प्रवरपुण्डरीक [दिसासोवत्थिय] दिशास्वस्तिक [वद्धमाणाओ] और वर्द्धमान [महाविमाणाओ] इन छह नामवाले महाविमान से [वीसं सागरोवमाइं] वीस सागरोपम की [देवाउयं पालयित्ता] देवआयु पूर्ण करके [आउक्खएणं] आयु के क्षय के कारण [भवक्खएणं] भव के क्षय के कारण [ठिइक्खएणं] और स्थिति के क्षय के कारण [चुए] चवे [चइत्ता तीसे देवाणंदाए] चवकर उस देवनन्दा ब्राह्मणी की

[कुच्छिंसि] कुक्षि में [सीहब्भगभूएणं] सिंह के शिशु के समान [तिणाणोवगएणं] और तीन ज्ञानों से युक्त [अप्पाणेणं गब्भं वक्कंते] आत्मा से गर्भ में आये [से णं समणे भगवं महावीरे] वे श्रमण भगवान् महावीर ['चइस्सामि' त्ति जाणइ] चवूँगा यह जानते थे, [चुएमि त्ति जाणइ] चवा यह भी जानते थे, [चयमाणे ण जाणइ] किन्तु 'चव रहा हूँ' यह नहीं जानते थे [सुहुमेणं से काले पण्णत्ते] क्योंकि चवण का वह काल सूक्ष्म कहा गया है ॥७॥

'इति द्वितीया वाचना'

मूलम्—जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते, तं रयणिं च णं सा देवाणंदा माहणी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहिरमाणी२ १-गय २-वसह ३-सीह ४-लच्छी-५दाम ६ससि ७ दिनयर८ झय ९ कुंभ १० पउमसर ११ सागर १२ विमाण-भवण १३ रयणु-

च्चय १४ सिहिं च। इमे एयारूवे चउद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा॥८॥

शब्दार्थ—[जं रयणिं च णं] जिस रात्रि में [समणे भगवं महावीरे] श्रमण भगवान् महावीर [देवाणंदाए माहणीए] देवानन्दा ब्राह्मणी की [कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते] कूख में गर्भ पने से आये [तं रयणिं च णं] उस रात्रि में [सा देवाणंदा माहणी] वह देवानन्दा ब्राह्मणी, [सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहिरमाणी२] शय्या पर कुछ कुछ सोते और कुछ कुछ जागते–हल्की नींद लेते समय [गय] गज [वसह] वृषभ [सीह] सिंह [लच्छी] लक्ष्मी [दाम] माला [ससी] चन्द्र [दिनयर] सूर्य [झय] ध्वजा [कुंभ] कुम्भ [पउमसर] पद्मसरोवर [सागर] समुद्र [विमाण] विमान [रयणुच्चय] रत्नराशि [सिहिं] निर्धूम अग्निशिखा [इमे एयारूवे] इस प्रकार से ये [चउद्दस] चौदह [महासुमिणे] महास्वप्नों को [पासित्ता] देखकर [पडिबुद्धा] जाग्रत हो गई॥८॥

मूलम्-तए णं सा देवाणंदा माहणी ते सुमिणे तप्फलजाणणट्ठं उसभदत्तस्स माहणस्स कहेइ। से य ते सुमिणे सोच्चा निसम्म सुमिणत्थुग्गहं करेइ तओ पच्छा तं देवाणंदं माहणिं एवं वयासी-उराला कल्लाणा सिवा धन्ना मंगल्ला सस्सिरिया हियकरा सुहकरा पीइकरा तुमे देवाणुप्पिए! चउदस महासुमिणा दिट्ठा। तेणं अम्हाणं अत्थलाभो भविस्सइ, भोगलाभो भविस्सइ, पुत्तलाभो भविस्सइ, सुहलाभो भविस्सइ, तुवं खलु देवाणुप्पिये! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं वइक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं अहीण–पडिपुण्ण पंचिंदिय-सरीरं लक्खण-वंजण-गुणोववेयं माणुम्माण पमाण-पडिपुण्ण-सुजाय सव्वंग-सुंदरगं ससिसोमागारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारगं पयाहिसि॥९॥

शब्दार्थ—[तए णं सा देवाणंदा माहणी] उस के बाद वह देवानंदा ब्राह्मणीने [ते सुमिणे तप्फलजाणणट्ठं] उन स्वप्नों का फल जानने के लिये [उसभदत्तस्स माह-

णस्स कहेइ] ऋषभदत्त ब्राह्मण को कहा [से य ते सुमिणे सोच्चा] ऋषभदत्त ब्राह्मणने उन स्वप्नों को सुनकर [निसम्म] तथा समझ कर [सुमिणत्थुग्गहं करेइ] स्वप्नों के अर्थ को अवग्रहण किया। [तओ पच्छा तं देवाणंदं माहणिं एवं वयासी] तदनन्तर उस देवानन्दा ब्राह्मणी से इस प्रकार बोला–[देवाणुप्पिये] हे देवानुप्रिये! [उराला] तुमने उदार [कल्लाणा] कल्याण [सिवा] शिव [धन्ना] धन्य [मंगल्ला] मांगलिक [सस्सिरीया] सश्रीक [हियकरा] हितकर [सुहकरा] सुखकर [पीइकरा] और प्रीतिकर [तुमे देवाणुप्पिए! चउद्दसमहासुमिणा दिट्ठा] हे देवानुप्रिये! तुमने चौदह महास्वप्न देखे हैं। [तेणं अम्हाणं] उससे हमें [अत्थलाभो भविस्सइ] अर्थ का लाभ होगा [भोगलाभो भविस्सइ] भोग का लाभ होगा [पुत्तलाभो भविस्सइ] पुत्र का लाभ होगा। [सुहलाभो भविस्सइ] सुख का लाभ होगा। [तुवं खलु देवाणुप्पिये!] हे देवानुप्रिये! तुम [नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं] नौ महिने पूरे [अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं] और साढे

सात रात्रि [वइक्कंताणं] व्यतीत होजाने पर [सुकुमालपाणिपायं] सुकुमार हाथ पैरवाले, [अहीण—पडिपुण्ण—पंचिंदियसरीरं] हीनता—रहित प्रतिपूर्ण पांच इन्द्रियों से युक्त शरीरवाले [लक्खण—वंजण—गुणोववेयं माणु-म्माण] लक्षणों, व्यंजनों और गुणों से युक्त मान, उम्मान [पमाणपडिपुण्णसुजाय—सव्वंग—सुंदरंगं] और प्रमाण से परिपूर्ण अच्छी आकृति से युक्त एवं सर्वांग सुन्दर अंगवाले [ससिसोमागारं] चन्द्रमा के समान सौम्य आकृतिवाले [कंतं] कान्तिमय [पियदंसणं] प्रियदर्शन [सुरूवं] सुन्दर रूप से सम्पन्न [दारगं पयाहिसि] पुत्र को जन्म देगी ॥९॥

मूलम्—तए णं सा देवाणंदा माहणी महासुमिणाणं फलं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ चित्तमाणंदिया तं गब्भं सुहं सुहेणं परिवहइ।

अह य इमं च णं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं ओहिणा आभोएमाणे आभो-

एमाणे सक्किंदे देविंदे देवराया समणं भगवं महावीरं माहणकुंडग्गामे नयरे कोडालसगोत्तस्स उसभदत्तस्स माहणस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंतं पासइ पासित्ता सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—

णमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थयराणं सयं संबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरियाणं पुरिसवरगन्धहत्थीणं लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मणायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं दीवो ताणं

सरणं गई पइट्ठा अप्पडिहय–वर–नाणदंसण–धराणं वियट्टछउमाणं जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं सव्वन्नूणं सव्व-दरिसीणं सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं। णमो जिणाणं जियभयाणं। णमोत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स पुव्वत्तित्थयरनिद्दिट्ठस्स जाव संपाविउकामस्स वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए, पासउ मं भगवं तत्थगए इहगयं–तिकट्टु समणं भगवं महा-वीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सन्निसण्णे।१०।

शब्दार्थ—[तए णं सा देवाणंदा माहणी] तब वह देवानंदा ब्राह्मणी [महासुमिणाणं फलं सोच्चा] महास्वप्नों का फल सुनकर [निसम्म] और समझकर [हट्ठतुट्ठ-चित्तमाणंदिया] हर्षित तथा संतुष्ट हुई [तं गब्भं सुहं–सुहेणं परिवहइ] वह सुखपूर्वक

उस गर्भ को वहन करने लगी।

[अह य इमं च णं] इधर [केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं ओहिणा] संपूर्ण जम्बूद्वीप को अवधिज्ञान से [आभोएमाणे आभोएमाणे] अवलोकन करते हुए [सक्किंदे देवराया समणं भगवं महावीरं] शक्रेन्द्र देवराजने श्रमण भगवान महावीर को [माहणकुंडग्गामे नयरे] ब्राह्मणकुंडग्राम नामक नगर में [कोडालसगोत्तस्स उसभदत्तस्स माहणस्स] कोडालसगोत्रीय ऋषभदत्त ब्राह्मण की [भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए] पत्नी जालंधर गोत्रवाली देवानंदा ब्राह्मणी की [कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंतं पासइ] कूँख म गर्भरूप से आये देखा [पासित्ता सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ], देखकर वह सिंहासन से उठ खडे हुए, [अब्भुट्ठित्ता करयलपरिग्गहियं] ऊठकर दोनों हाथ जोडकर [दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी] दसों नख जिसमें मिल गये हैं इस प्रकार दोनों हाथों से आवर्त्त-प्रदक्षिण करके मस्तक पर अंजलि धारण करके इस

प्रकार कहने लगे—

[णमोत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं] नमस्कार हो अरिहन्त भगवंतों को [आइगराणं] धर्म की आदि करनेवाले [तित्थयराणं] तीर्थ की स्थापना करनेवाले [सयं संबुद्धाणं] स्वयं ही बोध को पानेवाले [पुरिसुत्तमाणं] पुरुषों में श्रेष्ठ [पुरीससीहाणं] पुरुषों में सिंह [पुरिसवरगंधहत्थीणं] पुरुषों में श्रेष्ठ गंध हस्ती [लोगुत्तमाणं] लोक में उत्तम [लोगनाहाणं] लोक में नाथ [लोगहियाणं] लोक के हितकारी [लोगपईवाणं] लोक में दीपक [लोगपज्जोयगराणं] लोक में उद्योत करनेवाले [अभयदयाणं] अभय देनेवाले [चक्खुदयाणं] ज्ञानरूपी नेत्र देनेवाले [मग्गदयाणं] धर्ममार्ग के दाता [सरणदयाणं] शरण के दाता [जीवदयाणं] सञ्जमरूपी जीवन के दाता [बोहिदयाणं] बोधि=सम्यक्त्व के दाता [धम्मदयाणं] धर्म के दाता [धम्मदेसयाणं] धर्म के उपदेशक [धम्मनायगाणं] धर्म के नायक [धम्मसारहीणं] धर्म के सारथि [धम्मवर] धर्म के श्रेष्ठ [चाउरंत] चार-

गति का अंत करनेवाले [चक्कवट्टीणं] चक्रवर्ती [अप्पडिहय] अप्रतिहत तथा [वरणाण-दंसणधराणं] श्रेष्ठ ज्ञानदर्शन के धारक [विअट्टछउमाणं] छद्म से रहित [जिणाणं] रागद्वेष के विजेता [जावयाणं] औरों को जितानेवाले [तिन्नाणं] स्वयं तरे हुए [तारयाणं] दूसरों को तारनेवाले [बुद्धाणं] स्वयं बोध को प्राप्त, तथा [बोहयाणं] दूसरों को बोध देनेवाले [मुत्ताणं] स्वयं मुक्त [मोयगाणं] दूसरों को मुक्त करानेवाले [सव्वन्नूणं] सर्वज्ञ [सव्वदरिसीणं] सर्वदर्शी तथा [सिवं] उपद्रव रहित [अयलं] अचल=स्थिर [अरुयं] रोगरहित [अणंतं] अंतरहित [अक्खयं] अक्षय [अव्वाबाहं] बाधारहित [अपुणराविति] पुनरागमन से रहित ऐसे–[सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं] सिद्धि गति नामक स्थान को प्राप्त किये [नमो जिणाणं जिय भयाणं] भयों को जीत लेनेवाले जिन भगवन्तों को नमस्कार हो।

[णमोत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स] नमस्कार हो श्रमण भगवान महा-

वीर को [पुव्वतित्थयरनिद्दिट्ठस्स] जिनका पूर्ववर्ती तीर्थंकरोंने निर्देश किया है। [जाव संपाविउकामस्स] और जो मुक्ति को प्राप्त करने के इच्छुक हैं। [वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए] उस स्थान पर रहे हुए भगवान को यहीं से मैं वंदना करता हूँ। [पासउ मं भगवं तत्थगए इहगयं] वहां स्थित भगवान् यहां स्थित मुझको देखते हैं [तिकट्टु] इस प्रकार कहकर [समणं भगवं महावीरं] श्रमण भगवान महावीर को शक्रेन्द्रने [वंदइ नमंसइ] वंदना की नमस्कार किया [वंदित्ता नमंसित्ता] वंदना नमस्कार करके [सीहासणवरंसि] श्रेष्ठ सिंहासन पर [पुरत्थाभिमुहे संनिसण्णे] पूर्व दिशा की तरफ मुह करके बैठ गये ॥१०॥

मूलम्—तए णं से सक्के देविंदे देवराया समणस्स भगवओ महावीरस्स अच्छेरयभूयं माहणकुलगब्भत्ताए वुक्कमं जाणित्ता चिंतेइ–नो खलु अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छ-

कुलेसु वा हीणकुलेसु वा दीणकुलेसु वा रुग्गकुलेसु वा भुग्गकुलेसु वा दरिद्द-कुलेसु वा किवणकुलेसु भिक्खागकुलेसु वा माहणकुलेसु वा आयाइंसु वा आयाइंति वा आयाइस्संति वा। अत्थि पुण एसेवि भावे अच्छेरयभूए। एस पुण अणंताहिं उस्सिप्पिणीहिं ओसप्पिणीहिं विइक्कंताहिं समुप्पज्जइ ॥

नामगुत्तस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइयस्स अणिज्जिन्नस उदयेणं जण्णं अरहंता वा जाव वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा जाव माहणकुलेसु वा आयाइंसु वा आयाइंति वा आयाइस्संति वा, कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कमिंसु वा वक्कमंति वा वक्कमिस्संति वा नो चेव णं जोणी जम्मणनिक्खमणेणं निक्खमिंसु वा निक्खमिस्संति वा। अयं च समणे भगवं महावीरे माहणकुंडग्गामे नयरे उसभ-दत्तस्स माहणस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते। तं

जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्णमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवरायाणं जं णं अरिहंता भगवंतो तहप्पगारेहिंतो अंतकुलेहिंतो जाव माहणकुलेहिंतो तहप्पगारेसु उग्ग-कुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइण्णकुलेसु वा इक्खागकुलेसु वा हरिवंसकुलेसु वा नायकुलेसु वा अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु वा विसुद्धजाइकुलवंसेसु साहरणि-ज्जा। तं सेयं खलु ममावि समणं भगवं महावीरं चरमतित्थयरं पुव्वतित्थयर-निद्दिट्ठं माहणकुंडग्गामाओ णयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स भारियाए देवा-णंदाए माहणीए कुच्छीओ खत्तियकुण्डग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थ-स्स खत्तियस्स कासवगुत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगुत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरावित्तए। जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरावित्तएत्ति

कट्टु हरिणेगमेसिं पायत्ताणीयाहिवइं देवं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–

एवं खलु देवाणुप्पिया! नो खलु अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा जाव जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए कुच्छिसि गब्भत्ताए साहराविंत्तए। तं गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया! समणं भगवं महावीरं माहणकुण्डग्गामे णयरे उसभदत्तस्स माहणस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए कुच्छीओ खत्तियकुण्डग्गामे णयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगुत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगुत्ताए कुच्छिसि अव्वाबाहं अकिलामं अगिलाणं अमिलाणं जयणाए जयमाणे गब्भत्ताए साहराहि, साहरित्ता ममेयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणाहि ॥११॥

शब्दार्थ—[तए णं से सक्के देविंदे देवराया] इसके बाद वह शक्र देवेन्द्र देवराज [समणस्स भगवओ महावीरस्स] श्रमण भगवान महावीर का [अच्छेरयभूयं] आश्चर्य-कारक [माहणकुलगब्भत्ताए] ब्राह्मणकुल में [वुक्कमं जाणित्ता चिंतेइ] गर्भरूप से उत्पन्न हुआ जानकर विचार करते हैं–[नो खलु अरहंता वा चक्कवट्टी वा] निश्चय ही अर्हन्त चक्रवर्ती [बलदेवा वा वासुदेवा वा] बलदेव या वासुदेव [अंतकुलेसु वा] अन्तकुलों (शूद्रकुलों)में [पंतकुलेसु] प्रांत [अधर्माचारियों के कुलों] में [तुच्छकुलेसु वा] तुच्छ अर्थात् अल्प परिवारवाले कुलों में [हीणकुलेसु वा] हीन अर्थात् जाति एवं धन आदि से अपूर्ण कुलों में [दीणकुलेसु वा] दीन कुलों में [रुग्गकुलेसु वा] रुग्ण कुलों में [भुग्गकुलेसु] भुग्न–कुटिल या वंचक कुलों में [दरिद्दकुलेसु वा] दरिद्र कुलों में [किवणकुलेसु वा] कृपण कुलों में [भिक्खागकुलेसु वा] भिक्षुक कुलों में [माहणकुलेसु वा] अथवा ब्राह्मण कुलों में [आयाइंसु वा] अतीत काल में उत्पन्न नहीं हुए [आयाइंति वा] वर्तमान में नहीं

उत्पन्न होते [आयाइस्संति वा] और भविष्य में भी नहीं उत्पन्न होंगे। [अत्थिपुण एसे वि भावे अच्छेरयभूए] अर्हन्तों आदि का अन्तकुल आदि में आना भी आश्चर्य है। [एस पुण अणंताहिं उस्सप्पिणीहिं] यह आश्चर्यरूप भाव अनंत उत्सर्पिणी और [ओसप्पिणीहिं] अवसर्पिणी काल [विइक्कंताहिं समुप्पज्जइ] बीतने पर उत्पन्न होता है।

[नामगुत्तस्स वा कम्मस्स] नामगोत्र–नीचगोत्र का क्षय न हुआ हो [अवेइयस्स] वेदा न गया हो [अणिज्जिन्नस्स] निर्जरा नहीं हुइ हो [उदयेणं] और इस कारण उसके उदय से [जण्णं अरहंता वा जाव वासुदेवा वा] अर्हंत यावत् वासुदेव [अंतकुलेसु वा जाव माहणकुलेसु वा] अन्तकुलों में यावत् ब्राह्मणकुलों में [आयाइंसु वा आयाइंति वा आयाइस्संति वा] आये, आते हैं या आएँगे [कुच्छिसि गब्भत्ताए] कुक्षि म गर्भरूप से [वक्कमिंसु वा वक्कमंति वा वक्कमिस्सिंति वा] उत्पन्न हुए, उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होंगे [नो चेव णं जोणीजम्मणनिक्खमणेणं] तो भी योनिजन्म निष्क्रमण (योनि द्वारा

जन्म के रूप में निकलना) से न जन्मे हैं [निक्खमिंसु वा] न जन्मते हैं और [निक्खमिस्संति वा] न जन्मेंगे। अर्थात् प्रथम तो अर्हन्त चक्रवर्ती आदि अन्त–प्रान्त यावत् ब्राह्मण कुलों में गर्भ के रूप में प्रवेश ही नहीं करते, कदाचित् पूर्वबद्ध नीचगोत्र कर्म के उदय से गर्भ में प्रवेश करे भी तो उन कुलों में जन्म नहीं लेते। [अयं च णं] परन्तु यह [समणे भगवं महावीरे] श्रमण भगवान महावीर [माहणकुंडग्गामे नयरे] ब्राह्मणकुण्डग्राम नामक नगर में [उसभदत्तस्स माहणस्स] ऋषभदत्त ब्राह्मण की [भारियाए देवाणंदाए माहणीए] पत्नी देवानंदा ब्राह्मणी की [कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते] कुक्षि में गर्भरूप से उत्पन्न हुए है। [तं जीयमेयं तीयपच्चुप्पण्णमणागयाणं] तो भूतकालीन, वर्तमानकालीन तथा भविष्यत्कालीन [सक्काणं देविंदाणं देवरायाणं] शक्र देवेन्द्रों देवराजों का यह परम्परागत आचार हैं कि [जं णं अरिहंता भगवंतो] वे अरिहंत भगवन्तों को [तहप्पगारेहिंतो अंतकुलेहिंतो] पूर्वोक्त अन्तकुलों से [जाव

माहणकुलेहिंतो] ब्राह्मणकुलों से [तहप्पगारेसु] उस प्रकार के [उग्गकुलेसु वा] उग्र कुलों में [भोगकुलेसु वा] भोगकुलों में [राइण्णकुलेसु वा] राजन्यकुलों में [इक्खागकुलेसु वा] इक्ष्वाकु कुलों में [हरिवंसकुलेसु वा] हरिवंशकुलों में [नायकुलेसु वा] ज्ञातकुलों में [अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु] अथवा इसी प्रकार के [विसुद्ध जाइकुलवंसेसु] विशुद्ध जाति (मातृपक्ष) और विशुद्ध कुल (पितृपक्ष) वाले किन्हीं कुलों में [साहरणिज्जा] उनका संहरण कर देना चाहिये। [तं सेयं खलु ममा वि] तो मेरे लिये उचित है कि [समणं भगवं महावीरं] श्रमण भगवान् महावीर को [चरमतित्थयरं] जो चरम तीर्थंकर हैं [पुव्वतित्थयरनिद्दिट्ठं] और पूर्ववर्ती तीर्थंकरो द्वारा निर्दिष्ट है उन्हें [माहणकुंडग्गामाओ णयराओ] ब्राह्मणकुण्ड ग्राम नामक नगर में [उसभदत्तस्स माहणस्स] ऋषभदत्त ब्राह्मण की भार्या [देवाणंदाए माहणीए] देवानन्दा ब्राह्मणी की [कुच्छिओ] कुक्षि से [खत्तियकुंडग्गामे नयरे] क्षत्रियकुंडग्राम नामक नगर

में [नायाणं खत्तियाणं] ज्ञात क्षत्रियों के [सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगुत्तस्स] काश्यप-गोत्रीय सिद्धार्थ क्षत्रिय की [भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगुत्ताए] भार्या वासिष्ठगोत्रवाली त्रिशला क्षत्रियाणी की [कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहराविक्तए] कुक्षि में गर्भरूप से संहरण करूँ [जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए] और त्रिशला क्षत्रियाणी का जो [गब्भे] गर्भ है [तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए कुच्छिंसि] उसे देवानन्दा ब्राह्मणी की कुक्षि में [गब्भत्ताए साहराविक्तएत्ति कट्टु] संहरण कर दूँ। इस प्रकार विचार करके [हरिणेगमेसिं पायत्ताणीयाहिवइं] शक्रेन्द्र ने अनीकाधिपति हरिणैगमेषी [देवं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–] देव को बुलवाया और बुलवा कर इस प्रकार कहा–

[एवं खलु देवाणुप्पिया!] हे देवानुप्रिय [नो खलु अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा] अर्हन्त, चक्रवर्त्ती, बलदेव अथवा वासुदेव [अंतकुलेसु वा जाव जे वि य णं से] अन्तकुल में उत्पन्न नहीं होते हैं यावत् [तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे]

त्रिशला रानी के गर्भ को [तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरावित्तए] देवानन्दा की कुक्षि में और देवानन्दा के गर्भ को त्रिशला की कुक्षि में संहरण करना उचित है। [तं गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया !] अतः हे देवानुप्रिय ! तुम जाओ, [समणं भगवं महावीरं] श्रमण भगवान महावीर को [माहणकुंडग्गामे णयरे] ब्राह्मणकुडग्राम नगर में [उसभदत्तस्य माहणस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए] ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानंदा ब्राह्मणी की [कुच्छिओ खत्तियकुंडग्गामनयरे] कुक्षिसे क्षत्रियकुण्डग्राम नगर में [नायाणं खत्तियाणं सिद्धित्थस्स] ज्ञात क्षत्रियों के वंश में उत्पन्न [खत्तियस्स कासव गुत्तस्स] काश्यपगोत्रीय सिद्धार्थ क्षत्रिय को [भारियाए तिसलाए] भार्या त्रिशला [खत्तियाणीए वासिट्ठसगुत्ताए] वासिष्ठ गोत्रीया क्षत्रियाणी की [कुच्छिंसि अव्वबाहं] कुक्षि में किसी प्रकार की पीडा न हो [अकिलामं] परिश्रम न हो [अगिलाणं] खेद न हो [अमिलाणं] म्लानता न हो [जयणाए जयमाणे] यतना से कार्य करते हुए [गब्भत्ताए

शक्रेन्द्रकृत-
गर्भसंहरण-
विचारः

साहराहि] बदल दो। [जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए] और त्रिशला क्षत्रियाणी का [गब्भं तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए कुच्छिंसि] जो गर्भ है, उसगर्भ को देवाणंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में [गब्भत्ताए साहराहि] गर्भरूप से बदल दो [साहरित्ता] संहरण करके—अदल बदल करके [ममेयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणाहि] मेरी इस आज्ञा को शीघ्र ही पालन करके वापिस आकर कहो ॥१२॥

मूलम्—तए णं से हरिणेगमेसी देवे तस्साणत्तियं विणएणं पडिसुणेइ पडिसुणित्ता दिव्वाए देवगईए उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं ओक्कमइ, ओक्कमित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं उत्तरवेउव्वियं रूवं विउव्वित्ता दिव्वाए देवगईए वीइ-वयमाणे २ तिरियमसंखिज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झं मज्झेणं जेणेव मज्झजंबु-दीवे दीवे भारहेवासे, जेणेव माहणकुंडग्गामणयरे जेणेव उसभदत्तस्स माहण-

स्स गिहे, जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स आलोए पणामं करेइ, करित्ता देवाणंदाए माहणीए ओसोवणिं निद्दं दलेइ, दलित्ता असुभे पोग्गले अवहरइ, अवहरित्ता सुभे पोग्गले पक्खिवइ, पक्खिवित्ता 'अणुजाणउ मे भगवं' त्ति कट्टु समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अकिलामं—अगिलामं अमिलाणं सक्किंदस्साणाणुसारं अव्वाबाहेणं दिव्वेणं पहावेणं कोमलकरयलसंपुडेणं गिण्हइ॥१३॥

शब्दार्थ—[तए णं से हरिणेगमेसी देवे] तदनन्तर हरिणैगमेषीदेव [तस्साणत्तियं विणएणं पडिसुणेइ] शक्रेन्द्र की आज्ञा का विनयपूर्वकस्वीकार करता है [पडिसुणित्ता] स्वीकार करके [दिव्वाए देवगईए उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं ओवक्कमइ] दिव्य देवगति से उत्तर पूर्वदिशा में ईशानकोण में जाता है। [ओवक्कमित्ता] वहां जाकर [वेउव्विय-

समुग्घाएणं] वैक्रिय समुद्घातकरके [उत्तरवेउव्वियं रूवं विउव्वित्ता] उत्तरवैक्रिय रूप की विकुर्वणा करके [दिव्वाए देवगईए वीइवयमाणे] दिव्यदेवगति से जाता हुआ [तिरियमसंखिज्जाणं दीवसमुद्दाणं] तिर्छे असंख्यात द्वीप–समुद्रों के [मज्झं मज्झेणं जेणेव] बीचों बीच होकर जहां [मज्झजबुद्दीवे दीवे भारहे वासे] मध्यजम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र है [जेणेव माहणकुंडग्गामणयरे] जहां ब्राह्मणकुण्डग्रामनगर है [जेणेव उसभदत्तस्स माहणस्स गिहे,] जहां ऋषभदत्त ब्राह्मण का घर है [जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छइ] जहां देवानंदा ब्राह्मणी है, वहीं आता है। [उवागच्छित्ता] आकरके [समणस्स भगवओ महावीरस्स] श्रमण भगवान महावीर को [आलोए पणामं करेइ] देखते ही प्रणाम करता है [करित्ता देवाणंदाए माहणीए ओसोवणिं निद्दं दलेइ] प्रणाम करके देवानंदा ब्राह्मणी को गहरी निद्रा में सुलादेता है। [दलित्ता] और सुलाकर [असुभे पोग्गले अवहरइ] अशुभपुद्गलों का अपहरण करता है [अवहरित्ता] अपहरण

करके [सुभे पोग्गले पक्खिवइ] शुभ पुद्गलों का प्रक्षेप करता है [पक्खिवित्ता] प्रक्षेप करके ['अणुजाणउ मे भगवं त्ति' कट्टु] 'भगवान मुझे आज्ञा दें' इसप्रकार कह कर [समणं भगवं महावीरं] श्रमण भगवान महावीर को [अव्वाबाहं] बिनाकिसी पीडा के [अकिलामं] विना परिश्रम के [अगिलामं] बिना खेद के [अमिलामं] बिना म्लानता, के–बिना तेजोवध के [सक्किंदस्साणाणुसारं] शक्रेन्द्र की आज्ञानुसार [अव्वाबाहेण] अप्रतिहत [दिव्वेणं पहावेणं] दिव्यप्रभाव से [कोमलकरयलसंपुडेणं गिण्हइ] अपने कोमल करसम्पुट में ले लेता है ॥१३॥

मूलम्–तए णं सक्कवयणसंदिट्ठे हियाणुकंपए सासणहिए से हरिणेगमेसी देवे सिद्धत्थस्स रण्णो इंदावासायमाणे रायभवणे सोभग्गसुहपेसलाए तिसलाए सुहं सुहेणं सयमाणाए अंतिए आगच्छइ, आगच्छित्ता तिसलाए खत्तियाणीए सपरियणाए ओसोवणिं निद्दं दलेइ, दलित्ता असुभे पोग्गले साहरइ, सुभे पोग्गले पक्खिवइ. पक्खिवित्ता समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं

अकिलामं अगिलामं अमिलाणं सक्किंदस्साणाणुसारं अव्वाबाहेणं दिव्वेणं पहावेणं आसोयबहुलस्स तेरसीपक्खेणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं चंदेणं जोगमुवगएणं तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरइ। जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे तं पि य णं देवानंदाए माहणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तिण्णाणोवगए यावि होत्था। साहरिज्जिस्सामित्ति जाणइ, साहरिए-मिति जाणइ, साहरिज्जमाणे वि जाणइ, असंखेज्जसमइए णं से काले पण्णत्ते। तए णं से हरिणेगमेसी देवे तं समणं भगवं महावीरं तज्जणणिं च तिसलं देविं वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो तमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणइ ॥१४॥

शब्दार्थ—[तए णं सक्कवयणसंदिट्ठे] उसके बाद शक्रेन्द्र द्वारा आज्ञा प्राप्त [हियाणुकंपए] हित की अनुकम्पा करनेवाला [सासणहिए] शासन का हित चाहनेवाला [से हरिणेगमेसी देवे] वह हरिणैगमेषी देव [सिद्धत्थस्स रण्णो] सिद्धार्थ राजा के [इंदावासायमाणे रायभवणे] इन्द्र भवन के समान राजभवन में [सोभग्गसुहपेसलाए] सौभाग्यसुख से सुन्दर [तिसलाए सुहं सुहेणं सयमाणाए अंतिए आगच्छइ] और सुखपूर्वक सोती हुइ त्रिशला के समीप आया, [आगच्छित्ता] आकर [तिसलाए खत्तियाणीए] त्रिशला क्षत्रियाणी को परिजनों सहित [ओसोवणिं निदं दलेइ] अवस्वापिनी निद्रा में सुला दिया [दलित्ता असुभे पोग्गले साहरइ] सुलाकर अशुभ पुद्गलों का संहरण किया [सुभे पोग्गले पक्खिवइ पक्खिवित्ता] और शुभ पुद्गलों का प्रक्षेप किया। प्रक्षेप करके [समणं भगवं महावीरं] श्रमण भगवान महावीर को [अव्वाबाहं] बाधारहित [अकिलामं] श्रमरहित [अगिलाणं] ग्लानिरहित [अमिलाणं] खेद-म्लानता

रहित [सक्किंदस्साणाणुसारं] शक्रेन्द्र की आज्ञा के अनुसार [अव्वाबाहेणं] अप्रतिहत [दिव्वेणं पहावेणं] दिव्य प्रभाव से [आसोयबहुलस्स तेरसीपक्खेणं] आश्विन–मास के कृष्ण पक्ष की तेरस के दिन [हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं चंदेण जोगमुवगएणं] चन्द्रमा के साथ हस्तोत्तरा–उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का योग होने पर [तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिंसि] त्रिशला क्षत्रियाणि के उदर में [गब्भत्ताए साहरइ] गर्भरूप से संहरण कर देता है [जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए] और त्रिशला क्षत्रियाणी का [गब्भं तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए] जो गर्भ था उसका देवानंदा ब्राह्मणी की [कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरइ] कुक्षी में गर्भरूप से संहरण कर देता है।

[तेणं कालेणं तेणं समएणं] उस काल और उस समय में [समणे भगवं महावीरे] श्रमण भगवान महावीर [तिण्णाणोवगए यावि होत्था] तीन ज्ञानों से युक्त थे [साहरिज्जिस्सामित्ति जाणइ] 'संहरण होगा' १ यह जानते थे। [साहरिए–मित्ति जाणइ]

'संहरण हो गया'३ यह जानते थे। [साहरिज्जमाणेवि जाणइ] 'संहरण हो रहा है'२ यह भी जानते थे [असंखेज्जसमएणं से काले पण्णत्ते] क्योंकि संहरण का काल असंख्यात समय का कहा गया है।

[तए णं से हरिणेगमेसी देवे] उसके बाद वह हरिणैगमेषी देव [तं समणं भगवं महावीरं] उन श्रमण भगवान महावीर को [तज्जणणिं च तिसलं देविं वंदित्ता नमंसित्ता] और उनकी माता त्रिशला देवी को वंदना नमस्कार करके [जामेव दिसिं पाउब्भूए] जिस दिशा से आया था [तामेव दिसिं पडिगए] उसी दिशा में उसी ओर लौट गया [सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो] और शक्र देवेन्द्र देवराज की [तमाणत्तियं] उस आज्ञा को [खिप्पामेव पच्चप्पिणइ] शीघ्र ही वापस लौटा दिया ॥१४॥

मूलम्—तए णं सा तिसला खत्तियाणी तंसि तारिसगंसि चारु छद्दारुय-वेरुलियाइ विविहमाणिक्क चित्तिय मसिण मणोहरा रंभ-खंभो-वंतकंत साल-

भंजिया मंजुमणिकंचणरयणथंधुरासिखरनिस्संकविडंकाविसालविविहमाणिजाल विद्दलचंदपगासंतबहुरूवं करयणरइयसोवाणपरंपरानिज्जूहसमूहसुंदरंतरकणग-किंकिणीकासिकणगालिया चंदसालिया विविहविभत्तिकलिए रयणखइय-मासिणहेमकुड्डे हंसगब्भरयणाविरइयविउलदारे गोमेज्जगमाणिरइयइंदकीले चारु लोहियक्खउज्जोइयचोकट्ठे मरगयवज्जग्गलललियकवाडे पंचवण्णरयणविणि-म्मियतोरणविचित्ते दित्तजोइरयणाविरइयचंदए चित्ताचित्तियफलिहरयणहंसमा-लिया तिरिक्कयगगणतलडुंतसच्चहंसे मंदाणिलपेलियजंबूणयमयपत्तलसुत्तप्पोयु-ज्जलमाणिमोत्तियझल्लरीनिस्सरंतछत्तीसरायराइणीगुंजिए सरसनिरुवमधाऊ-वलरागरंजिए, बाहिरओ अइधवलियघट्ठमट्ठे, अब्भिंतरओ चित्तियविचित्तपवित्त-चित्ते पवंचियपंचवण्णमाणिरयणकुट्टिमतले कमललया कुसुमवल्ली ललिय पुप्फ-

जाइचित्तालंकियउल्लोयचंचिओवरितले कुसलललामकणगकलससुरइयपडिपुं-
जियसरससारससोहंतदारभागे लंबंतसुवण्णप्पहाणमणिसुत्तालल्लामदामविरइय-
दारसुसमे सुगंधबंधुरकुसुममउलपम्हल सुकप्पतप्पसोहिए हियमणरंजए कप्पूर-
लविंगमलययचंदणकालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवडज्झंतउब्भूयसुरहिमघमघंतगं-
धबंधुरे सुगंधोद्धुरगंधिए गंधवट्टिभूए मणिगणाकिरणदूरीकयंधयारे पंचवण्ण-
रयणोवसोहिए, डज्झंतधूवधूमपडलंबुयकंते चित्तरत्तमणिरोईसुविज्जुब्भाइए
मिउमयंगणिणाए मेहजालब्भमनच्चिअमोरे चंतकंतमाणिणिज्झरनीरे सिप्पकला-
कमणिज्जे अइरमणिज्जसगसोहाविडंबियसुरवरविमाणे सव्वोउयसुहभवणे
अचिंतरिद्धिसंपण्णे वरभवणे तंसि तारिसगंसि उभओ लोहियक्खमयविब्बोयणे
तवणिज्जमयगंडोवहाणकलिए सालिंगणवट्टिए दुहओ उण्णए मज्झेणं गम्भीरे

गंगापुलिणवालुयाउद्दालसालिसए उयचिय खोमदुगूलपट्टपडिच्छन्ने अत्थरय-मलगनवयकुसत्तलिंबसीहकेसरच्छाइए सुविरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुडे सुरम्मे-आईणगरूयबूरणवणीयतूलफासमउए पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे सयणिज्जे तंसि तारिसगंसि सुहं सयाणा पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि सुत्त-जागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमे एयारूवे उराले कल्लाणे सिवे धन्ने मंगल्ले सस्सिरीए हियकरे सुहकरे पीइकरे चउद्दसमहासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा। ते णं महासुमिणा इमे-गयो १ वसहो २ सीहो ३ लच्छी ४ दामं ५ ससी ६ दिणयरो ७ झओ ८ कुम्भो ९ पउमसरं १० सागरो ११ विमाण १२ रयणुच्चओ १३ सिही १४ य ॥१५॥

शब्दार्थ—[तए णं सा तिसला खत्तियाणी] इसके बाद वह त्रिशला क्षत्रियाणी

[तंसि तारिसगंसि] जिस प्रकार के सुन्दर भवन में शयन कर रही थी उस राजभवन का वर्णन करते हैं–[चारु छद्दारुय] उस राजभवन के किवाडों में छह सुन्दर काष्ठ लगे हुए थे। [वेरुलियाइ] वैडूर्य आदि [विविहमाणिक्क] अनेक प्रकार की मणियों से [चित्तिय] चित्रित [मसिण] चिकने तथा [मणोहरा रंभखंभो] मनोहर बनावटवाले स्तंभों के [वंत कंत सालभंजिया] अन्तिम भाग के समीप सुन्दरपुतलियों से [मंजु मणि-कंचणरयणबंधुरसिखर] मनोहर मणियों, स्वर्ण एवं रत्नों से सुहावने शिखरों [निस्संक विडंग] घातक प्राणियों की शंका से रहित कपोत पालिका (महल आदि के अग्रभाग पर काठ आदि के बने हुए पक्षियों के निवासस्थान से) [विसालविविहमणिजाल विदल-चंदपगासंत बहुरूवं करयणरइयसोवाण] विशाल और विविध प्रकार की वज्र आदि मणियों के समूह तथा अर्द्धचन्द्र के समान चमकनेवाले, नाना प्रकार के चिह्नों से युक्त रत्नद्वारा रचित सीढियों की [परंपरा] परम्परा से [निज्जूहसमूहसुंदरंतरं] निर्यूहों–

दरवाजे के आजू बाजू दीवार से बाहर निकले हुए अश्व आदि की आकृति के काष्ठों से सुशोभित भीतरी भाग से, [कणग किंकिणी] सोने की घुघुरुओं से [कासि] शोभायमान [कणयालिया चंदसालिया] कनकालिका–भवन के एक भाग से, तथा चन्द्रशाला-भवन के शिरोगृह से, [विविहविभत्तिकलिए] वह भवन सुन्दर प्रतीत होता था [रयणखइयमसिणहेमकुड्डे] उस भवन की सुवर्ण की दीवारे थी वह चिकनी और उसमें रत्न जडे हुए थे। [हंसगब्भरयणविरइयविउलदारे] हंसगर्भ नामक रत्नों के बने हुए विशाल द्वार थे [गोमेज्जग मणिरइयइंदकीले] गोमेद मणियों द्वारा रचित इन्द्र कील–द्वार का अवयव विशेष था [चारुलोहियक्खउज्जोइयचोकट्ठे] मनोहर लोहिताक्ष मणियों से उसकी चौकठ बनी थी, [मरगयवज्जग्गलललियकवाडे] मरकत एवं वज्रमणियों से बनी आगल से किवाड मनोहर जान पडते थे [पंचवण्णरयणविणिम्मियतोरणविचित्ते] वह पांच रंग के रत्नों से बने तोरणों से शोभायमान

था [दित्तजोइरयणविरइयचंदए] वहां देदिप्यमान आभावाले रत्नों के चन्दोवे बने थे [चित्तचित्तियफलिहरयणहंसमालिया] अद्भुत रूप से चित्रित की गई स्फटिक मणियों की हंसमालाए [तिरक्कय गगणतलुड्डंत सच्चहंसे] गगनतलमें उडनेवाले सच्चे-सजीव हंसों को भी तुच्छ बनाती थी [मंदाणिलपेलियजंबूणयमय] मंद मंद पवन से हिलनेवाली सुवर्णमय [पत्तल सुत्तप्पोयुज्जलमणिमोत्तिय] पतले सूत में पिरोइ गई मणि–मोतियों की [झल्लरी निस्सरंतछत्तीसराय–राइणी] झालर से निकलनेवाली छत्तीस राग–रागिनियों से [गुंजिए] गूंजता रहता था। [सरसणिरुवमधाऊवलराग-रंजिए] वह शोभनीय तथा अनुपम सोने की दीवारों की शोभा बढानेवाली सोनागेरू आदि के रंगों से रंगा था। [बाहिरओ अइधवलियघट्ठमट्ठे] भवन का बाह्य भाग एक-दम श्वेत घिसा हुआ और साफ किया हुआ था और [अब्भिंतरओ चित्तिय विचित्त-पवित्तचित्ते] भीतरी भाग में अनोखे अनोखे स्वच्छ चित्र बने हुए थे। [पवंचिय पंच-

वण्ण मणिरयणकुट्टिमतले] उसका भूमितल–स्पर्श श्वेत आदि पांच वर्णों के मणि-रत्नों द्वारा रचित था। और [कमललयाकुसुमवल्ली ललियपुप्फजाइ] कमलों, बिना फूल की वेलों पद्मनाग अशोक आदि फूलवाली लताओं तथा सुन्दर सुन्दर पुष्पों की [चित्ता-लंकिय उल्लोयचंचिओवरितले] चित्रों से सुशोभित उसका उपरि भाग छत था। [कुसल ललामकणगकलस सुरइय] मंगल सूचक सुन्दर स्वर्णमय कलशों सें सजाए हुए, [पडिपुंजियसरससारससोहंतदारभागे] पुंजी कृतबहुत से एकत्र किये हुए तथा पराग युक्त कमलों से उस भवन का द्वारभाग शोभायमान हो रहा था [लंबंत सुवण्ण प्पहाणमणिमुत्ताललाम] लटकती हुई, सोने के सूत में गूंथी हुई तथा मणियों एवं मोतियों से मनको हरनेवाली [दामविरइयद्दारसुसमे] मालाएँ द्वार की शोभा बढा रही थी। [सुगंधबंधुरकुसुममउलपम्हलसुकप्पतप्पसोहिए] वह भवन सुगन्ध से सुन्दर, सुमन के समान कोमल खूब चिकनी और सुन्दर रचनावाली शय्या से शोभित

थी, [हियय मणरंजए] वह राजभवन चित्त और मन दोनों में चमत्कार उत्पन्न करनेवाला था, [कप्पूरलविंगमलययचंदणकालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरक्कधूव] कपूर और लौंग मलयचंदन कृष्णागुरु [काला अगर] कुन्दुरुक्क तुरुष्क आदि धूप [डज्झंत उब्भूयसुरहि मघमघंतगंधबंन्धुरे] इन सब सुगन्धि द्रव्यों से उत्पन्न हुए सौरभ से मघमघाते हुए गन्ध से वह भवन मनोज्ञ मालूम होता था [सुगंधोद्धुरगंधिए गंधवट्टिभूए] सब सुगन्धि में श्रेष्ठ सुगंध वहां महक रही थी वह सुगन्ध–द्रव्यों की गुटिका सा अर्थात् अत्यन्त सुगन्धयुक्त था, [मणिगणकिरणदूरिकयंधकारे] वैडूर्य आदि मणियों के समूह की किरणों ने वहां के अंधकार को दूर कर दिया था। [पंचवण्णरयणोवसोहिए] वह श्वेत आदि पांच रंगों के रत्नों से सुशोभित था। [डज्झंत–धूवधूमपडलंबुयकंते] जलाई हुइ धूप से उठनेवाले धूम पडल के कारण वह मेघ के समान मनोहर प्रतीत होता था [चित्तरत्तमणिरोईसुविज्जुब्भाइए] विचित्र लाल मणियों की किरणों का

समूहरूपी सुन्दर विद्युत् से शोभायमान था। [मिउमयंगणिणाए] उसमें मृदंग की मृदुल ध्वनि होती थी [मेहजालब्भमनच्चियमोरे] मृदंग की ध्वनि सुनकर मयूरों को मेघों का भ्रम हो जाता था और वे नाचने लगते थे। [चंदकंतमणिणिज्झरनीरे] वह चन्द्रकिरणों का संयोग होने पर चन्द्रकान्तमणियों से झरनेवाले जल से युक्त था [सिप्पकलाकमणिज्जे] शिलपकला से कमनीय था, अतएव अत्यन्त ही रमणीय था। [अइरमणिज्जसगसोहाविडंबियसुरवरविमाणे] अपनी अनुपम शोभा से देवविमान को भी मात करता था [सव्वोउयसुहभवणे] सभी ऋतुओं में सुख जनक था [अचिंत रिद्धि संपण्णे वरभवणे] अचिन्त्य ऋद्धि वैभव से सम्पन्न श्रेष्ठ भवन में [तंसि तारिस-गंसि] पूर्वोपार्जित पुण्य के धारक पुरुषों के निवास के योग्य था इस प्रकार के उत्तम भवन में एक शय्या थी [उभओ लोहियक्खमयविब्बोयणे] उस पर दोनों ओर सिर और पैर की तरफ लोहिताक्ष रत्नों के उपधान (तकिये) लगे हुए थे [तवणिज्जमय

गंडोवहाणकलिए] कनपटी रखने के लिये सोने के बने उपधान (तकिया) से युक्त थी [सालिंगणवट्टिए] उसपर शरीर प्रमाण उपधान बिछा था। [दुहओ उण्णए मज्झेणं गंभीरे] वह दोनों तरफ ऊँची ओर मध्य में झुकी हुई थी—गम्भीर थी [गंगापुलिण-वालुयाउद्दालसालिसए] जैसे गंगा के किनारे की बालू में पांव रखने से पांव घस जाता है, उसी प्रकार उस में घस जाता था। [उयचियखोमदुगुल्लपट्टपडिच्छिन्ने] कसीदा काढे हुए क्षौमदुकूल का चद्दर बिछा हुआ था। [अच्छरयमलयनवयकुसत्तलिंबसीहकेसरच्छा-इए] वह आस्तरक, मलक, नवत कुशक्त, लिम्ब और सिंह केशर नामक आस्तरणों से आच्छादित थी [सुविरइयरयत्ताणे] धूल से बचाने के लिए उस पर सुन्दर बना हुआ रजस्त्राण पडा रहता था [रत्तंसुयसंवुडे] उस पर मसहरी लगी हुइ थी। [सुरम्मे] वह अतिशय रमणीय थी। [आइणग रूय—बूरणवणीयतुल्लपासमउए] उसका स्पर्श आजिनक (चर्म का वस्त्र) रूई बूर नामक वनस्पति और मक्खन के समान नरम था। [पासाईए]

दर्शकों के मन में आनन्द उत्पन्न करती थी [दरिसणिज्जे] दर्शनीय [अभिरूवे] अभिरूप [पडिरूवे] प्रतिरूप थी–असाधारण सुन्दर थी [सयणिज्जे तंसि तारिसगंसि सुहं सयाणा] अपूर्व पुण्यशाली जीवों के शयन करने योग्य ऐसी शय्या पर सुखपूर्वक सोती हुई त्रिशला देवीने [पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि] मध्य रात्रि के समय [सुत्तजागरा ओहिरमाणी ओहिरमाणी] त्रिशलारानीने जब नगहरी नींद में थी और न जाग रही थी, बल्कि बार बार हल्की–सी नींद ले रही थी उंघ रही थी तब उसने [इमे एयारूवे उराले कल्लाणे] आगे बताये जानेवाले उदार कल्याणकारी [सिवे धन्ने मंगल्ले] शिव-उपद्रव का नाश करनेवाले, धन्य–धन प्राप्ति करानेवाले मांगलिक पाप विनाशक [सस्सिरिए] सश्रीक [हियकरे] हितकर [सुहकरे] सुखकर [पीइकरे] प्रीतिकारक [चउद्दसमहासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा] ऐसे चौदह महास्वप्नों को देखकर त्रिशलारानी जाग उठीं [तेणं महासुमिणे इमे] वे महास्वप्न ये हैं–[गय] गज [वसहो] वृषभ [सीहो]

सिंह [लच्छी] लक्ष्मी [दामं] माला [ससी] चन्द्रमा [दिनयरो] सूर्य [झओ] ध्वजा [कुंभो] कुंभ [पउमसर] पद्मसरोवर [सागरो] समुद्र [विमान] विमान [रयणुच्चओ] रत्नराशि [सिही य] धूमरहित अग्नि।

गयसुमिणे

मूलम्—तत्थ खलु तिसला खत्तियाणी तप्पढमयाए चउद्दंतं समुत्तुंगंगं निज्जलविसालजलहरघणसारहारतुसारनीरखीरसायरनिसायरकररययगिरिवरपं-डुरसरीरं भमंतमंजुगुंजंतामिलिंदविंदालंकियसुगंधबंधुरदाणधाराकलियकवोल-जुयलमूलरुइरं पुरंदरकुंजरवरसहोयरं ललामलीलायरं जलसंबलियाडंबरकरं-बियविउलजलहरगज्जियगंभीरमंजुणिणयं नयणसुहयं गयवरसयललक्खण-लक्खियं वरोरुं मंगलं करिवरं पासइ ॥१६॥

शब्दार्थ—[तत्थ खलु तिसला खत्तियाणी तप्पढमाए] उनमें से त्रिशला क्षत्रियाणी सब से पहले श्रेष्ठ हाथी को देखती है। [चउदंत] वह हाथी चार दांतोंवाला था [समुत्तुंगंग] उसका शरीर खूब उंचा था [निज्जलविसालजलहर] जलरहित महामेघ [घणसारहारतुसारनीर] कपूर, मोतियों के हार तुषार (वर्फ) जल [खीरसायर निसायरकर] क्षीरसागर चन्द्रमा की किरण [रययगिरिवरपंडुरसरीर] एवं रजतपर्वत के समान शुभ्र शरीरवाला था [भमंतमंजुगुंजंतमिलिंदविंदा] इधरउधर डोलते हुए तथा मधुर गुंजार करते हुए भ्रमरों के समूह से [लंकियसुगन्धबंधुरदाणधाराकलिय] सुशोभित और सुगन्ध युक्त मदधारा से युक्त [कवोलजुयलमूलरुइरं] उसके दोनों कपोल अत्यन्त सुहावने जान पडते थे। [पुरंदरकुंजरवरसहोदरं] वह हाथी इन्द्र के ऐरावत हाथी के जैसा लगता था [ललामलिलायरं] सुन्दर लीला करनेवाला था [जलसंवालियाडंबरकरंविय विउलजलहरगज्जियगंभीरमंजुणिणयं] जल से परिपूर्ण और आडम्बरयुक्त

विशाल मेघों की गर्जना के समान गंभीर और मनोहर ध्वनि करनेवाला था। [नयणसुहयं] आखों को आनन्द देनेवाला था [गयवरसयललक्खणलक्खियं] श्रेष्ठ हाथी के समान समस्त लक्षणों से युक्त था [वरोरुं मंगलं करिवरं पासइ] उत्तम जांघोवाला तथा मंगलरूप था ॥१६॥

उसभ सुमिणे २

मूलम्–तओ पुण सा धवलकमलदलकयंबगातिगदेहकंतिं रोईचओवहारेहिं सव्वओ समंता वियासयंतं पुप्फरंतकंतिमंसलविसालककुयं, तणुतमविसदसुकुमाललोममसिणज्जुइ, निच्चलसुबद्धमंसलपिच्छलसुविभत्तमंजुलंगं, घणावत्तणिद्धमणहरनिसियविसालसिंगं, संतं दंतं समाणसोहमाणविमलदंतंसयलगुणसमन्नियं हिमसेलसन्निहं वसहं पासइ ॥१७॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद उसने (त्रिशला क्षत्रियाणीने) [धवलकमलदलकयंबगातिग] शुभ्र वर्ण के कमलपत्रों के समूह से भी बढकर [देहकंतिं] शरीर की कान्तिवाले [रोईचओवहारेहिं सव्वओ समंता वियासयंतं] वह अपने शरीर से उत्पन्न होनेवाले प्रकाश के समूह को सब ओर फैला रहा था और उससे सभी दिशाएँ प्रकाशित हो रही थीं। [पुप्फरंतकंतिमंसलविसालकुकुयं] अपनी दीप्ति को प्रकाशित करता हुआ पुष्ट और विशाल ककुद से युक्त था। [तणुतसविसदसुकुमाललोममसिणज्जुइ] अत्यन्त बारीक निर्मल और सुकुमार रोमों से कोमलकान्तिवाले [निच्चललबद्धमंसल—पिच्छलसुविभत्तमंजुलंगं] एवं निश्चल सटे हुए पुष्ट चिकने भलीभांति विभागों से युक्त तथा मनोहर अंगोवाले [घणावत्तणिद्धमणहरनिसियविसालसिंगं] सघन गोल चिकने सुन्दर तीखे और विशाल सीगोंवाले, [संतं दंतं समाणसोहमाणविमलदंतं] शान्त, दांत एक सरीखे शोभायमान निर्मल दांतों से युक्त [सयलगुणसम-

न्नियं] समस्तगुणों से संपन्न तथा [हिमसेलसन्निहं वसहं पासइ] हिमालय पर्वत जैसे वृषभ को देखा ॥१७॥

सीहसुमिणे ३

मूलम्–तओ पुण सा सलिलबिंदुकुंदेंदुतुसारगोखीरहारदगरयपंडुरतरं रम-णिज्जपेच्छणिज्जथिरमसिणतरकरतलं परिपुट्ठसुसिलिट्ठविसिट्ठकुडिलतिक्खदाढा-विडंबियमुहं विमलकमलकोमल–ललियलोहियदसणवसणं जवाकुसुमपलासा-लत्तगरत्तकमलदलमिदुलललंतलंबलालियलोलरसणं धगधगिति जलंताणलंत-रालमूसालसंत आवत्तायंतामलकणगसगलवत्तुलविमलचवलाविडंबिनयणं किस-कडितडं विसालथूलसुंदरोरुं मंसलविसालबंधुरखंधं, मिउलतमसुलक्खणमासिण-जडिलकेसरनिगरकरंबियगीवं, । कुंडलिओदंचिअ अकिंचिअप्फालियाविलोललंगू-

लमंडलं खरयरनहरासिहरं, सोम्मं सोम्मागारं लीलाल्लामप्फालं अंबरतलाओ उच्छलंतं नियमुहकुहरमभिपडंतं सीहं पासइ ॥१८॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद त्रिशलादेवीने तीसरे स्वप्न में सिंह को देखा वह सिंह [सलिलबिंदुकुंदेंदुतुसारगोखीरहारदगरयपंडुरतरं] जल की बूंद, कुन्द के फूल, चन्द्रमा, हिम, गाय के दूध, हार और पानी के छोटे बिन्दु से भी अधिक सफेद था [रमणिज्जपेच्छणिज्जथिरमसिणतरकरतलं] उसकी हथेलियां (पंजे) सुन्दर दर्शनीय, स्थिर और खूब चीकनी थी। [परिपुट्ठसुसिलिट्ठविसिट्ठकुडिलतिक्खदाढा-विडंबियमुहं] उसका मुख बडी–बडी आपस में मिली हुई, उत्तम, टेढी और तीखी दाढों से युक्त था [विमलकमलकोमलललियलोहियदसणवसणं] उसके होठ विमल कमल के समान कोमल कमनीय एवं लाल रंग के थे। [जवाकुसुमपलासालत्तगरत्त-कमलदलमिदुलललंत] जपाकुसुम के समान, पलाश के पुष्प के समान तथा महावर

[अलता] के समान लाल, कमल के पत्र के समान कोमल लपलपाती [लंब लालिय-लोलरसणं] लम्बी लारदार और चंचल उसकी जीभ थी [धगधगिति जलंताणलांतरा-लमूसालसंतआवत्तायंता] उसकी आंखे धकधकती हुइ आग में रखे हुए मूषा [सोने को गलाने का मिट्टी का पात्र) में सुशोभित होनेवाले गोलाकार [मलकणगसगलवत्तुल-विमलचवलाविडंबिनयणं] घूमनेवाले निर्मल स्वर्णखण्ड के समान गोल और चम-कती हुइ बिजली को भी तिरस्कृत करनेवाली थी। [किसकडितडंविसालथूलसुंदरोरुं] उसकी कमर पतली थी और जंघाए विशाल स्थूल और सुन्दर थी [मंसलविसाल-बंधुरखंधं] उसका कंधा मांसल, विशाल और सुन्दर था [मिउलतमसुलक्खणमसिण-जडिलकेसरनिगरकरंबियगीवं] उसकी गर्दन अत्यन्त नरम, सुहावने चिकने और लम्बे केसरों से युक्त थी। [कुंडलिओदंचिअअकिंचि अप्फालियविलोललंगूलमंडलं] उसकी पूछ गोलाकार उंची चढाई हुई, लम्बी और चपल थी [खरयरनहरसिहरं]

नाखूनों की नोंक खूब तीक्ष्ण थी [सोम्मं सोम्मागारं] वह सौम्य तथा सौम्य आकार-वाला था [लीलाललामप्फालं] उसकी उछाल में कलामय लालित्य था [अंबरतलाओ उच्छलंतं] आकाशतल से उछलते हुए और [नियमुहकुहरमभिपडंतं सीहं पासइ] अपने मुखरूपी गुफा में प्रवेश करते हुए ऐसे सिंह को देखा ॥१८॥

लच्छीसुमिणे ४

मूलम्—तओ पुण सा उच्चविराइयट्ठाणकयासणं दिव्वनव्वभव्वाणणं करचरणसंठियसोत्थियसंखंकुसचक्काइसुहरेहं सुकुमालकरसाहालेहं जच्चंजणभमरजलहरणिगररिट्ठगगवलगुलियकज्जलरोइसमसंहियतणुयरमिउलमंजुलरोमा - वलिं फीय णवणीयचिक्कणपाणिरुहावलिं, कणगकच्छवपिट्ठमट्ठविसिट्ठचरणजुगलं कुंडलपरिमंडियललियकवोलमंडलं फारहाररायमाण सव्वोउयसुगंधिकुसुमललाम-

दामपरिणद्धवच्छत्थलं उन्नयमंसलमिउलतणुलयं मंजुलमणिगणकणखइयकंचण-कंचीचंचियकडितडं चंदद्धसमनिलाडं नाणामणिकणगरयणविमलमहातवणिज्ज-रइयभूसणहारद्धहारपाउत्तरयणकुंडलवामुत्तकहेमजालमणिजालकणगजालसुत्त-गतिलगफुल्लगासिद्धत्थियकण्णवालियससिसूरउसभवक्कयतलभंगयतुडियहत्थमा-लयहरिसकेऊरवलयपालंब अंगुलिज्जगवलक्खदीनारमालियापयरगपरिहेरगपाय-जालघंटियखिंखिणिरयणोरुजालछड्डियवरनेउरचलणमालिया कणगनिगलजालग-मगरमुहविरायमाणनेउरपचलियसद्दालरइराभरणं, लोहियकमलदलकोमलकर-चरणं, विमलकमलदलविसाललोयणपाणिपल्लव गाहिय भमरनिगरविडंबिलंबमाण-सोहंतकयनियय, सुंदरवयणकरचरणनयणलावण्णरूवजोव्वणकलियं, पडि-पुण्णसव्वंगोवंगललियं, करचरणोत्तमंगपमुहं गोवंगसंगयमणिगणकंचणरयण-

रइयाभरणकिरणनासियंधतमसं विगयमरिसं विमलकंतिसमुज्जोइयदसदिसं कमलागरकमलनिवासिणिं सयलजणमणहिययपल्हाइणिं भगवइं विगसिय कमलदललच्छि लच्छि पासइ ॥१९॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद त्रिशला देवीने चौथे स्वप्न में लक्ष्मी को देखा। उसका वर्णन इस प्रकार है। [उच्चविराइयट्ठाणकयासणं] वह लक्ष्मी उच्च तथा सुशोभित स्थानपर विराजमान थी [दिव्वनव्वभव्वाणणं] उसका मुख दिव्य नव्य और भव्य था [करचरणसंठिय] उसके हाथों पैरों में [सोत्थिसंखंकुसचक्काइसुहरेहं] स्वस्तिक शंख अंकुश तथा चक्र आदि की शुभरेखाएँ अंकित थीं [सुकुमालकरसाहालेहं] वह सुकुमार उंगलियोंवाली थी [जच्चंजणभमरजलहरनिगररिट्ठगगवलगुलियकज्जल-रोइसमसंहियतणुयरभिउलमंजुलरोमावलिं] उसकी रोमावली उत्तम आंजन भ्रमर मेघपटल, अरिष्टकालारत्नविशेष भैंस के सींग, नील और कज्जल के समान आभा-

वाली एक सरीखी, आपस में मिली हुइ बहुत बारीक, मृदुल और मनोहर थी [फीयणवणीयचिक्कणपाणिरुहावलिं] स्वच्छमक्खन के समान चिकनी नरम थी। [कणगकच्छवपिट्ठमट्ठविसिट्ठचरणजुगलं] उसके दोनों चरण स्वर्णमय कछुवे की पीठ के समान पुष्ट और विशिष्ट थे [कुंडलपरिमंडियललियकवोलमंडलं] सुन्दर कपोलों पर कुंडल सुशोभित हो रहे थे [फारहाररायमाणसव्वोउयसुगंधिकुसुमललामदामपरिणद्धवच्छत्थलं] वक्षस्थल पर विशाल मुक्ताहार तथा शोभायमाण सर्वऋतुसंबन्धी कुसुमों की मनोहर माला विराजमान थी। [उन्नयमंसलमिउलतणुलयं] उसकी शरीरलता उन्नत मांसल और मृदुल थी [मंजुलमणिगणकणखइयकंचणकंचीचंचियकडितडं] कटिभाग मनोज्ञमणियों के कणों से जटित सुवर्ण की करधनी से युक्त था [चंदद्धसमनिलाडं] ललाट अर्द्धचन्द्र के समान था [नाणामणिकणगरयणविमलमहातवणिज्जरइयभूसणहारद्धहारपाउत्तरयगकुंडल] एवं जो नाना प्रकार के मणियों के सुवर्णों एवं रत्नों के बने हुए

आभरण तथा हार अर्द्धहार रत्नजटित कुंडल धारण की हुइ [वामुत्तगहेमजालमणिजालकणगजालसुत्तगतिलग] हेममाला, मणिमाला कनकमाला कटिसूत्र तिलक [फुल्लगसिद्धत्थियकण्णवालियससिसूरउसभवक्कयतलभंगय] फुल्लक सिद्धार्थिका, कर्णवालिका, चन्द्र [चांदला] सूर्य [सूर्य के आकार का आभूषण] वृषभवक्त्रक तलभंग [तुडियहत्थमालयहरिसकेऊरवलयपालंब] त्रुटित, हस्तमालक, हर्ष, केयूर, वलय, प्रालंब [अंगुलिज्जगवलक्खदीणारमालिया] अंगुलीयकवलाक्ष दीनारमालिका [पयरगपरिहेरगपायजालघंटियखिंखिणि] प्रतरक परिहार्यक पादजाल घूंघरू किंकिणी [रयणोरुजालछड्डियवरनेउर] रत्नों के विशाल समूह से जटित श्रेष्ठ नूपुर [चलणमालिया कणगनिगलजालगमगरमुहविरायमाणनेउर] चरणमालिका कनक निगड जालक मकर के मुख की आकृति से शोभायमान नूपुर [पचलियसद्दालरुइराभरणं] सुन्दर इन समस्त आभूषणों से सुशोभित थी। [लोहिय कमलदलकोमलकरचरणं] उसके हाथ

और पैर (के तलिये) लाल कमल के समान कोमल थे [विमलकमलदलविसाललोयण] नेत्र निर्मल कमल के समान विशाल थे। [पाणिपल्लवगहियभमरनिगरविडंविलंबमाणसोहंतकयनियं] हाथों में गृहीत भ्रमरगण को भी तिरस्कृत करनेवाले लम्बे और सुन्दर केश थे [सुंदरवयणकरचरणनयणलावण्णरूवजोव्वणकलियं] वह सुन्दर मुख हाथ पैर और नेत्रवाली थी तथा लावण्य रूप और यौवन से सम्पन्न थी [पडिपुण्ण सव्वंगोवंगललियं] प्रतिपूर्ण समस्त अंगोपाङ्ग से सुन्दर थी। [करचरणोत्तमंगपसुहंगोवंगसंगयमणिगणकंचणरयणरइयाभरणकिरणनासियंधतमसं] हाथों पैरों और सिर आदि पर धारण किये हुए मणिगण, सुवर्ण एवं रत्नों के आभूषणों की किरणों से अंधकार को नाश कर रही थी [विगयमरिसं विमलकंतिसमुज्जोइयदसदिसं] वह क्रोध रहित थी एवं अपनी निर्मल कांति से दशोंदिशाओं को देदीप्यमान कर रही थी। [कमलागरकमलनिवासिणिं] कमलाकर--सरोवर के कमल की निवासिनी थी [सयल-

जणमणहिययपल्हाइणिं] सब जनों के हृदय में तीव्र आल्हाद उत्पन्न करनेवाली [भगवइं विगसियकमलदलच्छि लच्छि पासइ] ऐश्वर्य आदि से सम्पन्न तथा खिले हुए कमलपत्तों के समान नेत्रवाली थी ऐसी लक्ष्मी को देखा ॥१९॥

पुप्फमालाजुयलसुमिणे ५

मूलम्-तओ पुण सा सरसणागपुण्णागपियंगुपाडलमंडिलमल्लिया णवमल्लिया जूहियावासंतिया कण्णिया कुडजकोरंटगकुंदकोज्जकुरबककमल-बउलबंधूगचंपगाऽसोगमंदारतिलयकयणारसहयारमंजरी जाई मालई अमंद-सुगंधबंधुरं मघमघायमाणगंधुद्धुरं सरसरमणिज्जाणुवमकिण्हणीलपीयरत्तसुक्कि-ल्लपंचवण्णसव्वोउयसुरभिकुसुमविलसंतकंतभत्तिचित्तं देवकुसुमनिम्मियपवित्तं महुलुद्धखुद्दानिलीणगुंजंतालिपुंजगुंजियप्पएसं गंधद्धाणिजणयं सयलजणमण-

हरणधुरंधरेण सुरहिगंधेणं दसदिसाओ आमोदयंतं अंबरंगणतलाओ ओयरंतं विसालं पुप्फमालाजुयलं पासइ ॥२०॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद त्रिशलारानी ने पुष्पमालाओं का एक स्वप्न देखा। वह माला युगल [सरस णागपुण्णाग] सरस नाग, पुन्नाग [पियंगु] प्रियंगु [पाडल] पाटल [मंडिल] मंडिल [मल्लिया] मल्लिका [णवमल्लिया] नवमल्लिका [जुहिया वासंतिया] यूथिका, वासंतिका [कण्णिया] कर्णिका [कुडज] कुटज [कोरंटग] कोरण्ट [कुंद] कुंद [कोज्ज] कुब्जक [कुरबग] कुरबक [कमल] कमल [बउल] बकुल [बंधूग] बन्धूक [चंपग] चम्पा [असोग] अशोक [मंदार] मंदार [तिलय] तिलक [कयणार] कचनार [सहयारमंजरी] आम्रमंजरी [जाई] जाई [मालई] मालती [अमंदसुगंधबंधुरं] इन सब प्रकार के फूलों के प्रचुर एवं प्रशस्त गन्ध से वह शोभित था [मघमघायमाणगंधुद्धुरं] वह सब तरफ फैलती हुई सुगंध से सुगन्धित था [सरसरमणिज्जा-

णुवमकिण्हनीलपीयरत्तसुक्किल्लपंचवण्ण] सरस विकसित रमणीय और सर्वोत्कृष्ट काले नीले पीले लाल और सफेद इन पांचों रंगों के [सव्वोउयसुरभिकुसुमविलसंत-कंतभत्तिचित्तं] तथा सभी ऋतुओं के सुगन्धित फूलों की शोभायमान सुन्दर या मनो-वांछित रचनाओं से अद्भुत था। [देवकुसुमनिम्मियपवित्तं] वह देवलोक के फूलों से बना था अतएव पवित्र था [महुलुद्धखुद्धनिलीण गुंजंतालिपुंजगुंजियप्पएसं] उसके आस-पास मधु अर्थात् पराग के लोभी, क्षोभ को प्राप्त अंदर स्थित तथा मधुर एवं अस्फुट शब्द करते हुए भौंरों का समूह गूंज रहा था [गंधद्धणिजणयं] वह गन्ध से तृप्ति करनेवाला था [सयलजणमणहरणधुरंधरेण] सब लोगों के मनको हरण करने में धुरन्धर--श्रेष्ठ [सुरहिगंधेण दसदिसाओ आमोदयंतं] सुगन्ध से दसों दिशाओं को आनंदित करता हुआ [अंबरंगणतलाओ ओयरंतं विसालं पुप्फमालाजुयलं पासइ] तथा आकाशतल से नीचे उतरता हुआ विशाल पुष्पमालायुगल देखा ॥२०॥

चंदसुमिणे ६

मूलम्—तओ पुण सा गोक्खीरणीरफेणरययकुंभकुंदावदायं चगोरमण-सुहयं सकलजणणयणपल्हायणकरं दिसाकंतामुगुरं धवलकमलदलोवचाइकलं कुमुयकुलविगाससीलं निसासुसमाकुसलं विमलुज्जलरययगिरिसिहरविमलं कल-धोयनिम्मलं विगयमलं सुक्कक्किण्णपक्खदुगमज्झगपुण्णमासीविरायमाणपुण्णकलं दिसामंडलप्फारंधयारपरिपाणजातोदरललियसामलकलंकं सायरतरलतरतरंगो-च्छालगं वरिसमासाइपमाणविहायगं जोइसचक्कणायगं अमयनिस्संदं निच्चंदं पुण्णचंदं पासइ ॥२१॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद महारानी त्रिशलादेवीने चन्द्र का स्वप्न देखा [गोक्खीर] वह पूर्ण चन्द्र गाय के दूध [णीरफेण] पानी के फेन [रययकुंभ] चांदी

के घट [कुंदावदायं] तथा कुंद के फूल के समान सफेद रंग का था [चगोरमणसुहयं] एव चकोर के मन को प्रसन्न करनेवाला था [सयलजणनयणपल्हायणकरं] सभी लोगों के नेत्रों को आनन्द देनेवाला था [दिसाकंतामुगुरं] दिशारूपी स्त्री के दर्पण के समान था [धवलकमलदलोवचाइकलं] सफेद कमलों—अर्थात् कुमुद पुष्पों के पत्तों को प्रफुल्लित करनेवाली कला से युक्त था [कुमुयकुलावगाससीलं] इस कारण कुमुदों के कुल समूह का विकास करनेवाला था [निसासुसमाकुसलं] रात्रि की सुषमा सौंदर्य म वृद्धि करनेवाला था [विमलुज्जलरययगिरिसिहरविमलं] विमल और उज्ज्वल चान्दी के पर्वत के समान वह निर्मल था [कलधोयनिम्मलं] चांदी के समान स्वच्छ था [विगयमलं] मलरहित था [सुक्किण्णपक्खदुगमज्झगपुण्णमासीविरायमाणपुण्णकलं] शुक्ल पक्ष और कृष्णपक्ष दोनों के बीच में स्थित पूर्णिमा के दिन प्रकाशित होनेवाली पूर्णकलाओं से युक्त था [दिसामंडलप्फारंधयारपरिपाणजातोदरललियसामलकलंकं] दिशाओं के समूह में

व्याप्त गहरे अन्धकार को पूर्ण रूप से पी जाने के कारण उदर में उत्पन्न हुए सुन्दर एवं श्यामवर्ण के चिह्न से युक्त था [सायरतरलतरतरंगोच्छालगं] समुद्र की अत्यन्त तरल तरंगों को उछालनेवाला था। [वरिसमासाइपमाणविहायगं] वर्ष मास आदि का प्रमाण करनेवाला था-अर्थात् उनका विभाग करनेवाला था [जोइसचक्कणायगं] ज्योतिषचक्र अर्थात् नक्षत्रों का नायक था [अमयनिस्संदं निच्चंदं पुण्णचंदं पासइ] अमृत बरसाने वाला था इस प्रकार के विकसितपूर्ण चन्द्रमा को देखा ॥२१॥

सूरसुमिणे ७

मूलम्—तओ पुण सा घणंधयारवारसमवहारधुरीणं, पवरपखरकिरणं दस-सयकिरणप्फुरणपगासियदिसामंडलं सुगतुंडामंदपरिणयबिंबगुंजाफलतलप्पफु-ल्लजवाकुसुमकुसुंभपलाससंकासमंडलं जोइराखंडलं, कमलवणविलासहास-

पेसलं सीय पडलविदलणकुसलं जोइससत्थलक्खणलक्खगं अंबरमंडलअ-तेलपूरधूमवज्जियललियप्पईवगं निखिलभुवणनयणं पवट्टियजोइअयणं हिम-पडलगलणकलणकुसलं मेरुगिरिसययपरिवट्टगाविसालमंडलं गहगणनायगं वासर-विहायगं नियकिरणसहस्समंदीकयचंदिराइसगलग्गहमहसमूहं परमतेयवूहं कयतिमिरपूरचूरं रुइरं सूरं पासइ ॥२२॥

शब्दार्थ–[तओ पुण सा] उसके बाद उसने सूर्य का स्वप्न देखा। वह सूर्य [घणं-धयारवारसमवहारधुरीणं] सघनअंधकार के समूह को दूर करने में अग्रणी था [पवरपख-रकिरणं] उसकी किरणें अत्यन्त श्रेष्ठ और प्रखर थी [दससयकिरणप्फुरणपगासिय-दिसामंडलं] हजार किरणों के प्रसार से दिशा समूह को उसने प्रकाशित कर दिया था। [सुगतुंडामंदपरिणयबिंबगुंजाफलतलप्पफुल्लजवाकुसुमकुसुंभपलाससंकासमंडलं] वह तोते

की चोंच के समान भलीभांति पके हुए बिम्बफल के समान तथा गुंजाफल के तल के समान लाल था और उसका मण्डल खिले हुए जपाकुसुम के समान तथा कुसुंभ के फूलपत्तों के समान लाल था [जोइराखंडलं] वह ज्योतिषी देवों का स्वामी था [कमलवणविलासहासपेसलं] कमलवन की शोभा बढाने में एवं विकास करने में कुशल था [सीयपडलविद्लणकुसलं] शीत के समूह को नाश करने में चतुर था [जोइससत्थ-लक्खणलक्खगं] ज्योतिष शास्त्र के लक्षणों को प्रदर्शित करनेवाला था [अंबरमंडल अतेलपूरधूमवज्जियललियप्पईवगं] आकाशमंडल का ऐसा अनूठा दीपक था जिसमें तेल भरने की आवश्यक्ता नहीं होती और जिसमें धुआं भी नहीं निकलता था [निखिल-भुवणनयणं] वह सारी दुनिया का नयन था [पवट्टियजोइअयणं] तारक आदि ज्योति-षियों के मार्ग को प्रवर्तित करनेवाला था [हिमपडलगलणकलणकुसलं] हिम को गलाने में कुशल था [मेरुगिरिसययपरिवट्टगविसालमंडलं] सुमेरु पर्वत की निरंतर प्रदक्षिणा करने-

वाले विशाल मण्डल से युक्त था। [गहगणणायगं] मंगल आदि ग्रहों का नायक था। [वासरविहायगं] दिन करनेवाला था [नियकिरणसहस्समंदीकयचंदिराइसगलग्गहमह-समूहं] अपनी हजार किरणों से चन्द्रमा आदि समस्त ग्रहों की प्रभा को मंद कर देनेवाला था। [परमतेयवूहं] अन्य समस्त तेजस्वी ग्रहों की अपेक्षा अधिक तेजस्वी था [कयतिमिरपूरचूरं] सब दिशाओं में व्याप्त अंधकार के समूह को नष्ट करनेवाले [रुइरं-सूरं पासइ] ऐसे सुन्दर सूर्य को देखा ॥२२॥

झयसुमिणे ८

मूलम्—तओ पुण सा जच्चकंचणलट्ठिपइट्ठियं परमसोहाकलियं अमिलियासिय-कमलुज्जलरययगिरिसिहरससिकिरणकलधोयानिम्मलेण मत्थयत्थेण पसत्थेण गग-णतलमंडलं भित्तुं विव ववसिएण सीहेण सोहमाणं, सीयलमंदसुगंधिमारुयमिउ-

फासकम्पमाणं गगणतलचुंबिणं णयणाणंदकंदलरूवं अमंदाणंदसरूवं पुंजीकय-नीललोहियपीयसियमिउलोल्लसंतमोरपिच्छविलसियमुद्धयं परिलंबियनाणाविह-कुसुमस्सयं झयं पासइ ॥२३॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद त्रिशलादेवी ध्वज का स्वप्न देखती है वह ध्वज कैसा था उसका वर्णन करते हैं–[जच्चकंचणलट्ठिपइट्ठियं] वह ध्वज उत्तम स्वर्ण के डंडे पर स्थित [परमसोहाकलियं] उत्तम शोभा से युक्त [अभिलियसियकमलुज्जल-रययगिरिसिहरससिकिरणकलधोयनिम्मलेण] खिले हुए श्वेतकमल, चान्दी के पर्वत के चमकते हुए शिखर चन्द्रमा के किरण और श्वेतस्वर्ण के समान शुभ्र [मत्थयत्थेण पस-त्थेण गगणतलमंडलं भित्तुं विव ववसिएण सीहेण सोहमाणं] उपरि भाग में स्थित प्रशस्त और मानो आकाश तल को भेदने के लिए उद्यत हुए सिंह के चिह्न से सुशोभित [सीयलमंदसुगंधिमारुयमिउफासकंपमाणं] शीतल मन्द सुगन्धित वायु के कोमल स्पर्श

से लहराती हुइ [गगणतलचुंबिणं] आकाशतल को स्पर्श करनेवाली, [णयणाणंद कंदलरूवं] आंखो को आनन्द देनेवाली [अमंदाणंदसरूवं] अतिशय आनन्दरूप [पुंजीकयनीललोहियपीयसिय] पुंजीकृत नील, लाल पीत श्वेत एवं [मिउलोल्लसंतमोरपिच्छविलसियमुद्धयं] कोमल मयूर पांखों से सुशोभित अग्रभागवाला [परिलंबियनानाविह कुसुमस्सयं झयं पासइ] तथा जिसके चारों ओर नाना प्रकार के सुगन्धित पुष्पों की मालाएँ लटक रही थीं ऐसी ध्वजा को आठवें स्वप्न में देखा ॥२३॥

पुण्णरययकलससुमिणे ९

मूलम्—तओ पुण सा जच्चकंचणचंचमाणरूवं सकलमंगलसरूवं अमलकमलकुलमंडियं असपत्तरययमंजुलकमलारोवियवरकमलपइट्ठाणं सुरभिवरवारिपडिपुण्णं चंदणकयचच्चियं आविद्धकंठेगुणं अणुवमसुसमं तयहिट्ठियदेव-

सेवियं कमलपुप्फपिहाणपिहियं, सोम्मकमलानिलयं नयणामियंजणायमाणं सव्वओ समंता पभासमाणं अइसयसोहमाणं सयलउउअणूणसुरहिप्पसूण-चारुगंथियअतुल्लमल्ललालियगलतलाभरणं पावकलावविगलं हारद्धहारपरिमं-डियगलं मंगलं सयप्पहापणासियतमसं रयणजडियकलसं पासइ ॥२४॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] तदनंतर त्रिशलादेवीने [जच्चकंचणचंचमाणरूवं] उत्तम वर्ण के सुवर्ण के समान शोभायमान [सकलमंगलसरूवं] समस्त मंगलस्वरूप [अमल-कमलकुलमंडियं] निर्मल कमलों के समूह से शोभित [असपत्तरयणमंजुलकमलारोविय-वरकमलपइट्ठाणं] अनुपम रत्नों द्वारा निर्मित सुन्दर कमल के उपर रखे हुए श्रेष्ठ कमलों पर प्रतिष्ठित [सुरभिवरवारिपडिपुण्णं] सुगन्धित और निर्मल जल से भरे हुए [चंदणकयचच्चियं] चंदन के लेप से युक्त [आविद्धकंठेगुणं] कंठ देश में बन्धे हुए लाल

सूतवाले [अणुवमसुसमं] अनुपम शोभावाले [तयहिट्ठियदेवसेवियं] उसी कलश के अधिष्ठाता देव से सेवित [कमलपुप्फपिहाणपिहियं] कमल पुष्पों के ढक्कन से ढंके हुए [सोम्मकमलानिलयं] सौम्य शोभा के घरस्वरूप [नयणाभियंजणायमाणं] अमृतमय अंजन के समान नेत्रों के आनंददाता [सव्वओ समंता पभासमाणं] चारों ओर अपनी दीप्ति फैलानेवाले [अइसयसोहमाणं] अतिशय शोभायमान [सयलउउअणूणसुरहिप्पसूणचारुगंथियअतुल्लमल्ललियगलतलाभरणं] सब ऋतुओं के प्रचुर सुगन्धित पुष्पों से सुन्दरता के साथ गूंथी हुइ सुन्दर मालाओं के कंठाभरण से युक्त [पुण्णं] पवित्र [पावकलावविगलं] अतएव पाप समूह से रहित–सब प्रकार के कुलक्षणों से वर्जित था [हारद्धहारपरिमंडियगलं] हार और अर्द्धहार से मण्डितगर्दनवाले [मंगलसयप्पहापणासियतमसं] मंगलमय और अपनी आभा से अंधकार का अंत करनेवाले [रयणजडियकलसं पासइ] रत्नजटितरजतकलश को देखा ॥२४॥

पूर्णरजतकलशस्वप्नवर्णनम्

पउमसरोवरसुमिणे १०

मूलम्—तओ पुण सा हीणपीणपाढीणमग्गुरसालसगुलराजीवरोहियाइ मीणमगरगाहसुसुमारकमढपभिइ जलयरनियरपरिपीयमाणपाणीयं तरलतरंग-तरतरंगियं कल्हारहल्लगकुवलयइंदीवरकेरवपुंडरीयकोगणयपरमसुसमासुसमियं, अरुणारुणकिरणप्फुरणउन्निद्दकमलकिंजक्कनिस्संदमाणसुरहितमपरागरागसंजाय-ईसीपीयरत्ततोयं परागपरिपाणमत्तमुइयमंजुगुंजंतअंतोभमंतमिलिंदाबिंदापहीय-माणनलिणं विहरतविविहसउणिगणं कमलिणीदलविलसंतअंबुबिंदुकयंबगजणि-यमोतियतारयाविब्भमं रयणायरसमं सरोयपुंजाहिरामं सयलसोहासुहसमन्नियं कलहंसराजहंसबालहंसचक्कवागचक्कसरससारसाखव्वगव्वाहिट्ठियविहंगमजुयल-संसेवियजललोलं अणेगविहदेवदेवीजुयलकीडणउच्छलंतकल्लोलं पेच्छयजण-

हियमणनयणाणंदकरं सयप्पहापराभूयसगलसरोवरं वरं पउमसरोवरं पासइ।२५।

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद त्रिशलादेवीने पद्मसरोवर देखा वह पद्मसरोवर कैसा था ? वह कहते हैं–[हीण] दुबले [पीण] पुष्ट [पाढीन] पाठीन–मत्स्यविशेष [मग्गुर] मद्गुर–जलकाक [साल] शाल [सयुल] शकुल [राजीव] राजीव [रोहियाइ] रोहित आदि [मीण] मत्स्य [मगर] मगर [गाह] ग्राह [सुसुमार] सुसुमार [कमढ] कूर्म [पभिइ] प्रभृति [जलयरनियरपरिपीयमाणपाणीयं] जलचर जीवों का समूह उसका पानी पी रहा था [तरलतरतरंगतरंगियं] अतिशय चंचल लहरें उसमें लहरा रही थी [कल्हारहल्लगकुवलयइंदीवरकेरवपुंडरीयकोगणयपरमसुसमा सुसमियं] कल्हार–एक प्रकारका श्वेत सुगन्धित पुष्प विशेष–हल्लक–(लाल रंग का पुष्प विशेष) कुवलय, इन्दीवर कैरव पुण्डरीक कोकनद, इन सब कमलों की सुन्दरता से सुशोभित था [अरुणारुणकिरणप्फुरणउन्निद्दकमलकिंजक्कनिस्संदमाणसुरहितमपरागरागसंजायईसीपीयरत्ततोयं] सूर्य

की लाल लाल किरणों के फैलाव से खिले हुए कमलों के केसर से झरनेवाले अतिशय सुगन्धमय पराग की लालिमा से उसका जल हल्का-पीला और लाल हो रहा था [परागपरिपाणमत्तमुइयमंजुगुंजंत अंतोभमंतमिलिंदबिंदपिहीयमाणनलिणं] पुष्पों के पराग का पान करके उन्मत्त मुदित एवं मधु गुंजार करते हुए, मध्य में घूमते हुए भ्रमरों के समूह ने कमलों को अच्छादित कर दिया था। [विहरतविविहसउणिगणं] वहां विविध प्रकार के पक्षी विहार कर रहे थे। [कमलिणीदलविलसंत अंबुबिंदुकयंबग-जणियमोतियतारयाविब्भमं] उस सरोवर की कमलिनियों के पत्रों पर सुशोभित होने-वाली पानी की बून्दों का समूह मोतियों एवं तारों का भ्रम उत्पन्न करता था [रयणा-यरसमं] वह समुद्र के समान था [सरोयपुंजाहिरामं] कमलों के समूह से शोभायमान था [सयलसोहासुहसमन्नियं] सम्पूर्ण शोभा और सुख से युक्त था [कलहंस] कलहंसों [राजहंस] राजहंसों, [बालहंस] बालहंसों, [चक्कवाग] चक्रवाकों के [चक्क] समूह [सरस

सारसा] तथा सुन्दर सारस आदि [खव्वगव्वाहिट्ठियविहंगमजुयलसंसेवियजललोलं] अत्यधिक गर्विले पक्षियों के युगलों से सेवित जल से चंचल था [अणेगावहदेवदेवी जुयलकीडणउच्छलंतकल्लोलं] अनेक देव देवियों के युगल जो क्रीडा करते थे उसके कारण उसमें लहरे उछल रही थी [पेच्छयजणहिययमणनयणाणंदकरं] देखनेवालों के हृदय, मन और नेत्रों को आनन्द उत्पन्न करनेवाला था [सयप्पहापराभूयसगलसरोवरं] उसने अपनी प्रभा से अन्य समस्त सरोवरों को तिरस्कृत कर दिया था [वरं पउमसरोवरं पासइ] ऐसा उत्तम पद्मसरोवर को देखा ॥२५॥

खीरसायरसुमिणे ११

मूलम्—तओ पुण सा सीयकिरण किरणगणविभासिविमलजलसंचयं, महामगरणिगरसिसुमारवारातिमितिमिंगिलतिमिंगिलगिलचवलोच्छलणचोखुब्भमाणरायमाणअसमाणकल्लोलपोप्पूयमाणजादसमुदयं संमिलंतनाणाणईजलोल्लसंत

समुदयं सव्वओ समंता समुच्छलंततरलतरोत्तुंगतरंगानुतरंगं रंगत्तरंगभंगं पडुपवणाहइसमुच्छलंतजलतरंगपरंपरासंघट्टियतडपरावत्तलोललहरीलसियफेनिलपओललियअंतरालं विगयजंबालं महाधुणियउक्कुरतरतरसंगममहागत्तावत्तमिलियउच्छलियपराविचधावंतउल्लसियपयसं साउजलसरसं सुंदरं खीरसायरं पासइ। २६।

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] तदनंतर उसने [सीयकिरणकिरणगणविभासिविमलजलसंचयं] चन्द्रमा की किरणों के समूह से उज्ज्वल निर्मल जल समूह से युक्त [महामगरणिगरसिसुमार] बडे बडे मगरों सिसुमारों के समूह के [वारतिमितिमिंगिलतिमिंगिलगिल] तथा तिमि, तिमिंगिल, तिमिंगिलगिल नामक मच्छों के [चवलोच्छलणचोखुब्भमाण] तेजी के साथ उछलने से क्षुब्भ होने के कारण [रायमाणअसमाणकल्लोलपोप्पूयमाणजादसमुदयं] उठनेवाली असाधारण तरंगों में तैरनेवाले जल जन्तुओं से युक्त [संमिलंतनाणाणईजलोल्लसंतसमुदयं] मिलनेवाली अनेक नदियों के जल से

जिसकी जल राशि में वृद्धि हो रही है ऐसे [सव्वओ समंता समुच्छलंततरलतरोत्तुंग-तरंगानुत्तरंगं] सभी ओर पूरी तरह से उत्पन्न होनेवाली तरंग परम्परा से युक्त [रंगत्त-रंगभंगं] धीरे धीरे उठती हुइ तरंगों के भंग से सम्पन्न [पडुपवणाहइसमुच्छलंतजल-तरंगपरम्परासंघट्टियतडपरावत्तलोललहरीलसियफेनिलपओललियअंतरालं] प्रबल पवन के आघात से उठी जलतरंगों की परम्परा से संघट्टित तट से लौट कर आनेवाली चंचल-लहरों से सुशोभित एवं फेन युक्त जल से रमणीय मध्यभागवाले, [विगयजंबालं] कीचड से रहित [महाधुणियउद्धुरतरतरसंगममहागत्तावत्तमिलियउच्छलियपराविक्त-धावंतउल्लसियपयसं] कीचड से रहित बडी बडी नदियों के वेगवान संगम से पडे हुए गडहों में होनेवाले आवर्तों से मिले, उछल लौटे और वेग के साथ दौडे पानी से अतिशय शोभायमान [साउजलसरसं सुंदरं खीरसायरं पासइ] मधुर जल के कारण सरस और सुन्दर क्षीरसागर को ग्यारहवें स्वप्न में देखा ॥२६॥

देवविमानसुमिणे १२

मूलम्—तओ पुण सा तरुणयरारुणमंडलदिप्पमाणं, विविहविसालकिंकिणीजाल-सद्दायमाणं जाजल्लमाणलंबमाणदिव्वदामाणं दिव्वदेविड्ढिनिहाणं पयरनिसक्क-मंजुलकंचणमहामणिगणपप्फुरणदलियगाढंधयारं पलंबमाणनाणामणिरयणरइय-विविहहारं, अंबरवियारणगारकप्पप्पयारं, पंचवण्णरयणमुत्ताहारतोरणविभूसिय-चउद्दारं अट्ठुत्तरसहस्समणिखंभप्पहाविडंबियसहस्सकरं, विविहसोभाधरं विम-लसंखतलदहिघणगोक्खीरफेणरययनियरनिम्मलप्पगासं जाजल्लमाणदिव्वतेय-पुंजसंकासं मिगमहिसवराहच्छगलदद्दुरहयगयगवयभुयगखग्गउसभणरमगराइ जलयरकिन्नरसुरचमरसिंहसद्दुलअट्ठावयवणलयाकमललयाइ विचित्तचित्त-संजायपासगजणमणतोसं सरसताललयाखव्वगव्वगंधव्वसंगीयफीयसुइमोय-

पोसघोसं, वणधणघणघणाघणोज्जियगज्जियविडंबिणा विंदारगविंददुंदुहिधुरिणज्झुणिणामणुस्सलोगं सदिगंतं पूरयंतं जलंताणलडज्झमाणणिरुवमाणकालागुरुपवरकुदुरुक्कतुरुक्कपमुहधूवदुन्निरूवमघमघायमाणगंधं, विरायमाणविविहसुहच्चिधंणिच्चालोगं विगयसोगं नाणाविह सरसकेलिकलाकोऊहलसंलग्गसुरवरासणाभिरामं सयलसुरवरविमाणललामं, अकयसुकयदुल्लभयरं कयसुकयसुलभयरं पुंडरीगाभिहाणं देवविमाणं पासइ ॥२७॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] उसके बाद त्रिशलारानी ने पुण्डरीक नामक देवविमान देखा वह देवविमान [तरुणयरारुणमंडलदिप्पमाणं] मध्याह्नकालीन सूर्य के समान देदीप्यमान था। [विविहविसालकिंकिणीजालसद्दायमाणं] नाना प्रकार की बडी बडी घुंघरुओं के समूह के शब्द से मुखरित हो रहा था। [जाजल्लमाणलंबमाणदिव्वदामाणं]

उसमें अतिशय चमकीली सुन्दर मालाएँ लटक रही थीं [दिव्वदेविड्ढिनिहाणं] वह देवों की दिव्य ऋद्धि का निधान था [पयरणिसक्कमंजुलकंचणमहामणिगणप्फुरणदलियगाढंधयारं] पतरों में लगे हुए सुन्दर स्वर्ण और महामणियों के समूह के प्रकाश से सघन अंधकार को नष्ट करनेवाला था [पलंबमाणनाणामणिरयणरइयविविहहारं] उसमें अनेक प्रकार की मणियों तथा रत्नों के बने हुए विविधहार लटक रहे थे [अंबरवियारणगारकप्पप्पयारं] उसकी गति मानो आकाश को चीर देने में समर्थ थी [पंचवण्णरयणमुत्ताहारतोरणविभूसियचउद्दारं] उसके चारों द्वार पांच वर्णों के रत्नों एवं मोतियों के हारों के तोरणों से विभूषित थे [अट्ठुत्तरसहस्समणिखंभप्पहाविडंबियसहस्सकरं] वह एक हजार आठ मणिमयस्तंभों की प्रभा से सूर्य को तिरस्कृत करता था [विविहसोभाधरं] विविध प्रकार की शोभा को धारण करता था [विमलसंखतलदहिघणगोक्खीरफेणरययनियरनिम्मलप्पगासं] निर्मल शंख, दही गाय के दूध के झाग तथा चान्दी के

समूह के समान शुभ्र प्रकाशवाला था। [जाजल्लमाणदिव्वतेयपुंजसंकासं] जाज्वल्यमान दिव्य तेजोपुंज के समान था। [मिग] मृग [महिस] भैंस [वराह] सूअर [च्छगल] बकरा [दद्दुर] मेढक [हय] घोडा [गय] हाथी [गवय] रोझ [भुयग] सर्प [खग्ग] गेंडा [उसभ] बैल [णर] नर [मगराइ] मगर आदि [जलयर] जलचरों के [किंनर] किन्नर [सुर] सुर [चमर] चमर [सीह] सिंह [सद्दूल] बाघ [अट्ठावय] अष्टापद [वणलया] वनलता [कमललयाइ] कमललता [विचित्तचित्तसंजायपासगजनमणतोसं] आदि के विचित्र विचित्र चित्रों से देखनेवालों के मनमें सन्तोष उत्पन्न करनेवाला था। [सरसताललयाखव्वगव्वगंधव्वसंगीयफीयसुइमोयपोसघोसं] उसमें सरस ताल तथा लय के तीव्र गर्ववाले गन्धर्वों के गान का मधुर एवं कानों के आनंद को पुष्ट करनेवाला घोष हो रहा था [वणघणघणघणाघणोज्जियगज्जियविडंबिणा] पानी ही जिनका धन है ऐसे सघनमेघों की गंभीर गर्जना की विडंबना करनेवाली [विंदारगविंददुंदुहिधुरीणज्झुणि-

णामनुस्सलोगं सदिगंतं पूरयंतं] देवसमूह की भेरियों की मनोहर ध्वनि से दिशाओं के छोर तक मनुष्यलोक को पूरित कर रहा था [जलंताणलडज्झमाणणिरुवमाण] उसमें जलती हुइ अग्नि में जलाये जानेवाले अनुपम [कालागुरु पवरकंदुरुक्कतुरुक्कपमुहधूवदुन्निरूवमघमघायमाणगंधं] काला अगर श्रेष्ठ कुंदरुक्क तथा तुरुष्क [लोबान] आदि धूपों की अनिर्वचनीय एवं मघमघाती हुई गंध व्याप्त थी। [विरायमाणविविहसुहचिंधं] उसमें नाना प्रकार के शुभचिह्न सुशोभित हो रहे थे [निच्चालोगं] वह निरंतर प्रकाशवाला [विगयसोगं] एवं शोक से रहित था [नाणाविह सरसकेलिकलाकोऊहलसंलग्गसुखरासणाभिरामं] विविध प्रकार की सरस क्रीडा कलाओं के कुतुहल में मग्नदेवों के आसनों से शोभायमान था [सयलसुरवरविमाणललामं] देवों के समस्त विमानों में सुन्दर था [अकयसुकयदुल्लभयरं] वह पुण्यहीनों के लिये दुर्लभ एवं [कयसुकयसुलभयरं] पुण्यवानों के लिये सुलभ ऐसे [पुंडरीगाभिहाणं देवविमाणं पासइ] पुण्डरीक नामक

देवविमान को देखा ॥२७॥

रयणरासिसुमिणे १३

मूलम्—तओ पुण सा वज्जवेरुलियलोहियक्खमसारगल्लहंसगब्भजोइरयण-अंकअंजणजायरूवअंजणपुलगरिट्ठइंदनीलगोमेयचंदप्पहभुजमोयगरुयगसोगंधि-गपुलगफडिगमरगयकक्केयणम्मू कंतचंदकंतप्पवालप्पमुहअसवत्तरयणनिगुरंब-प्फुरंतकरनिकरेणं विउलातलमलंकुव्वंतं गगणमंडलं पगासयंतं पुण्णरासिमिव अच्चंततुंगत्तणेण मेरुगिरिं विडंबयंतं, अजयणसंपत्तं दसदिसविगासिं पुव्व-पुण्णरासिमिव रयणरासिं पासइ ॥२८॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] इसके बाद महारानी त्रिशलाने [वज्ज] वज्र [वेरुलिय] वैडूर्य [लोहियक्ख] लोहिताक्ष [मसारगल्ल] मसारगल्ल [हंसगब्भ] हंसगर्भ [जोइरयण]

ज्योतिरत्न [अंक] अंक, [अंजण] अंजन [जायरूव] जातरूप [अंजणपुलग] अंजनपुलक [रिट्ठ] रिष्ट [इंदनील] इंद्रनील [गोमेय] गोमेद [चंदप्पह] चन्द्रप्रभ [भुजमोयग] भुज-मोचक [रुयग] रुचक [सोगंधिग] सौगंधिक [पुलग] पुलक [फडिग] स्फटिक [मरगय] मरकत [कक्केयण] कर्केतन [सूरकंत] सूर्यकान्त [चंदकंत] चन्द्रकांत [प्पवालप्पमुह] और प्रवाल आदि [असवत्तरयणनिगुरंबप्फुरंतकरनिकरेणं] अनुपम रत्नों के समूह की स्फुरायमान किरणों के समुदाय से [विउलातलमलंकुव्वंतं] पृथ्वी तल को अलंकृत करनेवाली [गगणमंडलं पगासयंतं] आकाशमंडल को प्रकाश करनेवाली [पुण्णरासिमिव अच्चंततुंगत्तणेण] पुण्य की राशि के सदृश अत्यंत उंची होने से [मेरुगिरिं विडंबयंतं] मेरु पर्वत को भी मात करनेवाली [अजयणसंपत्तं] अनायास प्राप्त [दसदिसविगासिं] दशों दिशाओं में प्रकाश फैलानेवाली [पुव्वपुण्णरासिमिव] पूर्व जन्म में उपार्जित पुण्य की राशि के समान [रयणरासिं पासइ] रत्नराशि को देखा ॥२८॥

सिहिसुमिणे १४

मूलम्—तओ पुण सा विउलमंजुलपिंगलमहुघयअविच्छिन्नधाराऽभिसिंचमाण-विधूयधूमधगधगितिजलंतउज्जलजालजाललामं विमलतेयाभिरामं तरतम्मजोगेहिं उच्छलंतीहिं अण्णोण्णं मिलंतीहिं विव जालमालाहिं संजुत्तं जालजालोज्जलपिहुलगगणखंडं पिव पडंतं अइविउलवेगवंतं तेयणिहिं सिहिं पासइ ॥२९॥

शब्दार्थ—[तओ पुण सा] उसके बाद त्रिशलादेवीने [विपुलमंजुलपिंगलमहुघय-अविच्छिन्नधाराभिसिंचमाण] अत्यंत प्रशस्तपिंगल वर्ण के मधु और घृत की अविच्छिन्न धारा से सिंचित [विधूयधूमधगधगितिजलंतउज्जलजालजाललामं] धूम से रहित धग् धग् करके जलती हुइ उज्ज्वल ज्वालाओं के समूह से सुन्दर [विमलतेयाभिरामं] निर्मल तेज से रमणीय [तरतम्मजोगेहिं उच्छलंतीहिं] तरतमता के साथ उपर को उठती हुई [अण्णोण्णं मिलंतीहिं विव] मानो आपस में मिलन कर रही हों ऐसी [जालमालाहिं

संजुत्तं] ज्वालामालाओं से युक्त [जालजालोज्जल] ज्वालाओं के समूह से प्रकाशमान [पिहुलगगणखंडं पिव पडंतं] विशाल नीचे गिर रहे आकाश–खण्ड के समान, [अइविउल-वेगवंतं] अत्यन्त तीव्रवेग से युक्त [तेयणिहिं सिहिं पासइ] प्रकाशपुंज अग्नि को देखा ॥२९॥

मूलम्–एवं सा तिसला खत्तियाणी इमे एयारूवे चउद्दसमहासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठतुट्ठा चित्तमाणंदिया पीइमणा परमसोमणस्सिया हरिसवसविसप्पमाणहियया धाराहयकयंबपुप्फगं पिव समुस्ससियरोमकूवा सुमि-णुग्गहं करेइ, करित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता अतुरियमचवलमसंभं-ताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए तेणेव उवा-गच्छइ, उवागच्छित्ता ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं ओरा-लाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरीयाहिं हिययगमणिज्जाहिं

हियपल्हायणिज्जाहिं मियमहुरमंजुलाहिं गिराहिं संलवित्ता पडिबोहेइ ॥३०॥

शब्दार्थ—[एवं सा तिसला खत्तियाणी] इस प्रकार त्रिशला क्षत्रियानी [इमे एयारूवे चउद्दसमहासुमिणे पासित्ता] पूर्वोक्त प्रकार के इन चौदह महास्वप्नों को देखकर [णं पडिबुद्धा समाणी] जागी [हट्ठतुट्ठा] उसे हर्ष और संतोष हुआ [चित्तमाणंदिया] चित्तमें आनन्द हुआ [पीइमणा] मन में प्रीति उत्पन्न हुई [परमसोमणस्सिया] परम प्रसन्नता हुई [हरिसवसविसप्पमाणहियया] हर्ष के वशीभूत होकर उसका हृदय विकसित हो गया [धाराहयकयंबपुप्फगंपिव] मेघ की धाराओं का आघात पाये कदम्ब के फूल के समान [समूस्ससियरोमकूवा] उसे रोमांच हो आया [सुमिणुग्गहं करेइ] उसने स्वप्न का विचार किया [करित्ता] विचार करके [सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ] शय्या से उठी [अब्भुट्ठित्ता] और उठकर [अतुरियमचवलमसंभंताए] मानसिकत्वरा से रहित शारीरिक चपलता से रहित, स्वलना से रहित [अविलंबियाए] विलम्ब रहित [रायहंससरि-

सीए गईए] राजहंसिणी जैसी गति से [जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए तेणेव उवागच्छइ] जहां सिद्धार्थ क्षत्रिय थे वहां आती है [उवागच्छित्ता] आकर [ताहिं] सिद्धार्थ क्षत्रिय को [इट्ठाहिं] इष्ट [कंताहिं] कान्त [पियाहिं] प्रिय [मणुन्नाहिं] मनोज्ञ [मणामाहिं] मनाम (मनको अतिशय प्रिय) [ओरालाहिं] उदार-श्रेष्ठ स्वर एवं उच्चार से युक्त [कल्ला-णाहिं] कल्याण-समृद्धिकारक [सिवाहिं] शिव-निर्दोष होने के कारण निरुपद्रव [धन्नाहिं] धन्य [मंगल्लाहिं] मंगलकारी [सस्सिरियाहिं] सश्रीक-अलंकारों से सुशोभित [हियय-गमणिज्जाहिं] हृदय को प्रिय लगनेवाली [हिययपल्हायणिज्जाहिं] हृदय को आह्लाद उत्पन्न करनेवाली [मियमहुरमंजुलाहिं] परिमित अक्षरोंवाली मधुर मंजुल स्वरों से मीठी [गिराहिं] वाणी से [संलवित्ता] बोलकर [पडिबोहेइ] राजा सिद्धार्थ को जगाया ॥३०॥

मूलम्-तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नानामणिकणगरयणभत्तिचित्तंसि महासणंसि णिसियइ। निसीइत्ता

आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया एवं वयासी—एवं खलु अहं सामी! तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सुत्तजागरा गयवसहाइ चउद्दसमहासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा तं एएसिं सामी! चउद्दसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ?। तए णं से सिद्धत्थे राया तिसलाए खत्तियाणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयरोमकूवे तेसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अत्थुग्गहं करित्ता तिसलं खत्तियाणिं ताहिं इट्ठाहिं पियाहिं वग्गूहिं संलवमाणे एवं वयासी—उराला णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा, एवं कल्लाणा सिवा धन्ना मंगल्ला सस्सिरीया आरुग्गतुट्ठि दीहाउकारगा तुमे देवाणुप्पिये सुमिणा दिट्ठा, तं णं अम्हाणं अत्थलाभो देवाणुप्पिए! भविस्सइ, एवं—भोगलाभो, सुक्खलाभो, रज्जलाभो,

रट्ठलाभो भविस्सइ, किं बहुणा पुत्तलाभो वि भविस्सइ। एवं खलु तुमे देवाणुप्पिये! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं अम्हं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडिंसयं कुलतिलयं कुलकित्तिकरं कुलवित्तिकरं कुलणंदियरं कुलजसकरं कुलदिणकरं कुलाधारं कुलपायवं कुलतंतुसंताणविवद्धणकरं भविविबोहकरं भवभयहरं गुणरयणसायरं सयलपाणीण हियकरं सुहकरं सुभकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगं ससिसोमागारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारगं पयाहिसि॥३१॥

शब्दार्थ—[तए णं सा तिसला खत्तियाणी] तदनंतर त्रिशला क्षत्रियाणी [सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भुणुन्नाया समाणी] राजा सिद्धार्थ की आज्ञा प्राप्त कर [नाणामणि-

सामान्यतः स्वप्ननिवेदनंतत्फलकथनं च

कणगरयणभत्तिचित्तंसि] विविध प्रकार के मणि, सुवर्ण और रत्नों की रचना से विचित्र [भद्दासणंसि णिसीयइ] भद्रासन पर बैठती है [णिसीइत्ता] बैठकर [आसत्था] आश्वास्त–चलने के श्रम से रहित होकर [वीसत्था] विश्वस्त–क्षोभरहित होकर [सुहासणवरगया] सुखद और श्रेष्ठ आसन पर बैठी हुइ [एवं वयासी] इस प्रकार बोली–[एवं खलु अहं सामी !] हे स्वामी ! [तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि] में उस पूर्व वर्णित शय्या पर [सुत्तजागरा] कुछ सोती कुछ जागती [गयवसहाइ चउद्दसमहासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा] अवस्था में गज, वृषभ आदि चौदह महास्वप्नों को देखकर जागी हूं [तं एएसिं सामी !] हे स्वामिन् ! [चउद्दसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ?] इन कल्याणकारी चौदह स्वप्नों का क्या फल विशेष होगा ? [तए णं से सिद्धत्थे राया तिसलाए खत्तियाणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा] तपश्चात् सिद्धार्थ राजा त्रिशला क्षत्रियाणी से इस अर्थ को सुनकर [निसम्म हट्ठतुट्ठे] तथा हृदय में धारण करके हृष्ट-

तुष्ट हुए [धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयरोमकूवे] मेघ की धाराओं से आहत कदंब के पुष्प की तरह उनका शरीर पुलकित हो गया। उन्हें रोमांच हो आया [तेसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अत्थुग्गहं करित्ता] उन चौदह महास्वप्नों के आशय को समझकर [तिसलं खत्तियाणिं] त्रिशला क्षत्रियाणी से [ताहिं इट्ठाहिं पियाहिं वग्गूहिं संलवमाणे एवं वयासी] इष्ट एवं प्रिय वचनों से बोलते हुए इस प्रकार कहने लगे—[उराला णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा] हे देवानुप्रिये! तुमने उदार—प्रधान स्वप्न देखा है। [एवं कल्लाणा सिवा धन्ना मंगल्ला सस्सिरीया आरुग्गतुट्ठि दीहाउकारगा तुमे देवाणुप्पिये! सुमिणा दिट्ठा] हे देवाणुप्रिये! तुमने कल्याणकारक स्वप्न देखा है। हे देवानुप्रिये! तुमने शिव—उपद्रव विनाशक, धान्य—धन की प्राप्ति करानेवाला—मंगलमय—सुखकारी और सश्रीक—सुशोभनस्वप्न देखा है। देवी आरोग्य, तुष्टि, दीर्घायु, कल्याण और मंगल करनेवाला स्वप्न देखा है [तं णं अम्हाणं अत्थलाभो देवाणुप्पिए!

भविस्सइ] हे देवानुप्रिये! इनसे हमे अर्थ का लाभ होगा [एवं भोगलाभो] भोगों का लाभ होगा [सुक्खलाभो] सुख का लाभ होगा [रज्जलाभो] राज्य का लाभ होगा [रट्ठलाभो भविस्सइ] राष्ट्र का लाभ होगा [किं बहुणा पुत्तलाभो वि भविस्सइ] विशेष क्या कहूं, पुत्र का भी लाभ होगा [एवं खलु तुमे देवाणुप्पिए! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं] इस प्रकार हे देवानुप्रिये! नौ मास पूरे [अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं] और साढेसात अहोरात्र व्यतीत होनेपर [अम्हं कुलकेउं] तुम हमारे कुल का केतु [अम्हं कुलदीवं] हमारे कुल का दीपक [कुलपव्वयं] कुल का पर्वत [कुलवडिंसयं] कुलभूषण [कुलतिलयं] कुलतिलक [कुलकित्तिकरं] कुल की कीर्ति बढानेवाला [कुलवित्तिकरं] कुल की वृत्ति बढानेवाला [कुलणंदियरं] कुल में आनन्द बढानेवाला [कुलजसकरं] कुल का यश बढानेवाला [कुलदिणकरं] कुल में सूर्य के समान [कुलाधारं] कुल के आधार [कुलपायवं] कुलपादप [कुलतंतुसंताणविवद्धणकरं] कुल की सन्तान—

परम्परा बढानेवाला [भविविबोहकरं] भव्यजीवों को बोध देनेवाला [भवभयहरं] भव का भय हरनेवाला [गुणरयणसायरं] गुणरत्नों का सागर [सयलपाणीण हियकरं] प्राणिमात्र का हित करनेवाला [सुहकरं] सुख करनेवाला [सुभकरं] शुभ करनेवाला [सुकुमालपाणिपायं] सुकोमल हाथ पैर वाला [अहीण] अहीन—अविकल अंगवाला [पडिपुण्ण पंचिंदियसरीरं] पूरी पांचों इन्द्रियों से युक्त शरीरवाले [लक्खणवंजणगुणोववेयं] लक्षणों व्यंजनों और गुणों से सम्पन्न [माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरगं] मान उन्मान और प्रमाण से परिपूर्ण यथोचित अंगों की रचना से युक्त, सर्वांग सुन्दर [ससिसोमागारं] चन्द्रमा के समान सौम्य आकारवाले [कंतं] कान्ति युक्त [पियदंसणं] प्रियदर्शन [सुरूवं] और सुरूप [दारगं पयाहिसि] पुत्र को जन्म दोगी ॥३१॥

चउद्दंतदंतिसुभिणफलं १

मूलम्—तत्थ खलु एएसु चउद्दससु महासुमिणसु इक्किक्कस्स महासुमिणस्स

इमे एयारूवें फलवित्ति विसेसे भविस्सइ तं जहा-१ चउद्दंतदंतिदंसणेणं अमू सूरो वीरो विक्कंतो दंतेणं दंती नई कूलतरुमूलं विव पभूएणं तवेणं महंत अंतरायकसायकुलं उम्मूलिस्सइ। २ दंतेण दंती वयइतइं विव वईवीरो वरी-यसा तवसा नरयतिरियनरामरगईभमणसंतइं अंतिस्सइ। ३ महंतप्पहाव-दाणसीलतवभावभेयभिन्ने चउव्विहे धम्मे चउरोदंते फुरंतधुज्जभावो रणंगणे परक्कममाणो वारणो विव बारसविहपरिसंगणे दंसिस्सइ। ४ सुयचारित्तधम्म-निरूवणओ अगिलाणत्तणेण दिसादंती विव चउद्दिसं सायत्ती करिस्सइ॥३२॥

शब्दार्थ—[तत्थ खलु] निश्चयतः उन [एएसु चउद्दससु महासुमिणेसु] इन चौदह महास्वप्नों में से [इक्किक्कस्स महासुमिणस्स इमे एयारूवे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ तं जहा–] एक–एक महास्वप्न का यह फलविशेष होगा वह इस प्रकार है–

१ [चउदंतदंतिदंसणेणं] चार दांतोंवाले हाथी को देखने से [अमू सूरो वीरो] वह बालक शूरवीर और [विक्कंतो] पराक्रमी होगा [दंतेणं दंती नईकूलतरुमूलं विव] जैसे हाथी अपने दांतों से नदी–किनारे के वृक्षों को उखाड देता है वैसे ही [पभूएणं तवेणं महंतअंतरायकसायकुलं उम्मूलिस्सइ] वह विपुल तपस्या से महान विघ्न-रूप अंतराय और कषाय के समूह का उन्मूलन करेगा।

२ [दंतेण दंती वयइतइं विव] जैसे हाथी लताओं के समूह को उखाड कर फेंक देता है, उसी प्रकार [वई वीरो वरीयसा तवसा] वह व्रती वीर घोर तपस्या से [नरयतिरियनरामरगइब्भमणसंतइं अंतिस्सइ] नरक तिर्यंच मनुष्य और देव गतियों में भ्रमण करने की परम्परा का अंत कर देगा।

३ [चउरोदंते फुरंतधुज्जभावो] जैसे अपने अग्रेसरपन को प्रगट करनेवाला और [रणांगणे परक्कममाणो वारणो विव] युद्धभूमि में पराक्रम करनेवाला हाथी चार दांतों

को दिखलाता है उस प्रकार [महंतप्पभावदानसीलतवभावभेयभिन्ने] अत्यन्त प्रभावशाली दान शील तप और भाव के भेद से भिन्न [चउव्विहे धम्मे] चार प्रकार के धर्म को [बारसविहपरिसंगणे दंसिस्सइ] बारह प्रकार की परिषद् में दिखलाएगा।

४ [सुय चारित्तधम्मनिरूवणओ अगिलाणत्तणेण] ग्लान रहित भाव से श्रुतचारित्र रूप धर्म का निरूपण करते हुए [दिसादंतीविव] दिशाके हाथी के जैसा [चउद्दिसं सायत्ती करिस्सइ] चारों दिशाओं को अपने स्वाधीन करेगा ॥३२॥

उसभसुमिणफलं २

मूलम्—१ उसभदंसणेणं अमू उसभरायो सगडधुरंविव धम्मधुरं धरिस्सइ। २ सारमुयारं तव संजमभारं वहिस्सइ। ३ सुयचारित्तलक्खणं धम्मारामं अमोहधाराए सुहाधाराए गिराए सिंचंतो पुप्फियं फलियं च करिस्सइ। ४ पवित्ते भरहखित्ते खित्ते सग्गापवग्गसुहसंपायणा बीयं बोहिबीयं वाविस्सइ ॥३३॥

शब्दार्थ—[उसभदंसणेणं] वृषभ का स्वप्न देखने से [अमू] यह बालक [उसभशयो सगडधुरंविव] जैसे श्रेष्ठ वृषभ शकट की धुरा को धारण करता है उसी प्रकार [धम्मधुरं धरिस्सइ] वह धर्म की धुरा को धारण करेगा [सारमुयारं तवसंजमभारं वहिस्सइ] सारभूत और तप एवं संयम के भार को वहन करेगा। [सुयचारित्तलक्खणं] श्रुतचारित्ररूपी [धम्मारामं] धर्मरूपी बगीचे को [अमोहधाराए] अमोघ धारा समान [सुहाधाराए] अमृतधारा के समान [गिराए] वाणी की धारा से [सिंचंतो] सींचेगा और उसे [पुप्फियं फलियं च करिस्सइ] फूल–फलवान बनाएगा [पवित्ते भरहखित्ते] पवित्र भरतक्षेत्ररूपी [खित्ते सग्गापवग्गसुहसंपायणा] क्षेत्र में स्वर्ग और अपवर्ग की प्राप्ति के कारण [बीयं बोहिबीयं वाविस्सइ] बोधि बीज रूप बीज को बोएगा॥२३॥

३ सीहसुमिणफलं

मूलम्—१ सीहदंसणेणं अमू भुवणत्तए सूरो वीरो विक्कंतो भविस्सइ।

२ वाइविंदमाणमद्दगो भविस्सइ। ३ रागदोसाइरिऊणं विजितारो भविस्सइ। ४ तिभुवणे एगछत्तं सासणं करिस्सइ ॥३४॥

शब्दार्थ—[सीहदंसणेणं] सिंह को देखने से [अमू] वह [भुवणत्तए] तीन लोक में [सूरो वीरो विक्कंतो] शूरवीर और पराक्रमी [भविस्सइ] होगा। वा

२ [वाइविंदमाणमद्दगो भविस्सइ] वादियों के समूह के मान का मर्दन करनेवाला होगा.

३ [रागदोसाइरिऊणं] रागद्वेष आदि शत्रुओं को [विजितारो भविस्सइ] जीतनेवाला होगा।

४ [तिभुवणे एगछत्तं सासणं करिस्सइ] तीनों लोकों पर एकच्छत्र शासन करेगा।३४।

४ लच्छीसुमिणफलं

मूलम्—लच्छीदंसणेणं अमू समोसरणलक्खणलच्छीउवलक्खिओ भविस्सइ। २ णाणदंसणसुहवीरियरूवाणंतचउक्कलक्खणं लच्छिं वरिस्सइ। ३ जम्मजरा-

मरणाहिवाउले अणाहे भव्वे बोहिबीयलच्छीपदाणेण सनाही करिस्सइ।
४ मोक्खमग्गाराहगाणं भव्वाणं साइ अणंतं अक्खयं अव्वाबाहं धुवं निययं सासयं अहरीकयलोगलच्छिं मोक्खलच्छिं दाहिइ ॥३५॥

शब्दार्थ—[लच्छीदंसणेणं] लक्ष्मी को देखने से [अमू] वह [समोसरणलक्खण-लच्छीउवलक्खिओ भविस्सइ] समवसरणरूप लक्ष्मी से युक्त होगा।

२ [णाणदंसणसुहवीरियरूवाणंतचउक्कलक्खणं लच्छिं वरिस्सइ] ज्ञानदर्शन सुख और वीर्य रूप अनन्त चतुष्टय की लक्ष्मी का वरण करेगा।

३ [जम्मजरामरणाहिवाउले अणाहे भव्वे बोहिबीयलच्छीपदाणेण सनाही करि-स्सइ] जन्मजरामरण आधि और व्याधि से व्याकुल अनाथ भव्यों को बोधि बीजरूपी लक्ष्मी देकर सनाथ करेगा।

४ [मोक्खमग्गाराहगाणं भव्वाणं] मोक्ष मार्ग के आराधक भव्यों को [साइ अणंतं]

सादि अनन्त [अक्खयं] अक्षय [अव्वाबाहं] अव्याबाध [धुवं] ध्रुव [निययं] नियत [सासयं] शाश्वत [अहरीकयलोगलच्छिं] और लौकिक लक्ष्मी को तिरस्कृत करनेवाली [मोक्खलच्छिं दाहिइ] मोक्ष लक्ष्मी को देगा ॥३५॥

५ दामदुगसुमिणफलं

मूलम्—१ दामदुगदंसणेणं अमू अगाराणगारधम्मदुगणिरूवणेणं भव्वे भूसिस्सइ। २ अमंदाणंदजणगणाणादिगुणेण तिहुयणसगलजणहिययंमि चिट्ठिस्सइ। ३ आयगुणसोरहेण तिहुयणं सुरहिस्सइ। ४ सयलजणणयणाणंदकरो य भविस्सइ ॥३६॥

शब्दार्थ—१ [दामदुगदंसणेणं] दो मालाओं के देखने से [अमू] वह [अगाराणगारधम्मदुगणिरूवणेणं] अगार और अनगाररूप दो धर्मों के निरूपण से [भव्वे भूसिस्सइ] भव्यों को विभूषित करेगा।

२ [अमंदाणंदजणगणाणादिगुणेण] तीव्रतर आनन्द के जनक ज्ञान आदि गुणों के कारण [तिहुयणसगलजनहिययंमि चिट्ठिस्सइ] तीन लोक के समस्तजनों के हृदय में स्थान बनाएगा।

३ [आयगुणसोरहेण तिहुयणं सुरहिस्सइ] अपने आत्मिकगुणों की सुगन्ध से तीनों लोक को सुगंधित करेगा।

४ [सयलजणणयणाणंदकरो य भविस्सइ] सब के नयनों के आनन्दकारी होगा।३६।

६ चंदसुमिणफलं

मूलम्—चंददंसणेणं अमू भवियकुमुयकुलविगासगो जम्मजरामरणाइ जणियअणंतसंतावहारगो जिणसासणसागरवड्ढगो अणाइमिच्छत्ततिमिरपणासगो तिहुयणआल्हायगो य भविस्सइ॥३७॥

शब्दार्थ—१ [चंददंसणेणं] चन्द्रमा के देखने से [अमू] वह बालक [भविय-कुमुयकुलविगासगो] भव्यजनरूपी कुमुदों के कुल का विकास करनेवाला होगा।

२ [जम्मजरामरणाइजणियअणंतसंतावहारगो] जन्म, जरा, मरण आदि से उत्पन्न होनेवाले अनन्त संताप को दूर करनेवाला होगा।

३ [जिनसासणसागरवड्ढगो] जिनशासनरूपी सागर की वृद्धि करनेवाला होगा।

४ [अणाइ मिच्छत्ततिमिरपणासगो] अनादि कालीन मिथ्यात्वरूपी अन्धकार को नाश करनेवाला होगा।

५ [तिहुयण आल्हायगो य भविस्सइ] तीनों लोक को आल्हाद करनेवाला होगा।३७।

७ सूरसुमिणफलं

मूलम्—सूरदंसणेणं अमू लोगालोगप्पगासगो भविकमलविगासगो भव्व-हिययकुहरचराणंतप्पचंडमत्तंडमंडलतरुणकिरणदुब्भेयचिरंतणाऽणाइगाढमिच्छ-

त्तितिमिरप्पणासगो धम्मगगणंगणे सक्खं अइसयतेयपुंजो विव भविस्सइ ॥३८॥

शब्दार्थ—१ [सूरदंसणेणं] सूर्यदर्शन से [अमू] वह बालक [लोगालोगप्पगासो] लोक अलोक का प्रकाशक [भविकमलविगासगो] भव्य जीव रूपी कमलों का विकास करनेवाला [भव्वहियकुहरचर] भव्यों के हृदयरूपी गुफा में स्थित [अणंतप्पचंडमत्तंड-मंडलतरुणकिरणदुब्भेय] अनंत प्रचण्ड सूर्यों की तीव्र किरणों से भी न भेदे जा सकनेवाले [चिरंतणाऽणाइगाढमिच्छत्ततिमिरप्पणासगो] चिरकालीन या अनादि-कालीन मिथ्यात्वरूपी अन्धकार का विनाश करनेवाला [धम्मगगणांगणे सक्खं अइसयतेय-पुंजो विव भविस्सइ] धर्मरूपी गगनांगण में प्रत्यक्ष अतिशय तेज के पुंज के समान होगा।३८।

८ झयसुमिणफलं

मूलम्—झयदंसणेणं अमू समारूढसुक्कज्झाणगयराओ सम्मण्णाणेण मंतिणा उवसममद्दवअज्जवसंतोसरूविणीए चउरंगिणीए सेणाए पंचमह-

व्वयरूवेहिं भडेहिं समदमाइरूवेहिं सत्थअत्थेहिं जुत्तो मुणिराओ अण्णाण-मंतिसहायं कोहमाणमायालोहचउरंगिणियं णाणावरणिज्जाइभडाणुगयं राग-दोसरूवसत्थत्थजुत्तं दुज्झाणगयारूढं मोहरायं जिणिऊण केवलणाणावरणनि-स्सारणावतिण्ण कारणक्कमववहाणा अनियट्टि सयललोगालोगविसयतिकालस्स-हावपरिणामभेयाणंतपयत्थसक्खंकारि केवलणाणकेवलदंसणसंपन्नो वेरग्गपवण-पेरियं सियवायज्झयं समुच्चालिस्सइ ॥३९॥

शब्दार्थ—[झयदंसणेणं] ध्वजा के देखने से [अमू] वह बालक [समारूढसुक्क-ज्झाणगयराओ] शुक्लध्यानरूपी हाथी पर आरूढ होकर [सम्मणाणेण मंतिणा] सम्यक्-ज्ञानरूपी मंत्री से [उवसम] उपशम [मद्दव] मार्दव [अज्जव] आर्जव और [संतोस] संतोष [रूविणीए चउरंगिणीए सेणाए] रूपी चतुरंगीणी सेना से [पंचमहव्वयरूवेहिं

भडेहिं] पंच महाव्रतरूपी योद्धाओं से और [समदमाइरूवेहिं] शम, दम आदि [सत्थ अत्थेहिं जुत्तो] शस्त्रास्त्रों से युक्त होकर [मुणिराओ] वह बालक मुनिराज बनकर [अ-ण्णाणमंतिसहायं] अज्ञानरूप मंत्री जिसका सहायक है [कोहमाणमायालोहचउरंगिणियं] क्रोध, मान, माया, लोभ ही जिसकी चतुरंगिणी सेना है [णाणावरणिज्जाइभडाणुगयं] ज्ञानावरणीय आदि जिस के योद्धा है [रागदोसरूवसत्थत्थजुत्तं] रागद्वेष के अस्त्रशस्त्रों से जो सुसज्जित है [दुज्झाणगयारूढं] दुर्ध्यानरूप गज पर जो आरूढ है [मोहरायं जिणिऊण] ऐसे मोहराज को जीतकर [केवलणाणावरणनिस्सारणावत्तिण्ण] केवलज्ञाना-वरणीय कर्म के क्षय से उत्पन हुए [कारणक्कमववहाणा अनियट्टि] कारणों के क्रम के व्यवधान होने से कभी नष्ट न होनेवाले [सयललोगालोगविसय] समस्त लोक और अलोक को जाननेवाले [तिकालस्सहावपरिणामभेयाणंतपयत्थसक्खंकारि] त्रिकाल सम्बन्धी, स्वभाव एवं परिणमन के भेद से भिन्न अनन्तपदार्थों को प्रत्यक्षरूप से जान-

नेवाले, [केवलनाणकेवलदंसणसंपन्नो] केवलज्ञान और केवलदर्शन से युक्त होकर [वेरग्गपवनपेरियं] वैराग्य की वायु से प्रेरित [सियवायज्झयं समुच्चालिस्सइ] स्याद्वाद की ध्वजा को फहराएगा ॥३९॥

९ पुण्णकलससुमिणफलं

मूलम्—पुण्णकलसदंसणेणं अमू विमलसलिलेहिं कलसो विव खमा संति माद्दविय ओदारिय सोरिय गंभीरिय धेरिय मद्दव अज्जवाइगुणेहिं पुण्णे मंगलमयत्तणओ सगललोगमंगलजणओ सगललोगहिययकमलाहिट्ठायगो पंचतिंसयवाणीगुणपडिपुण्णो लोगाहिरामो धवलकित्तिकेवलणाण केवलदंसणसमलंकिओ जगहिययहरणपवणो सयलतित्थियाणं मुद्धोवरि विरायमाणो सयलजणाणमभिलसणिज्जो भविस्सइ ॥४०॥

शब्दार्थ—[पुण्णकलसदंसणेणं] पूर्ण कलश को देखने से, [विमलसलिलेहिं कलसोविव] जैसे कलश निर्मल जल से परिपूर्ण होता है, उसी प्रकार [अमू] वह बालक भी [खमा] क्षमा [संति] शान्ति [माहुरिय] माधुर्य [ओदारिय] औदार्य [सोरिय] शौर्य [गंभीरिय] गाम्भीर्य [धेरिय] धैर्य [मद्दव] मार्दव [अज्जवाइगुणेहिं पुण्णे] आर्जवादि गुणों से पूर्ण होगा [मंगलमयत्तणओ सगललोगमंगलजणओ] मंगलमय होने के कारण सम्पूर्ण लोक के मंगल का जनक होगा। [सगललोकहिययकमलाहिट्ठायगो] सब लोगों के हृदय–कमल में स्थित होगा [पंचतिंसयवाणीगुणपडिपुण्णो] वाणी के पैंतीसगुणों से सुशोभित होगा [लोगाहिरामो] लोक में या लोकों के लिए रमणीय होगा। [धवलकित्ति] उज्ज्वल कीर्ति [केवलणाणकेवलदंसणसमलंकिओ] केवलज्ञान और केवलदर्शन से समलंकृत होगा [जगहिययहरणपवणो सयलतित्थियाणं मुद्धोवरिविरायमाणो] जगत के हृदय को हरण करनेवाला एवं समस्त तीर्थिकों में प्रधानरूप से शोभायमान होगा।

[सयलजणाणमभिलसणिज्जो भविस्सइ] सकलजनों के लिये इष्ट होगा ॥४०॥

पउमसरोवरसुमिणफलं १०

मूलम्—पउमसरोवरदंसणेणं अमू विमलजलेणेव निम्मलमाहिमाए, सीयलतयेव संतीए, माहुरिएणेव सोम्मभावेण, गंभीरिएणेव नाणाइगुणेण, कमलिणीहिंविव विमलभावणाहिं मयरंदेणेव कारुण्णेणं, भमरनिगरेणेव भव्वविंदेण, तरंगेणेव समभावेणं, हंसादिविहंगमेहिं विव संजतेहिं, पुप्फवाडियाहिं विव सुयाहिं साइबिंदुपायजणियमुत्ताहलसालिसुत्तिसंपुडेहिं विव गणहरोवएसवक्कजणियसग्गापवग्गसुहसालिमुमुक्खुहियएहिं परिगारिओ पउमसरोवरो विव विराइस्सइ, एवं सयलजगजीवजोणीजायस्स आधारभूओ भविस्सइ ॥४१॥

शब्दार्थ—[पउमसरोवरदंसणेणं] पद्मसरोवर के देखने से [अमू] वह [विमलजले-

णेव निम्मलमहिमाए] पद्मसरोवर के विमलजल की तरह निर्मल महिमावाला होगा। [सीयलतयेव संतीए] जैसे पद्मसरोवर शीतलता से युक्त होता है वैसे ही वह शांति से युक्त होगा [माहुरिएणेव सोम्मभावेण] सरोवर के जल की मधुरता के समान वह सौम्य भाव से विभूषित होगा। [गंभीरिएणेव नाणाइगुणेण] सरोवर की गम्भीरता के समान वह ज्ञानादिगुणों की गम्भीरता से युक्त होगा [कमलिणीहिं विव विमलभावणाहिं] जैसे सरोवर कमलिनियों से युक्त होता है उसी प्रकार वह (पच्चीस) विमल भावनाओं से युक्त होगा [मयरंदेणेव कारुण्णेणं] जैसे सरोवर मकरंदफूलों के रस से युक्त होता है, उसी प्रकार वह षट्काय के जीवों की करुणा से कलित होगा [भमरनिगरेणेव भव्वविंदेण] जैसे सरोवर भ्रमर समूह से युक्त होता है उसी प्रकार वह प्राणियों के समूह से सेवित होगा [तरंगेणेव समभावेण] जैसे सरोवर लहरों से व्याप्त होता है, उसी प्रकार वह इष्ट अनिष्ट आदि में समताभाव से युक्त होगा [हंसादिविहंगमेहिं विव संजतेहिं] जैसे सरो-

वर हंस आदि पक्षियों से सेवित होता है उसी प्रकार वह साधुओं से सेवित होगा। [पुप्फवाडियाहिं विव भुयाहिं] जैसे सरोवर पाल पर स्थित पुष्पवाटिकाओं से शोभित होता है उसी प्रकार वह आत्मज्ञानजनित प्रमोद से युक्त होगा [साइबिंदुपायजणिय-मुत्ताहलसालिसुत्तिसंपुडेहिं] जैसे सरोवर स्वाति नक्षत्र में बरसे जल की बिन्दुओं से उत्पन्न हुए मोतियों से सुशोभित शुक्ति (सीप) से सम्पन्न होता है [विव गणहरोवएस-वक्कजणिय सग्गापवग्गसुहसालिमुमुक्खुहियएहिं परिगरिओ पउमसरोवरो विव विराइस्सइ] उसी प्रकार वह तीर्थंकर प्ररूपित यथार्थ तत्त्व का उपदेश करनेवाले गणधरों के वचन से जनित स्वर्ग मोक्ष के सुख से शोभित होनेवाले मोक्षार्थी जीवों के हृदय से सुशोभित होगा [एवं सयलजगजीवजोणीजायस्स आधारभूओ भविस्सइ] इस प्रकार वह संसार के सब जीव योनियों में उत्पन्न हुए जीवों का आधार होगा ॥४१॥

खीरसायरसुमिणफलं ११

मूलम्—खीरसायरदंसणेणं अमू नाणाइअणंतगुणगणरयणायरो माहुरियगंभीरियाइगुणगणालंकिओ ससिकिरणसरिसउज्जलविमलजसधरो सियवायभंगतरंगाणिरूवगो विविहणयकल्लोललालियभंगजालंतरालसुयधम्मसलिलसंभिओ विविहविमलभावणाणईसंगमसंजायसमुदयसमज्जियगुणसमिद्धपवयणपरूवगो सयलजणाहियविहायगत्तणेणं नक्कयपीऊसाहियामियगुणगणाभिरामम्हुराइमहुरगिरासंपन्नो भविस्सइ ॥४२॥

शब्दार्थ—[खीरसायरदंसणेणं] क्षीरसागर का स्वप्न देखने से [अमू] वह बालक [नाणाइअणंतगुणगणरयणायरो] ज्ञान आदि अनन्तगुणरूपी रत्नों की खान होगा [माहुरियगंभीरियाइगुणगणालंकिओ] वाणी की मधुरता, गंभीरता आदि गुणों के समु-

दाय से अलंकृत होगा [ससिकिरणसरिसउज्जलविमलजसधरो] चन्द्र की किरणों के सदृश प्रकाशमान एवं निष्कलंक यश का धारक होगा [सियवायभंगतरंगणिरूवगो] स्याद्वाद के भंगरूपी तरंगो का प्रवर्तक होगा [विविहणयकल्लोलललियभंगजालंतराल-सुयधम्मसलिलसंभिओ] अनेक प्रकार के नयरूपी महातरंगों से सुन्दर भंगजाल जिसके मध्य में स्थित हैं ऐसे श्रुतधर्मरूपी जल से भरा होगा। [विविहविमलभावणाणईसंगम-संजायसमुदयसमज्जियगुणसमिद्धपवयणपरूवगो] अनित्य अशरण आदि भावनारूपी नदियों के कारण उत्पन्न हुइ वृद्धि से प्राप्त होनेवाले क्षमाप्रदायकत्व आदि गुणों से युक्त प्रवचनरूपी जल का प्रदर्शक होगा। [सयलजणहियत्तिहायगत्तगेणं] समस्त प्राणियों का हितकर्ता होने से [नक्कयपीऊसहियामियगुणगणाभिराममहुराइमहुरगिरा-संपन्नो भविस्सइ] अमृत से भी बढकर हितकारी अपरिमितगुणों से रमणीय एवं मधुर से भी मधुरवाणी से संपन्न होगा ॥४२॥

देवविमाणसुमिणफलं १२

मूलम्-देवविमाणदंसणेणं अमू समवसरणरूवदव्वइड्ढिसंपन्नो केवलणाणाइ भावइड्ढिसंपन्नो जगआलंबणभूओ देवदेवीविंदवंदिज्जमाणचरणो भविस्सइ।४३।

शब्दार्थ—[देवविमाणदंसणेणं] देवविमान का स्वप्न देखने से [अमू] वह बालक [समवसरणरूवदव्वइड्ढिसंपन्नो समवसरण तथा चोंतीसअतिशयरूप द्रव्यऋद्धि से संपन्न होगा [केवलणाणाइ भावइड्ढि संपन्नो] केवलज्ञान आदि भावऋद्धि से संपन्न होगा। [जगआलंबणभूओ] जगत का आश्रयभूत होगा और [देवदेवीविंदवंदिज्जमाणचरणो भविस्सइ] देवों तथा देवियों के समूह से वंदित होगा।।४३॥

रयणरासिसुमिणफलं १३

मूलम्—रयणरासिदंसणेणं अमू पाणाइवायविरमणाइसत्तवीसइअणगारगुण-बारसविहतवबासीअहियसत्तदससयभेयप्पभेयसत्तदससंजमअट्ठारससीलंगसह -

रसाइअणेगगुणरयणरासिरूवो भविस्सइ ।

अह य पुव्वभवोवज्जिय तित्थयरनामकम्माइलक्खणपरमपुण्णपब्भारेण तित्थयरो खीणाभिणिबोहियणाणावरणत्त १ खीणसुयणाणावरणत्त २ खीणओहीणाणावरणत्त ३ खीणमणपज्जवणाणावरणत्त ४ खीणकेवलणाणावरणत्त ५ खीणचक्खुदंसणावरणत्त ६ खीणअचक्खुदंसणावरणत्त ७ खीणओहीदंसणावरणत्त ८ खीणकेवलदंसणावरणत्त ९ खीणनिद्दत्त १० खीणनिद्दानिद्दत्त ११ खीणपयलत्त १२ खीणपयलापयलत्त १३ खीणथीणद्धित्त १४ खीणसायावेयणिज्जत्त १५ खीणअसायावेयणिज्जत्त १६ खीणदंसणमोहणिज्जत्त १७ खीणचारित्तमोहणिज्जत्त १८ खीणनेरइयाउयत्त १९ खीणतिरियाउयत्त २० खीणमणुस्साउयत्त २१ खीणदेवाउयत्त २२ खीणसुहनामत्त २३ खीणअसुहनामत्त २४ खीणउच्चगोयत्त २५ खीणनीयगो-

यत्त २६ खीणदाणंतरायत्त २७ खीणलाहंतरायत्त २८ खीणभोगंतरायत्त २९ खीण-उवभोगंतरायत्त ३० खीणवीरियंतरायत्त ३१ प्पभिइनाणाविहगुणरयणरासी सासओ सिद्धो भविस्सइ।४४॥

शब्दार्थ—[रयणरासिदंसणेण] रत्नराशि देखने से [अमू] वह बालक [पाणाइ-वायविरमणाइसत्तवीसइअणगारगुण] प्राणातिपातविरमण आदि सत्ताईस अणगारगुणों, [बारसविहतव] बारह प्रकार के तपों [बासीअहियसत्तदससयभेयप्पभेय] सत्तरहसौ-बयासी (तणावा) भेद प्रभेद सहित [सत्तदससंजम] सत्रह प्रकार के संयम [अट्ठारससीलंगसहस्साइ] और अठारह हजार शीलांगों आदि [अणेगगुणरयणरासिरूवो भविस्सइ] अनेक गुणरूपी रत्नों की राशि होगा।

[अह य पुव्वभवोवज्जिय] इसके अतिरिक्त पूर्वभव में उपार्जित [तित्थयर नाम-कम्माइलक्खणपरमपुण्णपब्भावेण तित्थयरो] तीर्थंकर नामकर्म आदि पुण्य के समूह

से वह तीर्थंकर होगा। तथा [खीणाभिणिबोहियणाणावरणत्त] आभिनिबोधिकज्ञानावरण का क्षय [खीणसुयणाणावरणत्त] श्रुतज्ञानावरण का क्षय [खीणओहीणाणावरणत्त] अवधिज्ञानावरण का क्षय [खीणमणपज्जवणाणावरणत्त] मनःपर्यवज्ञानावरण का क्षय [खीणकेवलणाणावरणत्त] केवलज्ञानावरण का क्षय [खीणचक्खुदंसणावरणत्त] चक्षुदर्शनावरणका क्षय [खीणअचक्खुदंसणावरणत्त] अचक्षुदर्शनावरण का क्षय [खीणओहीदंसणावरणत्त] अवधिदर्शनावरण का क्षय [खीणकेवलदंसणावरणत्त] केवलदर्शनावरण का क्षय [खीणनिद्दत्त] निद्रा का क्षय [खीणनिद्दानिद्दत्त] निद्रानिद्रा का क्षय [खीणपयलत्त] प्रचला का क्षय [खीणपयलापयलत्त] प्रचलाप्रचला का क्षय [खीणथीणद्धित्त] स्त्यानर्द्धि का क्षय [खीणसायवेयणिज्जत्त] सातावेदनीय का क्षय [खीणअसायावेयणिज्जत्त] असातावेदनीय का क्षय [खीणदंसणमोहणिज्जत्त] दर्शनमोहनीय का क्षय [खीणचरित्तमोहणिज्जत्त] चारित्रमोहनीय का क्षय [खीणनेरइयाउयत्त] नरकायु का क्षय [खीण-

तिरियाउयत्त] तिर्यंचआयु का क्षय [खीणमणुस्साउयत्त] मनुष्यायु का क्षय [खीणदेवाउयत्त] देवआयु का क्षय [खीणसुहनामत्त] शुभनाम कर्म का क्षय [खीणअसुहनामत्त] अशुभनाम कर्म का क्षय [खीण उच्चगोयत्त] उच्चगोत्र का क्षय [खीण नीयगोयत्त] नीचगोत्र का क्षय [खीण दाणंतरायत्त] दानान्तराय का क्षय [खीणलाहंतरायत्त] लाभान्तराय का क्षय [खीण भोगंतरायत्त] भोगान्तराय का क्षय [खीण उवभोगांतरायत्त] उपभोगान्तराय का क्षय [खीण वीरियंतरायत्त] वीर्यान्तराय का क्षय [प्पभिइनाणाविहगुणरयणरासी] इत्यादि अनेक प्रकार के गुणरूपी रत्नों की राशि होगा। [सासओ सिद्धो भविस्सइ] तथा शाश्वत सिद्ध होगा ॥४४॥

निद्धूमसिहिसुमिणफलं १४

मूलम्–निद्धूमसिहिदंसणेणं अमू सिहिव्व पूओ पावगो य भविस्सइ। झाणाणलेण अणाइकालीणत्तमलं सोहिस्सइ। सुक्कज्झाणविघडियघणघाइ-

कम्ममलपडलोल्लसियविमलकेवलणाणालोएण जहवट्टियासेसभूयभवब्भावि भावसहावावभासगो भविस्सइ। विविहकठिणकठिणयरकठिणतमाभिग्गह नाणाविहघोरतवचरणेण दड्ढिंधणनिद्धूमजलियहुयवहसरिसतेअे, भवोवग्गाहि-कम्मक्खवगलेस्सातीयअप्पकंपपरमनिज्जराकारणसुहुमकिरियअनियट्टिणामतइ-यसुक्कज्झाणेण निस्सेसियकम्ममलकलंको अवात्तसुद्धनियसहावो उड्ढगइ-परिणामो देवमणुस्सतिरियघणघणाघणकय नाणाविह उवसग्गवारिहाराअप्प-डिहयज्झाणसिहो निव्वायट्ठाणट्ठियअग्गिसिहा विव उड्ढगामी भविस्सइ॥४५॥

शब्दार्थ—[निद्धूमसिहिदंसणेणं] निर्धूम अग्नि के देखने से [अमू] वह बालक [सिहिव्व पूओ पावगो य भविस्सइ] अग्नि के समान पवित्र और पावक–पावनकर्त्ता होगा। [झाणाणलेण] वह ध्यानरूपी अग्नि से [अणाइकालीणत्तमलं सोहिस्सइ] अना-

दिकालीन आत्मिक मल का शोधन करेगा। [सुक्कज्झाणविघडियघणघाइकम्ममलपडलोल्लसियविमलकेवलणाणालोएण जहवट्ठियासेसभूयभवब्भाविभावसहावावभासगो भविस्सइ] शुक्लध्यान से उसके घणघातिया कर्मों का क्षय होगा और उस कर्ममल के पटल के क्षय से केवलज्ञान उत्पन्न होगा और उस केवलज्ञान के प्रकाश से यथार्थ रूप से भूत, वर्तमान, तथा भावि भावों–पदार्थों के स्वभाव को जाननेवाला होगा। [विविहकठिणकठिणयरकठिणतमाभिग्गह] तथा अनेक प्रकार के कठिन कठिनतर और कठिनतम अभिग्रहों को धारण करनेवाला होगा तथा [नाणाविहघोरतवचरणेण दड्ढिंधणनिद्धूमजलियहुयवहसरिसतेओ] तथा विविध प्रकार के उग्र तपों का आचरण करके दहकती हुइ और धूम से रहित अग्नि के समान तेजस्वी होगा। [भवोवग्गाहिकम्मक्खवगलेस्सातीयअप्पकंपपरमनिज्जराकारणसुहुमकिरियअनियट्टिणामतइयसुक्कज्झाणेण]-वह संसार अर्थात् जन्म मरण के कारणभूत कर्मों का क्षय करनेवाले, लेश्या (कषाय से

निर्धूमाग्नि-
स्वप्नफलम्

युक्त योग की प्रवृत्ति) से रहित अविचल, उत्कृष्ट निर्जरा के हेतु 'सूक्ष्मक्रियाअनिवर्ति' नामक शुक्लध्यान के तीसरे पाये से [निस्सेसियकम्ममलकलंको] समस्त कर्ममलरूपी कलंक का क्षय कर देगा [अवात्तसुद्धनियसहावो] शुद्धस्वभाव को प्राप्त करेगा [उड्ढगइपरिणामो] ऊर्ध्वगतिरूप परिणमनवाला होगा [देवमणुस्सतिरियघणघणावणकयनाणाविहउवसग्गवारिहारारयअप्पडिहयज्झाणसिहो] देव मनुष्य तथा तिर्यंचरूपी सघन मेघों द्वारा बरसाइ जानेवाली अनेक प्रकार के उपसर्गरूपी जलकी धाराओं से भी उसके ध्यान की शिखा बुझ नहीं सकती [निव्वायट्ठाणट्ठियअग्गिसिहा विव उड्ढगामी भविस्सइ] वह वायुरहित स्थान में स्थित अग्निशिखाके समान ऊर्ध्वगामी होगा॥४५॥

। इति तृतीय वाचना।

मूलम्—तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणी हट्ठतुट्ठा चित्तमाणंदिया हरिसवसविसप्पमाणहियया करयलपरिग्गहियं सिरसा-

वत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—एवमेयं सामी ! तहमेयं सामी ! अवितहमेयं सामी ! असंदिद्धमेयं सामी ! इच्छियमेयं सामी । पडिच्छियमेयं सामी ! इच्छियपडिच्छियमेयं सामी ! सच्चे णं एस अट्ठे से जहेयं तुब्भे वदहात्ति कट्टु तं सुमिणं सम्मं पडिच्छइ. पडिच्छित्ता सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नानामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव सए सयणगिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मा णं इमे एयारूवा महासुमिणा अन्नेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिंसुत्तिकट्टु देवगुरुधम्मसंबद्धाहिं पसत्थाहिं धम्मियाहिं कहाहिं धम्मजागरियं जागरमाणा विहरइ ॥४६॥

शब्दार्थ—[तए णं सा तिसला खत्तियाणी] तदनन्तर वह त्रिशला क्षत्रियाणी

त्रिशलायाः स्वप्नाप्रतिघातार्थ-जागरणम्

[सिद्धत्थेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणी हट्ठतुट्ठा] राजा सिद्धार्थ के इस प्रकार कहने पर हर्षित एवं संतुष्ट हुई। [चित्तमाणंदिया] उसका चित्त आनंदित हुआ [हरिसवसविसप्पमाणहियया] हर्ष से उसका हृदय विकसित हो गया [करयलपरिग्गहियं] वह दोनों हाथ जोडकर [सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु] मस्तक पर आवर्त एवं अंजलि करके [एवं वयासी–] इस प्रकार बोली–[एवमेयं सामी!] हे स्वामिन्! आपने जो कहा है सो ऐसा ही है [तहमेयं सामी!] आपका कथन सत्य है। [अवितहमेयं सामी] हे स्वामिन्! आपका कथन असत्य नहीं है। [असंदिद्धमेयं सामी!] हे स्वामिन्! यह कथन संशय रहित है। [इच्छियमेयं सामी!] हे स्वामिन्! आपका कथन मुझे इष्ट है। [पडिच्छियमेयं सामी!] अत्यन्त इष्ट है [इच्छियपडिच्छियमेयं सामी!] हे स्वामिन्! आपका कथन इष्ट तथा अत्यन्त इष्ट है [सच्चे णं एसअट्ठे से जहेयं तुब्भे वदहत्तिकट्टु] आपने मुझ से जो कहा है सो यह अर्थ सत्य है [त्तिकट्टु] इस प्रकार कहकर [तं सुमिणं

सम्मं पडिच्छइ] त्रिशला क्षत्रियाणी उन स्वप्न को भली भांति अंगीकार करती है। [पडिच्छित्ता] अंगिकार करके [सिद्धत्थेणं रन्ना] राजा सिद्धार्थ की [अब्भणुन्नाया समाणी] आज्ञा पाकर [णाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ] नाना प्रकार के मणि, सुवर्ण और रत्नों की रचना से विचित्र भद्रासन से ऊठती है [अब्भुट्ठित्ता] ऊठकर [अतुरिय–मचवलमसंभंताए] त्वरा रहित–चपलता रहित और संभ्रम रहित [अविलं-बियाए राजहंससरिसीए गईए] विलंब रहित सुन्दर राजहंसी–सी गति से [जेणेव सए सयणगिहे तेणेव उवागच्छइ] चलकर जहां अपना शयनगृह था वहां आती है [उवा-गच्छित्ता] वहां आकर [मा णं इमे एयारूवा] यह इस प्रकार के [महासुमिणा] महा-स्वप्न [अन्नेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिसुत्तिकट्टु] अन्य पाप स्वप्नों से घात को प्राप्त न होजाएँ ऐसा विचार कर [देवगुरुधम्मसंबद्धाहिं पसत्थाहिं धम्मियाहिं कहाहिं] देव-गुरु और धर्म संबन्धी प्रशस्त धर्ममय कथाओं द्वारा [धम्मजागरियं जागरमाणा विह-

रइ] धर्मजागरण करती हुइ विचरने लगी ॥४६॥

मूलम्—तए णं से सिद्धत्थे खत्तिए राया पच्चूसकालसमयंसि कोडुंबियपुरिसे सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! बाहिरियं उवट्ठाणसालं अज्ज सविसेसं परमरम्मं गंधोदगासित्तसंमज्जिओवलित्तसुइयं पंचवण्णसरससुरहिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवडज्झंतमघमघंतगंधुद्धूयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं करेह य कारवेह य, एयमाणत्तियं पच्चप्पिणेह। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा रायकहियाणुसारेण बाहिरियं उवट्ठाणसालं पुव्वुत्तपगारं करित्ता य कारवित्ता य एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति ॥४७॥

सिद्धार्थस्य-कौटुम्बिकेभ्य आज्ञा-प्रदानम्

शब्दार्थ—[तए णं से सिद्धत्थे खत्तिए राया] तत्पश्चात् सिद्धार्थ नामके क्षत्रिय

राजा ने [पच्चूसकालसमयंसि] प्रातःकाल के समय [कोडुंबियपुरिसे सद्दावित्ता एवं वयासी] कौटुंबिक पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार कहा—[खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया !] हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही [अज्ज बाहिरियं उवट्ठाणसालं] आज बाहर की उपस्थानशाला (सभाभवन) को [सविसेसं परमरम्मं] विशेषरूप से परमरमणीय, [गंधोदगसित्तसंमज्जिओवलित्तसुइयं] गन्धोदक से सिंचित, साफ सुथरी, लीपी हुई [पंचवण्णसरससुरहिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं] पांच वर्णों के सरस सुगन्धित एवं बिखरे हुए फूलों के समूहरूप उपचार से युक्त [कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधुवडज्झंतमघमघंतगंधुद्धूयाभिरामं] कालागुरु कुंदुरुक्क तुरुष्क (लोबान] तथा धूप के जलाने से महकती हुई गंध से व्याप्त होने के कारण मनोहर [सुगंधवरगंधियं] श्रेष्ठ सुगन्ध के चूर्ण से सुगन्धित तथा [गंधवट्टिभूयं] सुगन्ध की गुटिका (वट्टी) के समान [करेह य कारवेह य] करो और कराओ। [एयमाणत्तियं पच्चप्पिणेह] ऐसा करके तथा करवा करके मेरी यह आज्ञा वापिस सौंपो।

सिद्धार्थस्य-कौटुम्बिकेभ्य आज्ञाप्रदानम्

॥३३२॥

[तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा] तत्पश्चात् वे कौटुंबिक पुरुष सिद्धार्थ राजा द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर [हट्ठतुट्ठा] हर्षित और संतुष्ट हुए [रायकहियाणुसारेण] राजा के कथनानुसार [बाहिरियं उवट्ठाणसालं] बाहर की उपस्थान-शाला—सभामण्डप को [पुव्वुत्तपगारं] पूर्वोक्त प्रकार का [करित्ता य कारवित्ता य] करके तथा करवा करके [एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति] आज्ञा वापिस सौंपी ॥४७॥

मूलम्–तए णं से सिद्धत्थे राया कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियंमि अहपंडुरे पभाए रत्तासोगपगासकिंसुयसुयमुहगुंजद्धरागबंधुजीवगपारावयचलणनयण–परहुयसुरत्तलोयणजासुमिण कुसुमजलियजलणतवणिज्जकलसहिंगुलयनियररूवाइरेगरहंतसस्सिरिए दिवागरे अह कमेण उदिए तस्स दिणयरपरंपरावयारपारद्धम्मि अंधयारे, बालातवकुंकुमेणं

खइएव्व जीवलोए, लोयणविसआणुआसविगसंतविसददंसियम्मि लोए, कमलागरसंडबोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते सयणिज्जाओ उट्ठेइ। उट्ठित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे संनिसण्णे ॥४८॥

शब्दार्थ—[तए णं से सिद्धत्थे राया] ततूपश्चात् सिद्धार्थ राजा [कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए] स्वप्नवाली रात्रि के बाद दूसरे दिन रात्रि प्रकाशमान प्रभातरूप हुई [फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियंमि] प्रफुल्लित कमलों के पत्ते विकसित हुए—काले मृग के नेत्र निद्रारहित होने से विकस्वर हुए [अह पंडुरे पभाए] फिर वह प्रभात पाण्डुर श्वेत वर्णवाला हुआ [रत्तासोगपगासकिंसुयसुयमुहगुंजद्धराग—बंधुजीवग—पारावयचलण-

नयण–परहुयसुरत्तलोयण जासुमिण कुसुमजणियजलणतवणिज्जकलस–हिंगुलयनियर रूवाइरेगरहंतसस्सिरीए दिवागरे अह कमेण उदिए] लाल अशोक की कान्ति, पलाश के पुष्प, तोते की चोंच, चीरमी के अर्द्धभाग दुपहरी के पुष्प, कबूतर के पैर और नेत्र, कोकिला के नेत्र, जासोद के फूल, जाज्वल्यमान अग्नि, स्वर्णकलश, तथा हिंगलू के समूह की लालिमा से भी अधिक लालिमा से जिसकी श्री सुशोभित हो रही है, ऐसा सूर्य क्रमशः उदित हुआ। [तस्स दिणकरपरंपरावयारपारद्धम्मि अंधयारे] सूर्य की किरणों का समूह नीचे उतरकर अंधकार का विनाश करने लगा [बालातवकुंकुमेणं खइएव्व जीवलोए] बालसूर्यरूपी कुंकुम से मानो जीवलोक व्याप्त हो गया। [लोयणविस आणु आसविगसंतविसदर्दंसियम्मि लोए] नेत्रों के विषय का प्रचार होने से विकसित होनेवाला लोक स्पष्ट रूप से दिखाइ देने लगा [कमलागरसंडबोहए] सरोवरों में स्थित कमलों के वन को विकसित करनेवाला [उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिनयरे] तथा सह-

स्रकिरणोंवाला दिवाकर [तेयसा जलंते] तेज से जाज्वल्यमान हो गया। ऐसा होने पर [सयणिज्जाओ उट्ठेइ] राजा सिद्धार्थ शय्या से उठे। [उट्ठित्ता] उठकर [ण्हाए] स्नान किया [कयबलिकम्मे] पक्षि आदि को अन्नदानरूप बलिकर्म किया [कयकोउयमंगल-पायच्छित्ते] कौतुकमंगल और दुःस्वप्न निवारणरूप प्रायश्चित्त किया [सव्वालंकारविभूसिए] सब अलंकारों से विभूषित हुए [जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ] फिर जहां बाहर का आस्थानमण्डप—सभामण्डप था, वहां आते हैं [उवागच्छित्ता] वहां आकर [सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसण्णे] पूर्व दिशा की ओर मुह करके उत्तम सिंहासन पर बैठे ॥४८॥

मूलम्—तए णं से सिद्धत्थेराया अप्पणो अदूरसामंते उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए अट्ठ भद्दासणाइं सेयं वत्थपच्चुत्थुयाइं सिद्धत्थमंगलोवयारकयसुभकम्माइं रयावेइ, रयावित्ता नानामणिरयणमंडियं अहियपच्छणिज्जरूवं महग्घवरपट्टणु-

ग्गयं सण्हबहुभत्तिसयचित्तट्ठाणं ईहामियउसभतुरयणरमगरविहगवालगकिंनररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलय भत्तिचित्तं सुखचियवरकणगपवरपेरंतदेसभागं अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ अंछावित्ता अच्छरगमउअमसूरगउच्छाइयं धवलवत्थपच्चुत्थुयं विसिट्ठं अंगसुहफासयं सुमउयं तिसलाए खत्तियाणीए भद्दासणं रयावेइ, रयावित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थपाढए विविहसत्थकुसले सुमिणपाढए सद्दावेह, सद्दावित्ता एयं ममाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह ! तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु 'एवं देवो तहत्ति' आणाए विणएणं सिद्धत्थस्स रन्नो वयणं पडिसुणेंति। तए णं ते कोडुंबियपुरिसा

जेणेव सुमिणपाढगाणं गिहा तेणेव उवागच्छित्ता सुमिणपाढगे सद्दावेंति ॥४९॥

शब्दार्थ—[तए णं सिद्धत्थे राया] तत्पश्चात् सिद्धार्थ राजाने [अप्पणो अदूर सामंते] अपने से न अधिक दूर और न अधिक समीप में [उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए] पूर्व–उत्तर दिशा के कोने–ईशान कोण में [अट्ठ भद्दासणाइं] आठ भद्रासन रखवाये [सेय वत्थपच्चुत्थुयाइं] वे श्वेत वस्त्रों से आच्छादित थे और [सिद्धत्थ मंगलोवयारकय-सुभकम्माइं रयावेइ] श्वेत सरसों तथा मांगलिक द्रव्यों से उनमें शुभ कर्म किया गया था। [रयावित्ता] शुभ कर्म करवा के [नाणामणिरयणमंडियं] नानामणियों और रत्नों से मण्डित [अहियपेच्छणिज्जरूवं] अतिशय दर्शनीय [महग्घवरपट्टणुग्गयं] बहुमूल्य और श्रेष्ठ नगर में बनीहुई [सण्ह बहु भत्तिसयचित्तट्ठाणं] कोमल एवं सैकडों प्रकार की रचनावाले चित्रों का स्थान भूत [ईहा मिय] ईहामृग (भेडिया) [उसभ] वृषभ [तुरय] अश्व [णर] मनुष्य [मगर] मगर [विहग] पक्षी [वालग] सर्प [किंनर] किन्नर [रुरु] रुरु

स्वप्नपाठकानां त्रिशलायाश्च कृते भद्रासन-स्थापनम्

जाति केमृग [सरभ] अष्टापद [चमर] चमरी गाय [कुंजर] हाथी [वणलय] वनलता [पउमलय] और पद्मलता [भत्तिचित्तं] आदि के चित्रों से युक्त [सुखचिय वरकणग पवरपेरंतदेसभागं] श्रेष्ठ स्वर्ण के तारों से भरेहुए सुशोभित किनारोवाली [अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ] जवणिका [पर्दा] सभा के भीतरी भाग में बंधवाई [अंछावित्ता] बंधवाकर [अच्छरगमउअमसूरगउच्छाइयं धवलवत्थपच्चुत्थुयं विसिट्ठं अंगसुहफासयं सुमउयं तिसलाए खत्तियाणीए भद्दासणं रयावेइ] उसके भीतरी भाग में त्रिशला क्षत्रियाणी के लिए एक भद्रासन रखवाया। वह भद्रासन आस्तरक (खोली) और कोमल तकिया से ढंका था (श्वेतवस्त्र उस पर बिछा हुआ था) सुन्दर था। स्पर्श से अंगों को सुख उत्पन्न करनेवाला था और अतिशय मृदु था। [रयावित्ता] इस प्रकार आसन बिछवाकर राजा ने [कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ] कोटुम्बिक पुरुषों को बुलवाया [सद्दावित्ता एवं वयासी-] बुलवाकर इस प्रकार कहा—[खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया !]

स्वप्नपाठ-
कानांत्रिश-
लायाश्च
कृते
भद्रासन
स्थापनम्

हे देवानुप्रियों ! [अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थपाढए] अष्टांग महानिमित्त—ज्योतिष के सूत्र और अर्थ के पाठक [विविहसत्थकुसले] तथा विविधशास्त्रों में कुशल [सुमिणपाढए सद्दावेह] स्वप्नपाठकों को शीघ्र ही बुलाओ [सद्दावित्ता एयं ममाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह] और बुलवाकर शीघ्र ही इस आज्ञा को वापस लौटाओ।

[तए णं ते कोडुंबियपुरिसा] उसके बाद वे कौटुम्बिक पुरुष [सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा] राजा सिद्धार्थ के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर [हट्ठतुट्ठा] हर्षित यावत् आनन्दित हृदय हुए। [करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु] दोनों हाथ जोडकर दसो नखों को इकट्ठा करके मस्तकपर घुमाकर अंजलि जोडकर ['एवं देवो तहत्ति' आणाए विणएणं सिद्धत्थस्स रन्नो वयणं पडिसुणेंति] 'हे देव ! ऐसा ही हो' इस प्रकार कहकर विनय के साथ सिद्धार्थ राजा के वचनों को स्वीकार करते हैं [तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जेणेव सुमिणपाढगाणं गिहा तेणेव उवाग-

च्छंति। तदनंतर वे कौटुम्बिकपुरुष जहां स्वप्नपाठकों के घर थे, वहाँ पहुंचते हैं और [उवागच्छित्ता] [पहुंचकर [सुमिणपाठगे सद्दावेंति] स्वप्न पाठकों को बुलाते हैं ॥४९॥

मूलम्-तए णं ते सुमिणपाढगा सिद्धत्थस्स रन्नो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठा जाव हियया ण्हाया कयबलिकम्मा कय कोउयमंगलपायच्छित्ता अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा सएहिं सएहिं गिहेहिं पडिणिक्खमित्ता एगओ मिलंति, मिलित्ता जेणेव सिद्धत्थस्स रन्नो बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सिद्धत्थराया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सिद्धत्थं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति। सिद्धत्थेणं रन्ना सक्कारिया सम्माणिया समाणा पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति ॥५०॥

शब्दार्थ—[तए णं ते सुमिणपाढगा] तत्पश्चात् वे स्वप्नपाठक [सिद्धत्थस्स रन्नो

कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा] सिद्धार्थ राजा के कौटुम्बिक पुरुषों द्वारा बुलायेजाने पर [हट्ठतुट्ठा] हृष्ट तुष्ट यावत् आनन्दित हृदय हुए। [ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता] उन्होंने स्नान किया, काकआदि को अन्नदेनेरूप बलिकर्म किया तथा कौतुक मसीतिलक आदि और सरसों दही अक्षत आदि के प्रयोगरूप मंगल तथा प्रायश्चित्त–दुःस्वप्न के फल को विघात करनेवाला प्रायश्चित्त किया [अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा] अल्प किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत किया [सएहिं सएहिं गिहेहिं पडिणिक्खमित्ता एगओ मिलंति] और वे अपने अपने घरों से निकलकर एक स्थान पर इकट्ठे हुए [मिलित्ता] इकट्ठे होकर [जेणेव सिद्धत्थस्स रन्नो बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सिद्धत्थराया तेणेव उवागच्छंति] जहां सिद्धार्थराजा की वाहरी उपस्थानशाला थी और जहां राजा सिद्धार्थ थे, वहां आये [उवागच्छित्ता सिद्धत्थं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति] आकर सिद्धार्थ राजा को जय और विजय के शब्दों से

बधाया [सिद्धत्थेणं रन्ना सक्कारिया सम्माणिया समाणा] राजा सिद्धार्थ के द्वारा उनका सत्कार और सम्मान होनेपर [पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति] वे स्वप्नपाठक पहले से बिछाए हुए भद्रासनों पर अलग-अलग बैठे ॥५०॥

मूलम्-तए णं से सिद्धत्थे राया जवनियंतरियं तिसलं देविं ठवेइ. ठवेत्ता सुवण्णरययाइ मंगलियवत्थुपडिपुण्णहत्थे परेणं विणएणं ते सुमिणपाढए एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया। तिसलादेवी अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी गयवसहाइ चउद्दसमहासुमिणं पासित्ता णं पडिबुद्धा तं एएसिं णं देवाणुप्पिया! उरालाणं धन्नाणं मंगल्लाणं सस्सिरीयाणं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ? ॥५१॥

सिद्धार्थकृतस्वप्नार्थविषयकः प्रश्नः

शब्दार्थ—[तए णं से सिद्धत्थे राया] तत्पश्चात् सिद्धार्थ राजा ने [जवणियंतरियं तिसलं देविं ठवेइ] जवनिका के पीछे त्रिशलादेवी को बिठलाया [ठवेत्ता सुवण्णरययाइ मंगलियवत्थुपडिपुण्णहत्थे परेणं विणएणं] फिर हाथों में सुवर्णरजत आदि मांगलिक पदार्थों को लेकर अत्यन्त विनय के साथ [ते सुमिणपाढए एवं वयासी–] उन स्वप्नपाठकों से इस प्रकार कहा–[एवं खलु देवाणुप्पिया ! हे देवानुप्रियो !] [तिसलादेवी अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि] आज उस प्रकार की उस [पूर्ववर्णित] शय्या पर [पुव्वरत्ता वरत्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी–ओहीरमाणी] मध्यरात्रि के समय कुछ सोती हुई कुछ जगती हुई, त्रिशलादेवीने [गयवसहाइ चउद्दस महासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा] गज–वृषभ–आदि चौदह महास्वप्न देखे हैं स्वप्न देखकर जाग गई [तं एएसिं णं देवाणुप्पिया उरालाणं धन्नाणं मंगल्लाणं सस्सिरीयाणं महासुमिणाणं] तो हे देवानुप्रियों ! उन उदार धन्य, मांगलिक, सश्रीक–महास्वप्नों का 'के मन्ने कल्लाणे फलवित्ति विसेसे भविस्सइ' क्या फल–विशेष होगा ? ॥५१॥

मूलम्—तए णं ते सुमिणपाढगा सिद्धत्थस्स रन्नो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा ते महासुमिणे सम्मं ओगिण्हंति, ओगिण्हित्ता इहं अणुपविसंति, अन्नमन्नेणं सद्धिं संचालेंति। तए णं ते सुमिणपाढगा तेसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं लद्धत्था गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अहिगयट्ठा सिद्धत्थस्स रन्नो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारेमाणा उच्चारेमाणा एवं वयासी—एवं खलु अम्हाणं सामी ! सुमिणसत्थम्मि बावत्तरिए सुमिणेसु तीसं महासुमिणा पण्णत्ता, तत्थ णं सामी अरिहंतमायरो वा चक्कवट्टीमायरो वा अरिहंतंसि वा चक्कवट्टिंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे गयवसहाइ चउद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति तं एवं खलु देवाणुप्पिया ! तिसलाए देवीए इमे पसत्था चउद्दस महासुमिणा दिट्ठा, एवं मंगल्ला धन्ना सस्सिरिया

आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारगाणं सामी! महासुमिणा दिट्ठा, तं णं अत्थलाभो सामी! भविस्सइ, भोगलाभो सामी! भविस्सइ, सोक्खलाभो सामी! भविस्सइ, रज्जलाभो सामी! भविस्सइ, रट्ठलाभो सामी! भविस्सइ, पुत्तलाभो सामी! भविस्सइ। एवं खलु सामी! तिसलादेवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं य राइंदियाणं विइक्कंताणं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडिंसयं कुलतिलयं कुलकित्तिकरं कुलवित्तिकरं कुलणंदिकरं कुलजसकरं कुलदिणयरं कुलाधारं कुलपायवं कुलतंतुसंताणविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगं ससिसोमागारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाहिइ। से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णायपरिणयमित्ते जोव्वणगम-

णुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते वित्थिण्णविउलबलवाहणे चाउरंतचक्कवट्टी रायवई राया भविस्सइ, जिणे वा तिलुक्कनायगे धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी भविस्सइ, तं उरालाणं धन्नाणं मंगल्लाणं देवाणुप्पिया तिसलाए देवीए सुमिणा दिट्ठा। तए णं सिद्धत्थे राया तेसिं सुमिणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे चित्तमाणंदिए हरिसवसविसप्पमाणहियए ते सुमिणलक्खणपाढए एवं वयासी—एवमेयं देवाणुप्पिया! तहमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियमेयं देवाणुप्पिया! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! सच्चे णं एस अट्ठे से जहेय तुब्भे वयह—त्तिकट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ पडिच्छित्ता ते सुमिणलक्खणपाढए विउलेणं असणपाणखाइम-साइमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेइ सम्माणेइ, विउलं जीवियरिहं पीइ-

दाणं दलइ, तओ णं ते पडिविसज्जेइ ॥५२॥

शब्दार्थ—[तएं णं ते सुमिणपाढगा] उसके बाद वे स्वप्नपाठक [सिद्धत्थस्स रन्नो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा] सिद्धार्थ राजा से इस अर्थ को सुनकर [निसम्म हट्ठतुट्ठा] और हृदय में धारण करके हृष्ट तुष्ट हुए [ते महासुमिणे सम्मं ओगिण्हंति] उन्होंने उन स्वप्नों का सम्यक् प्रकार से अवग्रहण किया [ओगिण्हित्ता] अवग्रहण करके [इहं अणुपविसंति] ईहा (विचारणा) में प्रवेश किया [अन्नमन्नेणं सद्धिं संचालेंति] प्रवेश करके परस्पर एक दूसरे के साथ विचार विमर्श किया [तए णं ते सुमिणपाढगा] उसके बाद उन स्वप्न पाठकोने [तेसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं] उन चौदह महास्वप्नों के [लद्धट्ठा] अर्थ को अपने आप से समझा [गहियट्ठा] दूसरों का अभिप्राय समझकर विशेष अर्थ समझा [पुच्छियट्ठा] आपस में उस अर्थ को पूछा [विणिच्छियट्ठा] अर्थ का निश्चय किया [अहिगयट्ठा] और फिर तथ्य अर्थ का निश्चय किया [सिद्धत्थस्स रन्नो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारे-

स्वप्नपाठक-
दर्शितस्वप्न-
फलं तेषां
सत्कारश्च

माणा उच्चारेमाणा एवं वयासी] वे स्वप्नपाठक सिद्धार्थ राजा के सामने स्वप्नशास्त्रों का बार–बार उच्चारण करते हुए इस प्रकार बोले–[एवं खलु अम्हाणं सामी !] हे स्वामिन् ! इस प्रकार हमारे [सुमिणसत्थंसि बावत्तरिए सुमिणेसु] स्वप्नशास्त्र में बहत्तर प्रकारके स्वप्नों में [तीसं महासुमिणा पण्णत्ता] तीस महास्वप्न कहे गये हैं [तत्थ णं सामी अरिहंतमायरो वा] हे स्वामिन् ! अरिहंत की माताएँ और [चक्कवट्टि मायरो वा] चक्रवर्ती की माताएँ [अरिहंतंसि वा चक्कवट्टिंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि] अरिहंत और चक्रवर्ती के गर्भ में आने पर [एएसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे गयवसहाइ चउद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति] इन तीस महास्वप्नों में से हाथी वृषभ आदि चौदह महास्वप्नों को देखकर जगती है [तं एवं खलु देवाणुप्पिया ! तिसलाए देवीए इमे पसत्था चउद्दस महासुमिणा दिट्ठा] अतएव हे देवानुप्रिय त्रिशलादेवी ने ये शुभ चौदह महास्वप्न देखे हैं [एवं मंगल्ला, धन्ना, सस्सिरीया] इसी प्रकार

हे स्वामिन्! मांगलिक, धन्य सश्रीक [आरोग्ग] तथा आरोग्य [तुट्ठि] संतोष [दीहाउ] दीर्घायु [कल्लाणमंगल्लकारगाणं सामी महासुमिणा दिट्ठा] कल्याण और मंगल करने वाले महास्वप्न देखे हैं। [तं णं अत्थलाभो सामी! भविस्सइ] इन्हें देखने से हे स्वामिन्! अर्थ का लाभ होगा। [भोगलाभो सामी भविस्सइ] हे स्वमिन्! भोग का लाभ होगा [सोक्खलाभो सामी! भविस्सइ] हे स्वामिन्! सौख्य का लाभ होगा। [रज्जलाभो सामी! भविस्सइ] हे स्वामिन् राज्य का लाभ होगा [रट्ठलाभो सामी! भविस्सइ] हे स्वामिन्! राष्ट्र का लाभ होगा। [पुत्तलाभो सामी! भविस्सइ] हे स्वामिन्! पुत्र का लाभ होगा। [एवं खलु सामी! तिसलादेवी नवण्हं मासाणं पडिपुण्णाणं] हे स्वामिन्! त्रिशलादेवी पूरे नौ मास व्यतीत हो जाने पर [अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं विइक्कंताणं] और साढे सात अहोरात्र बीतनेपर [कुलकेउं] कुलकेतु [कुलदीवं] कुलदीपक [कुलपव्वयं] कुलपर्वत [कुलवडिंसयं] कुलके आभूषण [कुलतिलयं] कुलतिलक

स्वप्नपाठक-दर्शितस्वप्न-फलं तेषां सत्कारश्च

॥३५०॥

[कुलकित्तिकरं] कुल की कीर्ति बढानेवाला [कुलवित्तिकरं] कुल की वृत्ति मर्यादा बढानेवाला [कुलणंदिकरं] कुल में आनन्द उत्पन्न करनेवाला [कुलजसकरं] कुलका यश फैलानेवाला [कुलदिनयरं] कुल के लिए सूर्य के समान [कुलाधारं] कुल के आधार [कुलपायवं] कुल के लिए वृक्ष के समान [कुलतंतुसंताणविवद्धणकरं] कुल की वेल बढानेवाले [सुकुमालपाणिपायं] सुकुमार हाथपैरवाले [अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरं] हीनतारहित पूरी पांचों इन्द्रियों से संपन्न शरीरवाले [लक्खणवंजणगुणोववेयं] लक्षणों एवं व्यंजनों के गुणों से युक्त अथवा लक्षणों (शुभ रेखाओ) व्यंजनों (मसतिलआदि) तथा गुणों उदारता आदि से युक्त [माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगं] मान उन्मान और प्रमाणों से युक्त मनोहर अंगोपांगों से सुन्दर शरीरवाले [ससिसोमागारं] चन्द्रमा के समान सौम्य शरीरवाले [कंतं] कमनीय [पियदंसणं] प्रियदर्शन [सुरूवं] और सुन्दररूप से सम्पन्न [दारयं पयाहिइ] पुत्र को जन्म देगी।

स्वप्नपाठक-
दर्शितस्वप्न-
फलं तेषां
सत्काराश्च

[सेऽवि य णं दारए] वह बालक [उम्मुक्कबालभावे] बाल्यावस्था को पार करके [विण्णायपरिणयमित्ते] विज्ञानसंपन्न होकर [जोव्वणगमणुप्पत्ते] और यौवन को प्राप्त करके [सूरे वीरे विक्कंते] शूर, वीर, और विक्रमवान् [वित्थिन्नविउलबलवाहणे] विस्तीर्ण तथा विपुल बल और वाहनोंवाला [चाउरंतचक्कवट्टी राजवई राया भविस्सइ] और चारों दिशाओं के अन्त तक राज्य करनेवाला चक्रवर्ती राजाधिराज होगा [जिणे वा तिलुक्कनायगे धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी भविस्सइ] अथवा तीन लोक का नायक धर्म-वरचातुरन्तचक्रवर्ती जिन होगा। (तं उराला णं धन्नाणं मंगल्लाणं देवाणुप्पिया तिसलाए देवीए सुमिणा दिट्ठा] अतः हे देवानुप्रिय ! त्रिशला देवीने निश्चय ही उदार धन्य और मांगलिक स्वप्न देखा है।

[तए णं सिद्धत्थे राया] तब राजा सिद्धार्थ [तेसिं सुमिणपाढगाणं] उन स्वप्न-पाठकों से [अंतिए एयमट्ठं सोच्चा] इस बात को सुनकर [निसम्म] और समझकर

[हट्ठतुट्ठे] हृष्टतुष्ट [चित्तमाणंदिए] उनका चित्त आनंदित हो गया [हरिसवसविसप्पमाण-हियए] हर्ष से हृदय खिल उठा [ते सुमिणलक्खणपाढए एवं वयासी] उन्होंने स्वप्नपाठकों से इस प्रकार कहा—[एवमेयं देवाणुप्पिया !] हे देवानुप्रियो ! आपने जो कहा है सो ऐसा ही है [तहमेयं देवाणुप्पिया] आपका कथन सत्य है [अवितहमेयं] असत्य नहीं है [इच्छियमेयं देवाणुप्पिया !] हे देवानुप्रियों ! आपका कथन संशय रहित है [पडिच्छिय-मेयं देवाणुप्पिया] हे देवानुप्रियों ! आपका कथन मुझे इष्ट है। [इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया !] अत्यन्त इष्ट है और इष्ट तथा इष्टतर है। [सच्चे णं एस अट्ठे से जहेयं तुब्भे वयहत्ति] आप लोगोंने मुझसे जो कहा है सो यह अर्थ सत्य है। [कट्टु ते सुमिणं सम्मं पडिच्छइ] इस प्रकार कहकर उन्होंने स्वप्नों को सम्यक् प्रकार से स्वीकार किया। [पडिच्छित्ता] स्वीकार करके [ते सुमिणलक्खणपाढए] उन स्वप्नलक्षण-पाठकों को [विउलेणं] प्रचुर [असणपाणखाइमसाइमेणं] अशन, पान, खादिम और

स्वादिम से [वत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेइ सम्माणेइ] तथा वस्त्र, गंध, माला और अलंकारों से सत्कारित और सम्मानित किया [विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयइ] तथा जीविका के योग्य विपुल प्रीतिदान दिया। [तओ णं ते पडिविसज्जेइ] तत्पश्चात् उन्हें विदा किया ॥५२॥

मूलम्—तए णं से सिद्धत्थे राया जेणेव तिसला खत्तियाणी जवणियंतरिया तेणेव उवागच्छित्ता तिसलं खत्तियाणिं सुमिणपाढगसुयं सव्वं फलं परिकहेइ। तए णं सा तिसला खत्तियाणी एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी तओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठित्ता अतुरियमचवलमसंभंताए रायहंससरिसाए गईए जेणेव सए भवणे तेणेव उवागच्छित्ता सयं भवणं अणुप्पविट्ठा। तए णं तीसे तिसलाए खत्तियाणीए दोसु

सिद्धार्थकृतत्रिशलादोहदपूर्त्तिः

मासेसु वीइक्कंतेसु तइए मासे वट्टमाणे तस्स गब्भस्स दोहलकालसमयंसि अयमेयारूवे दोहले पाउब्भवित्था—'धन्नाओ णं ताओ अम्माओ सपुण्णाओ कयट्ठाओ कयपुण्णाओ कयलक्खणाओ सुकयविहवाओ सुलद्धेणं तासि माणुस्सए जम्मजीवियफले, जाओ णं मुहबद्ध सदोरगमुहवत्थियाणं रयहरणपडिग्गहधराणं समणाणं निग्गंथाणं अंतिए सयपइणा सद्धिं धम्मं सुयमाणीओ सामाइयपडिक्कमणं समायरंतीओ साहम्मिए सुस्सुसमाणीओ तहारूवाणं समणाणं निग्गंथाणं पडिलाभंतीओ य दोहलं विणिंति। तं सेयं जइ णं अहमवि सिद्धत्थेणं रन्ना सद्धिं एवमेव दोहलं विणिज्जामि। तए णं से सिद्धत्थे राया तीए तिसलाए खत्तियाणीए एयारूवं दोहलं वियाणित्ता तं दोहलं तहेव विणेइ। एवं तिसलाए खत्तियाणीए वीसइट्ठाणविसए सव्वेवि दोहले सिद्धत्थे राया भुज्जो

भुज्जो विणेइ। तए णं सा तिसला खत्तियाणी तेसु दोहलेसु विणीएसु विणीयदोहला संपुण्णदोहला विच्छिन्नदोहला सक्कारियदोहला सम्माणियदोहला तस्स गब्भस्स अणुकंपणट्ठाए जयं चिट्ठइ, जयं आसइ, जयं सुवइ, आहारंपि य णं णाइ सीयं णाइ उण्हं णाइ तित्तं णाइ कडुयं णाइ अंबिलं णाइ महुरं णाइ णिद्धं णाइ लुक्खं णाइ उल्लं णाइ सुक्कं आहरइ। किं बहुणा, जे तस्स गब्भस्स हिये मिये पत्थय पोसए देसे य काले य आहारो हवइ तं आहारं आहारेमाणी णाइ चिंताहिं णाइ सोगेहिं णाइ दण्णेहिं णाइ मोहेहिं णाइ भयेहिं णाइपरित्तासेहिं णाइभोयणच्छायणगंधमल्लालंकारेहिं तं गब्भं सुहं सुहेणं परिवहइ ॥५३॥

शब्दार्थ—[तए णं से सिद्धत्थे राया] उसके बाद वह सिद्धार्थराजाने [जेणेव तिसला खत्तियाणी] जहां त्रिशला क्षत्रियाणी [जवणियंतरिया० तेणेव उवागच्छित्ता] यवनिका

स्वप्नपाठक-दर्शितस्वप्न-फलं तेषां सत्कारश्च

(पर्दे) की ओट में बैठी थी, वहां जाकर [तिसलं खत्तियाणिं सुमिणपाढगसुयं सव्वं फलं परिकहेइ] त्रिशला क्षत्रियाणी से स्वप्नपाठकों के मुख से सुना हुआ सब फल कहा [तए णं सा तिसला खत्तियाणी एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा] तब वह त्रिशला क्षत्रियाणी इस अर्थ को सुनकर और समझकर हृष्टतुष्ट हुई। [सिद्धत्थेणं रण्णा अब्भणुण्णाया समाणी] सिद्धार्थ राजा की आज्ञा पाकर [तओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठित्ता] उस भद्रासन से उठकर [अतुरियमचवलमसंभंताए रायहंससरिसाए गईए] त्वरारहित चपलता रहित होकर राजहंसी सरीखी संभ्रमरहित गति से [जेणेव सए भवणे तेणेव उवागच्छित्ता सयं भवणं अणुपविट्ठा] जहां अपना भवन था वहां गई और अपने भवन में प्रविष्ट हुई।

[तए णं तीसे तिसलाए खत्तियाणीए दोसु मासेसु वीइक्कंतेसु तइए मासे वट्टमाणे] उसके बाद दो मास व्यतीत होनेपर, जब तीसरा मास चल रहा था तब त्रिशला क्षत्रियाणी को [तस्स गब्भस्स दोहलकालसमयंसि अयमेयारूवे दोहले पाउब्भवित्था]

सिद्धार्थकृतत्रिशलादोहदपूर्त्तिः

दोहद के काल के अवसर पर इस प्रकार का दोहद (दोहला) उत्पन्न हुआ। वह दोहद इस प्रकार था-[धन्नाओ णं ताओ अम्माओ] वें माताएँ धन्य-भाग्यवती है [सुपुण्णाओ] पुण्यवती है [कयट्ठाओ] कृतार्थ है [कयपुण्णाओ] पूर्व भव में उपार्जित पुण्यवाली है [कयलक्खणाओ] वे कृतलक्षण हैं अर्थात् उनके शरीर के लक्षण सफल है [सुकय-विहवाओ] उनका वैभव सफल है। [सुलद्धे णं तासिं माणुस्सए जम्म जीवियफले] उन्हें मनुष्य सम्बन्धी जन्म और जीवन का फल प्राप्त हुआ है [जाओ णं मुहबद्ध-सदोरमुहवत्थियाणं] जो मुखपर डोरा सहित मुखवस्त्रिका बांधकर [रयहरणपडिग्गह-धराणं] तथा हाथ में रजोहरण-पूंजनी लेकर तथारूप श्रमणों अर्थात् मुखपर डोरा सहित मुखवस्त्रिका बांधनेवाले तथा रजोहरण तथा पात्र को धारण करनेवाले [समणाणं निग्गंथाणं अंतिए] श्रमणों के निकट [सयपइणा] अपने पति के [सद्धिं धम्मं सुयमाणीओ] साथ अर्हत् प्ररूपित धर्म को सुनती है [सामाइयपडिक्कमणं समायरंतीओ]

दोनों समय सामायिक–प्रतिक्रमण करती हैं, [साहम्मिए सुस्सुसमाणीओ] और अन्न तथा वस्त्र आदि से साधर्मी जनों की सेवा करती हैं। [तहारूवाणं समणाणं निग्गंथाणं पडिलाभंतीओ य] एवं जो तथारूप श्रमण निग्रन्थों को निर्दोष आहार आदि से प्रतिलाभित करती हुइ [दोहलं विणियंति] अपने दोहद को पूर्ण करती है। [तं सेयं जइ णं अहमवि सिद्धत्थेणं रन्ना सद्धिं एवमेव दोहलं विणिज्जामि] यदि मैं भी सिद्धार्थ राजा के साथ इसी प्रकार से अपने दोहद को पूर्ण करूँ तो अच्छा हो।

[तए णं से सिद्धत्थे राया तीए तिसलाए खत्तियाणीए] उसके बाद सिद्धार्थराजाने त्रिशला क्षत्रियाणी के [एयारूवं दोहलं वियाणित्ता] इस प्रकार के दोहद को जानकर [तं दोहलं तहेव विणेइ] उसी प्रकार से उसे पूर्ण किया। [एवं तिसलाए खत्तियाणीए] इसी प्रकार त्रिशला क्षत्रियाणी के [वीसइट्ठाणविसए सव्वे वि दोहले सिद्धत्थे राया

सिद्धार्थ-
कृतत्रिश-
लादोहद-
पूर्तिः

भुज्जो भुज्जो विणेइ] बीस स्थानों के विषय में सभी दोहदों को राजा सिद्धार्थने बार-बार पूर्ण किया।

[तए णं तिसला खत्तियाणी] तब त्रिशला क्षत्रियाणी [तेसु दोहलेसु विणीएसु] उन दोहदों के पूर्ण होनेपर [विणीयदोहला] पूर्ण दोहदवाली हो गई [संपुण्णदोहला] सम्पूर्ण दोहदवाली हो गई [विच्छिन्न दोहला] दोहद रहित हो गई [सक्कारियदोहला] उसके दोहद सत्कारित हो गये [सम्मणिय दोहला] सम्मानित दोहद हो गये। [तस्स गब्भस्स अणुकंपणट्ठाए जयं चिट्ठइ] वह उस गर्भ की अनुकम्पा के लिए यतना पूर्वक खडी होती थी [जयं आसइ] यतना पूर्वक बैठती थी [जयं सुवइ] यतनापूर्वक सोती थी [आहारंपि य णं] वह आहार भी [णाइसीयं] न अधिक ठंठा [णाइ उण्हं] न अतिउष्ण [णाइ तित्तं] न अधिक तिक्त [णाइ कडुयं] न अधिक कडुआ [णाइ अंबिलं] न अधिक खट्टा [णाइ महुरं] न अधिक मधुर [णाइ णिद्धं] न अधिक स्निग्ध [णाइ लुक्खं] न अधिक

रूक्ष [णाइ उल्लं] न अधिक गीला [णाइ सुक्कं] न अधिक सूखा [आहरइ] आहार करती थी [किं बहुणा] अधिक क्या कहे [जे तस्स गब्भस्स] जो आहार उस गर्भ के लिए [हिये मिये पत्थये पोसए देसे य काले य आहारो हवइ] हित-मित पथ्य-रूप होता है देश काल के अनुकूल होता [तं आहारं आहारेमाणी] वही आहार करती थी [णाइ चिंत्ताहिं] न अति चिन्ता करती, [णाइ सोगेहिं] न अतिशोक करती [णाइ देण्णेहिं] न अति दीनता दिखलाती [नाइ मोहेहिं] न अति मोह करती [णाइ परित्तापेहिं] न अति उद्वेग करती [णाइभोयणच्छायणगंधमल्लालंकारेहिं तं गब्भं सुहं सुहेणं परिवहइ] न अति भोजन आच्छादन, गंध माला और अलंकारों का सेवन करती। वह सुखपूर्वक उस गर्भ को वहन करने लगी ॥५३॥

मूलम्—जप्पभिइं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए गब्भाओ तिसलाए खत्तियाणीए गब्भंमि साहरिए तप्पभिइं च णं बहवे

वेसमणकुंडधारिणो तिरियजंभगा देवा सक्कवयणेणं जाइं इमाइं पुरापोराणाइं महानिहाणाइं भवंति, तं जहा पहीणसामियाइं पहीणसेउयाइं पहीणगोत्तागाराइं उच्छिन्नसामियाइं उच्छिन्नसेउयाइं उच्छिन्नगोत्तागाराइं गामागरनगरखेड-कब्बडमंडबदोणमुहपट्टणनिगमासमसंवाहसंनिवेसेसु वा सिंघाडएसु वा तिएसु वा चउक्केसु वा चच्चरेसु चउम्मुहेसु वा महापहेसु वा गामट्ठाणेसु वा नगरट्ठाणेसु वा गामनिद्धमणेसु वा णगरनिद्धमणेसु वा आवणेसु वा देवकुलेसु वा सहासु वा पवासु वा आरामेसु वा उज्जाणेसु वा वणेसु वा वणसंडेसु वा सुसाण-सुण्णागारगिरिकंदरसंति सेलोवट्ठाणभवणगिहेसु सन्निक्खित्ताइं चिट्ठंति ताइं सिद्धत्थरायभवणंसि साहरंति ॥५४॥

शब्दार्थ—[जप्पभिइं च णं समणे भगवं महावीरे] जब से श्रमण भगवान महा-

सिद्धार्थ-
राजभवने-
त्रिजृम्भक-
देवकृत-
निधान-
समाहरणम्

वीर [देवाणंदाए माहणीए गब्भाओ तिसलाए खत्तियाणीए गब्भंमि साहरिए] देवानन्दा ब्राह्मणी के गर्भ से त्रिशला क्षत्रियाणी के गर्भ में आये [तप्पभिइं च णं बहवे वेसमणकुंडधारिणो तिरियजंभगा देवा] तब से बहुत से कुबेर के आज्ञापालक मध्य-लोक में रहनेवाले त्रिजृंभग नामक देव, [सक्कवयणेणं जाइ इमाइं पुरा पोराणाइं महा-निहाणाइं भवंति] इन्द्र की आज्ञा से पुराने निधानों स्वजनों को सिद्धार्थ राजा के भवन में ले आने लगे [तं जहा] वे निधान ऐसे थे कि [पहीण सामियाइं] जिनके स्वामी मरचुके थे [पहीण सेउयाइं] जिनके निशान भी नष्ट हो चुके थे [पहीण गोत्तारागाइं] जिनके स्वामियों के गोत्र और गृह नष्ट हो चुके थे [उच्छिन्नसामियाइं उच्छिन्नसेउ-याइं उच्छिन्न गोत्तागाराइं] जिनके स्वामी उच्छिन्न थे, निशान भी उच्छिन्न थे, जिनके स्वामियों के गोत्र और गृह भी उच्छिन्न थे ये निधान [गाम] ग्रामों में [आगर] आकरों में [नगर] नगरों में [खेड] खेटों में [कब्बड] कर्बट [मडंब] मडंब [दोणमुह]

सिद्धार्थ-
राजभवने-
त्रिजम्भक-
देवकृत-
निधान-
समाहरणम्

द्रोणमुख [पट्टण] पत्तन [निगम] निगम [आसम] आश्रम [संवाह] संवाह [सन्निवेसेसु वा] और संनिवेशों में [सिंघाडएसु वा] शृंगाटक (तिकोने मार्ग) [तिएसु वा] त्रिक (तीन मार्गों के संगम) में [चउक्केसु वा] चौक में, [चच्चरेसु वा] चत्त्वरों में (जहां बहुत मार्ग मिलते हो ऐसे स्थानों में) [चउम्मुहेसु वा] राजमार्ग में [महापहेसु वा] महापथ में [गामट्ठाणेसु वा] उजडे गांव में [नगरट्ठाणेसु वा] उजडे नगरों में [गामनिद्धमणेसु वा] गांव की नालियों में [नगरनिद्धमणेसु वा] नगर की नालियों में [आवणेसु वा] दुकानों में [देवकुलेसु वा] देवालयों में [सहासु वा] सभास्थलों में [पवासु वा] प्याउओं में [आरामेसु वा] आरामों में [उज्जाणेसु वा] उद्यानों में [वणेसु वा] वनों में [वनसंडेसु वा] वनखण्डों में [सुसाण] स्मशानों में [सुन्नागार] सूने मकानों में [गिरिकंदर] पर्वत की गुफाओं में [संति] शान्ति गृहों (शान्तिकर्म के स्थलों] में [सेलो] शैलगृहों में [उवट्ठाण] उपस्थानगृहों में [भवणगिहेसु वा] तथा भवनगृहों (निवासगृहों) में [सन्निक्खित्ताइं

चिट्ठंति] गडे हुए थे [ताइं] उन्हें [सिद्धत्थरायभवणंसि साहरंति] वे देव सिद्धार्थ राजा के भवन में लाने लगे ॥५४॥

मूलम्—जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे नायकुलंसि साहरिए तप्पभिइं च णं तं नायकुलं हिरण्णेणं वड्ढित्था। एवं सुवण्णेण धणेणं धण्णेणं विहवेणं ईसरिएणं रिद्धीएणं सिद्धीएणं समिद्धीएणं सक्कारेणं सम्माणेणं पुरक्कारेणं रज्जेणं रट्ठेणं बलेणं वाहणेणं कोसेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं जणवएणं जसवाएणं कित्तिवाएणं थुइवाएणं वड्ढित्था। विउलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइएणं संतसारसावइज्जेणं पीइसक्कारसमुदएणं अईव अईव अभिवड्ढित्था। तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापिऊणं अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए कप्पिए पत्थिए मणोगए संकप्पे

भगवतो-'वर्धमान' इति नामकरणार्थे तन्मातापित्रोःसंकल्पः

समुप्पज्जित्था–जप्पभिइं च णं अम्हे एस दारए कुच्छिसि गब्भत्ताए वक्कंते तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो, जाव पीइसक्कारसमुदएणं अईव अईव वड्ढामो तं णं जयाणं अम्हाणं एस दारए उप्पज्जिस्सइ तयाणं अम्हे एयस्स दारयस्स एयाणुरूवं गुण्णं गुणनिप्फण्णं नामधिज्जं करिस्सामो 'वड्ढमाणु'–त्ति ॥५५॥

भगवतो-'वर्धमान' इति नामकरणार्थं तन्मातापित्रोःसंकल्पः

शब्दार्थ—[जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे] जिस रात्रि में श्रमण भगवान महावीर का [नायकुलंसि साहरिए] ज्ञातकुल में संहरण किया गया [तप्पभिइं च णं तं नायकुलं] उस रात्रि में ज्ञातकुल की [हिरण्णेणं वड्ढित्ता] हिरण्य–चांदी से वृद्धि हुई [एवं सुवण्णेण] इसी प्रकार स्वर्ण से [धणेण] धन से [धण्णेण] धान्य से [विहवेण] विभव से [ईसरिएणं] ऐश्वर्य से [रिद्धीएणं] ऋद्धि से [सिद्धीएणं] सिद्धि से [समिद्धी-

एणं] समृद्धि से [सक्कारेणं] सत्कार से [सम्माणेणं] सन्मान से [पुरक्कारेणं] पुरस्कार से [रज्जेणं] राज्य से [रट्ठेणं] राष्ट्र से [बलेणं] बल—सेना से [वाहणेणं] वाहन से [कोसेणं] कोष से [कोट्ठागारेणं] अन्नभण्डार से [पुरेणं] पुर से [अंतेउरेणं] अन्तःपुर से [जणवएणं] जनपद से [जसवाएणं] यशोवाद से [कित्तिवाएणं] कीर्तिवाद से [थुइवाएणं] स्तुतिवाद से [वड्ढित्था] वृद्धि हुई। [विउलधनकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइएणं] ज्ञातकुल प्रचुर धन स्वर्ण, रत्न, मणि, मौक्तिक, शंख, शिला, प्रवाल, लाल आदि रत्नों से [संतसारसावइज्जेणं] वास्तविक प्रधान द्रव्यों से [पीइसक्कारसमुदएणं] प्रीति एवं सत्कार की प्राप्ति से [अईव अईव अभिवड्ढित्था] खूब खूब बढा।

भगवतो-'वर्धमान' इति नामकरणार्थं तन्मातापित्रोः संकल्पः

[तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स] तब श्रमण भगवान् महावीर के [अम्मापिऊणं] मातापिता को [अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए] यह आध्यात्मिक—आत्मा में भीतरही भीतर होनेवाला विचार चिन्तित वारंवार होनेवाला विचार [कप्पिए] कल्पित—कार्यपरि-

णत करने योग्य विचार [पत्थिए] स्वीकृत विचार [मणोगए] मनोगत विचार [संकप्पे] संकल्प–निश्चित विचार [समुपज्जित्था] उत्पन्न हुआ कि [जप्पभिइं च णं अम्हे एस दारए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते] जब से यह बालक हमारे यहां उदर में गर्भ रूप से उत्पन्न हुआ है, [तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो] तभी से हम हिरण्य चांदी से [जाव पीइसक्कारसमुदएणं] यावत् प्रीति सत्कार आदि के समूह से [अईव अईव वड्ढामो] खूब खूब वृद्धि पा रहे हैं, [तं णं जयाणं अम्हाणं एस दारए उप्पज्जिस्सइ] अतः जब हमारा यह बालक जन्म लेगा, [तयाणं अम्हे एयस्स दारयस्स एयाणुरूवं] तब हम इस बालक का, इसी के अनुरूप [गुण्णं गुणनिप्फण्णं नामधिज्जं करिस्सामो] 'वड्ढमाणु'-त्ति] गुणयुक्त गुणनिष्पन्न नाम रक्खेंगे–'वर्द्धमान' ॥५५॥

भगवतो-'वर्धमान' इति नाम-करणार्थं तन्मातापित्रोः संकल्पः

मूलम्-तेणं कालेणं तेणं समएणं तिसलाखत्तियाणी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं वीइक्कंताणं, जेसे गिम्हाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे चित्तसुद्धे, तस्स णं चित्तसुद्धस्स तेरसी दिवसेणं, उच्चट्ठाणं गएसु सत्तसु गहेसु पढमे चंदज्जोगे सोम्मासु दिसासु वितिमिरासु विसुद्धासु जइएसु सव्व सउणेसु पयाहिणाणुकूलंसि भूमिसप्पंसि मारुयंसि पवायंसि, णिफन्नमइणंयिसि कालंसि, पमुइयप्पकीलिएसु जणवएसु पुव्वरत्तावरत्त कालं समयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं चंदेणं जोगमुवागएणं तेल्लोगउज्जोयगरं मोक्खमग्गधम्मधुरं हियकरं सुहकरं संतिकरं कंतिधरं चउव्विह संघणेयारं उयारं कढिणकम्मदलभेयारं गुणपारावारं सुकुमारं कुमारं पसूया ॥५६॥

शब्दार्थ—[तेणं कालेणं तेणं समएणं] उस काल और उस समय में [तिसला खत्तियाणी] त्रिशला क्षत्रियाणीने [नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं] गर्भ के नौ महिने पूरे बीत जाने पर [अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं वीइक्कंताणं] तथा साढे सात रात्रि व्यतीत हो जाने पर [जे से गिम्हाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खेचित्तसुद्धे] जब ग्रीष्म का पहला महीना और दूसरा पक्ष चैत्र सुदि था [तस्स णं चित्तसुद्धस्स तेरसी दिवसेणं] उस चैत्र सुदि पक्ष की त्रयोदशी के दिन [उच्चट्ठाण गएसु सत्तसु गहेसु] सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, और शनि ये सात ग्रह उच्च स्थान पर थे [पढमे चंदजोगे] चन्द्रमा का योग प्रधान था। जब [सोम्मासु दिसासु] दिशाए सौम्य एवं [वितिमिरासु विसुद्धासु] उज्ज्वल और निर्मल थी [जइएसु सव्व सउणेसु] सभी शकुन जयवंत थे [पयाहिणा-णुकूलंसि भूमि सप्पंसि मारुयंसि पवायंसि] प्रदक्षिण क्रम से अनुकूल वायु पृथ्वी पर मन्द मन्द चल रही थी [णिप्फन्नमेइणीयंसि कालंसि] पृथ्वी धान्य से संपन्न थी [पमु-

इयप्पकीलिएसु] देशवासी लोग प्रसन्न और क्रीडा परायण थे [पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि] ऐसे अवसर पर मध्यरात्रि के समय में [हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं चंदेणं जोगमुवागएणं] हस्तोत्तरा नक्षत्र का चन्द्रप्रभा के साथ योग होने पर [तेल्लोग उज्जोयगरं] तीनों लोकों में उद्योत करनेवाले [मोक्खमग्गधम्मधुरं] मोक्षमार्गरूप धर्म की धुरा को धारण करनेवाले [हियकरं] हितकारी [सुहकरं] सुखकारी [संतिकरं] शान्तिकारी [कतिधरं] कान्ति के घर [चउव्विहसंघणेयारं] चतुर्विधि संघ के नेता [उयारं] उदार [कढिणकम्मदलभेयारं] कठिन कर्म–दल को भेदनेवाले [गुणपारावारं] गुणों के सागर [सुकुमारं] सुकुमार [कुमारं] कुमार को [पसुया] जन्म दिया ॥५६॥

मूलम्–तिहिं उच्चहिं नारिंदो, पंचहिं तह होइ अद्धचक्कीय। छहिं होइ चक्कवट्टी, सत्तहिं तित्थंकरो होइ ॥५७॥

शब्दार्थ—जिस बालक के जन्म तीन ग्रह ऊँचे हो तो वह बालक राजा होता है पांच ग्रह उच्च हों तो अर्ध चक्रवर्ती वासुदेव होता। छह ग्रह ऊँचे हों तो चक्रवर्ती होता है और सात ग्रह उच्च स्थान पर हों तो तीर्थंकर होता है ॥५७॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा कलितललितकला-पालापक-प्रविशुद्ध गद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्री शाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त जैनशास्त्राचार्य-पद्भूषित कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्म-चारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-विरचित

श्रीकल्पसूत्रस्य प्रथमो भागः सम्पूर्णः

प्रस्तावना

आगमोद्धारक पूज्यश्री घासीलाल म. सा. ने अपने बत्तीस आगमों की संस्कृत टीका एवं हिन्दी और गुजराती भाषामें अनुवाद करके स्था. जेन समाजका बडा भारी उपकार किया है। उसी प्रकार उन महानुभावने अपनी स्थानकवासी मान्यता एवं प्ररूपणानुसार कल्पसूत्र की स्वतंत्र तोरसे रचना कर समाज पर भारी उपकार किया है

कल्पसूत्र में अनगारों के धर्म का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। शास्त्रों में अनेक स्थल में गृहस्थों के एवं श्रावकों के सामान्य एवं विशेषधर्म प्रसंगानुसार अर्थात् यथा-वसर कहे हैं परंच गृहस्थ के धर्मका कोई एक ही स्थल पर निर्देश मिलता नहीं है अतः कोई गृहस्थको किसी विषय में जिज्ञासा होने पर उसके निवारणार्थ अलग अलग शास्त्रग्रंथ देखना पडता है

अतः वह न्यूनता दूर हो, एवं गृहस्थों के तथा श्रावकों के सामान्य या विशेष

धर्म निश्रम वगैरह एक ही स्थलपर उपलब्ध हो इस प्रकार के शुभ आशय से पूज्य घासीलाल म. सा. के सुशिष्य घोरतपस्वी श्री मदनलाल म. सा. ने अनेक शास्त्रोंमें से गृहस्थ एवं श्रावकों के सामान्य और विशेष धर्म नियमका संग्रह किया है जो इधर दिया जाता है आशा है इससे स्था. जैन समाज को अपने धर्म नियम का सरलता के साथ जानकारीकी सरलता होगी एवं इसका लाभ ले अपने धर्म के विशेष मार्गदर्शन प्राप्त कर आभारी होंगे.

शास्त्रोद्धार समिति

श्रीशासनदेवेभ्यो नमः

मङ्गलाचरणम्

भक्तामरप्रवरमौलिमणिव्रजेषु, ज्योतिः प्रभूतसलिलेषु सरोवरोषु ।
चेतोलिमंजुविकसत्कमलायमानं, श्रीवर्द्धमानचरणं शरणं व्रजामि ॥१॥

सामान्याऽगार–(गृहस्थ) धर्मस्वरूपम् ।

मुहूर्त्ते सर्वार्थसिद्धे नमस्कारसमन्वितः । नित्यं प्रातः समुत्थाय धर्मजागरणां चरेत् ॥१॥

अइणिस्सारे विसए विसोवमे मम कहं मणो जाइ ।
माणुस्स जम्मं णिच्चा कडं किं च ओसिट्ठं ॥१॥
अहुणा किमणुट्ठेय एसो कस्सोचिओ तहा कालो ।
णिच्चं मच्चू सहओ अणुधावइ पुट्ठलग्गो मे ॥२॥
णहि सह गच्छइ बंधू धणधन्नकलत्तपुत्तमित्ताई ।
णियकय कम्मदुमफलरसस्स संसायओ बला जीवो ॥३॥

तम्हा एगो अप्पा सच्चो णिच्चो य सव्वसुहरासी ।
चिच्चा बाहिरभावे दट्ठव्वो नाणदंसणाहारो ॥४॥ इति॥

प्रातःकृत्यं समास्थाय मातापित्रभिवन्दनम् । गुरोश्च दर्शनं कुर्याद्भक्तिश्रद्धादिसंयुतः ॥२॥
धर्मोपदेशं शृणुयात्तथा श्रद्धानवान् भवेत्। देवे गुरौ च धर्मे च सर्वदाऽऽलस्यवर्जितः ॥३॥
दानशीलो भवेत्तद्वत्सतां सङ्गं न हापयेत्। सेवेत व्रतिनः किञ्च वृद्धान् दीनांस्तु रक्षयेत् ॥४॥
भृत्यान् सद्भावयेन्नित्यं, सुपात्रादिप्रदानवान्। आश्रितानात्मवत्पश्येत्समाहितमतिस्तथा।५।
द्रव्यादिभावानालोक्य प्रवर्त्तेत यथोचितम्। धर्मशास्त्रं तथा नीतिग्रन्थांश्च परिलोकयेत् ॥६॥
महतां पुरतस्तद्वद्विनयेन समाचरेत्। विपत्तौ धैर्यशाली स्यात्सम्पद्यनभिमानवान् ॥७॥
सुकार्ये परसाहाय्यं, विदध्याद्विजितेन्द्रियः। यदन्नाद्युपलभ्येत, तदद्यात्तुष्टमानसः ॥८॥
पुरादौ साधवो विज्ञ,–श्रावका यत्र संस्थिताः,
तत्रैव निवसेन्मार्गं, समालोक्य विलङ्घयेत् ॥९॥

विहायाऽऽडम्बरं वेषं, समनस्कश्चरेत्कृतिम्, सर्वैः सह सदा मैत्रीं, विदधीत विशेषतः ॥१०॥
दुःखी स्यात्परदुःखेन, सुखेन च सुखी भवेत्।
किं भक्ष्यं किमभक्ष्यं च, तद्विशिष्य विचारयेत् ॥११॥
देशस्य धर्म—जात्योश्च, पारम्पर्यक्रमागतौ। वेषाऽऽचारौ सदा रक्षेत्सत्कुर्याच्च गृहागतम् ॥१२॥
अनुव्रजेत्सत्यधर्मं दध्याज्जीवदयां तथा। पवित्रो मृदुभाषेत कार्पण्यं च परित्यजेत् ॥१३॥
निशायां नैव भोक्तव्यं प्रमादपि कदाचन। न केनापि कथां कुर्याद् गर्हितां च तथा वृथा॥१४॥
नाम्भः पिबेत्पटापूतं मृषाभाषां च वर्जयेत्। आसज्जेत न च क्वापि शयानं न प्रबोधयेत् ॥१५॥
न दूयेत परोन्नत्या निन्द्य-कार्याणि नाऽऽचरेत्। अकाले चांबुभुक्षायां न भुञ्जीत प्रमादतः॥१६।
वीयान्नायाधिकं धर्म-विरुद्धं नाऽऽचरेत्तथा। मलमूत्रे नावरुन्ध्या-त्तत्र ते न समुत्सृजेत्॥१७॥
मित्रेण सह कापट्यं न कुर्यान्नाविचारितम्। क्रोधाभिमानरुक्षत्वाकर्त्तव्यानि विवर्जयेत् ॥१८॥
सदा निरस्येदालस्यं स्वकर्त्तव्येषु यत्नवान्। बन्धुभिश्च महद्भिश्च विरुन्ध्याज्जातु न क्वचित्।१९।

त्यजेदयोग्यमुद्वाह-मभियोगं मनागपि। प्रजाहितेच्छुनात द्वद्विद्रोहं च महीक्षिता ॥२०॥
द्यूतं मांसं सुरां चौर्यं वेश्याऽऽखेट-परस्त्रियः। रसलोलुपतामह्नि स्वापं निन्दां परस्य च ॥२१॥
तृष्णामख्यातिना तद्वत्सम्बन्धं कुलरोगिणा। प्रियमेव वदेत्सत्य-मपृष्टो नोत्तरं स्पृशेत् ॥२२॥
मध्ये कस्यापि वार्त्ताया विच्छेदं न समायरेत्। न ब्रूयात्स्वगृहच्छिद्रं पुरतो यस्य-कस्यचित् ॥२३॥
नैव वस्तु व्यवहारे-दज्ञातमपरीक्षितम्। न कुर्यात्कस्यचित्कीर्त्ति-खण्डं विश्वासघातनम् ॥२४॥
योगक्षेमच्छेद-भेदौ ग्रामादीनां न साधयेत्।
न भुञ्जीतावण्टयित्वा वस्तु किञ्चिदपि क्वचित् ॥२५॥
अनीत्या नार्जयेद्द्रव्यं निजमूलधनापहम्।
तन्नाऽऽचरेज्जातु यत्स्यादिहाऽमुत्र च गर्हितम् ॥२६॥
परस्त्रिया सहैकाकी न गच्छेन्न च संवदेत्। न वा तया सहैकान्तवासमासादयेदपि ॥२७॥
न गृह्णीयात्तथोत्कोचं गृहादीनि प्रमार्जयेत्। न व्याप्रियेत प्रमादा-दल्पमूलधनेन च ॥२८॥

नान्यायमवलम्बेत जातुचित्सङ्कटेऽपि सन्। महापरिग्रहं किञ्च महारम्भं विवर्जयेत् ॥२९॥
अन्यायिनो न पक्षी स्यान्नाहेत्वन्यस्य वेश्मगः। न व्रजेद्दुर्गमं मार्ग-मेकाकी मुग्धमानसः ॥३०॥
न नदीं नापि कासार-प्रभृतिं बाहुतस्तरेत्। बालकप्रवयोग्लानगर्भिणीचेटकाश्रितान् ॥३१॥
असन्तोष्य न भुञ्जीत न च कञ्चित्कलङ्कयेत्। न द्रुह्येद् गुरुदेवाय धर्माय च कथञ्चन ॥३२॥
विटीतमालभङ्गादि व्यसनानि विवर्जयेत्। इत्येवमुक्तः सामान्योऽगारधर्मो जिनेश्वरैः ॥३३॥

भावार्थः—सर्वार्थसिद्ध मुहूर्त्त में ऊठकर नमस्कार मन्त्रोच्चारण पूर्वक धर्मजागरणा करे वह इस प्रकार है—

अहा ! ये इन्द्रियों के विषय सर्वथा निस्सार हैं, विषके समान हैं। मेरा मन इनकी ओर क्यों आकर्षित होता है ? यह मनुष्य जन्म पाकर मैंने इसे अकारण खो दिया। जितना यह शेष रहा है इसमें क्या करना चाहिए ? ॥१॥ यह समय किस कर्तव्य में लगाना चाहिए ? मृत्यु अनिवार्य है और वह सदैव परछाई की नाई मेरे पीछे पीछे

लगी रहती है ॥२॥ बन्धु-बान्धव, धन-धान्य, कलत्र-पुत्र और मित्र, कोई भी साथ जानेवाला नहीं है। जिसने जैसा कर्मरूपी वृक्ष लगाया है, उसे वैसे ही वृक्षके फलका रस (अनुभाग) भोगना पडता है ॥३॥ इसलिए समस्त बाह्य वस्तुओं का परित्याग कर सत्य, नित्य, सर्व सुखों के समूह, अनन्त ज्ञानदर्शनके धारक केवल आत्माको साक्षात् करो ॥४॥

इस प्रकारकी धर्मजागरणा करे, माता-पिताके चरणों में मस्तक नमाए, गुरुओं-मुनियों का दर्शन करे, धर्मका उपदेश सुने, देव गुरु और धर्म पर परम प्रतीति रखे, शक्तिके अनुसार सदा दानशील रहे, सत्संगति करे, व्रतधारियों और वृद्धजनों की सेवा-शुश्रूषा करे, दीनहीन प्राणियों की रक्षा करे, नौकर-चाकरों से प्रेममय व्यवहार करें, अभयदान सुपात्रदान और करुणादान दे, आश्रित जनों का निजकी नाई पालन-पोषण करें, द्रव्यक्षेत्र काल भावको देखकर प्रवृत्ति करे, धर्म-शास्त्रों का स्वाध्याय करे, नीति-शास्त्रों का अवलोकन करे, गुरुजनों के सन्मुख विनयपूर्वक वर्त्ताव करे, विपत्ति आने पर

धैर्य धरे, संपत्ति होने पर अभिमान न करे, शुभ कार्यों में दूसरों को सहायता दे, इन्द्रियों को वशमें रखे, जैसा भोजन–पान प्राप्त हो जाय उसीको प्रसन्नचित्त होकर खावे, जिस नगर आदिमें साधु या विशेषज्ञ–विद्वान् श्रावक निवास करते हों उसी नगर आदिमें निवास करे, रास्ता देखकर चले, आडम्बर का वेष (शोकीनोंका ठाठ–बाट) न रखे, कर्तव्यका पालन मनसे करे, सबके साथ मित्रता रखे, दूसरे के दुःखमें दुःखी और सुखमें सुखी हो, भक्ष्य–अभक्ष्यका विचार रखे, अपने देशका धर्मका और जातिका प्राचीन वेष धारण करे, जो घर पर आवे उसका सत्कार करे, सत्य धर्मका पालन करे, प्राणी मात्र पर अनुकम्पा रखे, पवित्रता–पूर्वक प्रवृत्ति करे, सदा कोमलवाणी बोले, मक्खीचूस (कंजूस) न हो, रात्रिभोजन न करे, वृथा बकवाद न करे, विना छना पानी न पिए, मिथ्या भाषण न करे, किसी वस्तुमें अत्यन्त आसक्त न हो, विशेष कारण विना सोतेको न जगावे, परका अभ्युदय देख दुःखी न हो, निन्दनीय कार्योंसे दूर रहे,

असमयमें और विना भूखके भोजन न करे, आयसे अधिक व्यय न करे, धर्म–विरुद्ध आचरण न करे, मल–मूत्रको न रोके, मलमूत्र पर मल–मूत्र त्याग नहीं करे, मित्रके साथ कपट न करे, विशेष विचार किये विना कोई भी कार्य न करे, क्रोध, मान, रुखाई और अकर्त्तव्यसे दूर रहे, करने योग्य कार्य में प्रमाद न करे, बन्धुवर्ग तथा महान् जनों से विरोध न बांधे, अयोग्य विवाह, अपराध, राजद्रोह, जुआ, मांसभक्षण, मदिरापान, चोरी, वेश्यागमन, पापर्द्धि (शिकार खेलना), परस्त्रीसेवनरूप सात व्यसन, चटोरापन, दिनमें नींद लेना, पराई निन्दा, परधनकी तृष्णा, अपरिचित्त और कौलिक (कुलपरम्परासे आये हुए छूतके) रोगीके साथ विवाहादि सम्बन्धका परित्याग करे। प्रिय सत्य ही बोले, विना पूछे उत्तर न दे, कोई बात–चीत करता हो तो बीचमें न बोले, घरकी बुराई किसीसे न कहे, विना जाने और परीक्षा किये किसी वस्तुका व्यवहार न करे, किसीकी प्रतिपत्तिमें हस्तक्षेप न करे, विश्वासघात न करे, ग्राम नगर आदिके योग–क्षेम (अल-

ब्ध वस्तुके लाभ करने और लब्धकी रक्षा करने) में विघ्न न डाले। विना बांटे (पासमें बैठे हुओंको विना दिये) कभी किसी वस्तुको न खावे, अन्यायसे धनोपार्जन न करे, इसलोक–परलोक से प्रतीकूल कार्य न करे, परस्त्री के साथ अकेला न जावे, न बोले और न एकान्त में निवास करे, घूंस (रिश्वत) न ले, सुबह–साम घरकी सफाई करे, थोडी पूंजी से बडा व्यापार न करे, प्राणों पर संकट आने पर भी अनीति का आश्रय न ले, महा आरम्भ महापरिग्रहवाला काम न करे, अन्यायी का पक्ष न ले, विना प्रयोजन किसीके घरमें प्रवेश न करे, विकट मार्ग में अकेला न जावे, भुजाओं से नदी तालाब आदि में न तैरे, बालक बृद्ध रोगी गर्भवती भृत्य और आश्रित को सन्तुष्ट किये विना भोजन न करे, किसीको कलङ्कित न करे, कलंक लगानेवाला कोई कार्य न करे, गुरु और धर्म के साथ द्रोह करने की इच्छा तक न करे, बीडी, तमाकु और भांग आदि व्यसनों का सर्वथा त्याग करे इत्यादि।

गृहस्थस्य-विशेषधर्मः

॥११॥

भूयो भूयो भाविनो भूमिपालान्, नत्वा नत्वा याचते रामभद्रः।
सामान्योऽयं धर्मसेतु र्निबद्धः, काले काले रक्षणीयो भवद्भिः॥

सामान्य रूप अगार धर्म का भगवान् ने इस प्रकार वर्णन किया है। अब विशेष रूप से आगार-धर्म का वर्णन करते हैं-

मूलम्-से जे गामागर जाव सण्णिवेसेसु मणुया भवंति, तं जहा-अप्पारंभा अप्पपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया धम्मिट्ठा धम्मक्खाई धम्मप्पलोई धम्मपलज्जणा धम्मसमुदायारा धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा सुसीला सुव्वया सुप्पडियाणंदा साहूहि एगच्चाओ पाणाइवायाओ पडिविरया जावज्जीवाए, एगच्चाओ अपडिविरया, एवं जावपडिग्गहाओ, एगच्चाओ कोहाओ माणाओ माणाओ कोहाओ पेज्जाओ दोसाओ कलहाओ अब्भक्खाणाओ पेसुण्णाओ

परपरिवायाओ अरइरईओ मायामोसाओ मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया जाव-ज्जीवाए, एगच्चाओ अपडिविरया, एगच्चाओ आरंभसमारंभाओ पडिविरया जावज्जीवाए, एगच्चाओ अपडिविरया, एगच्चाओ करणकारावणाओ पडिवि-रया जावज्जीवाए, एगच्चाओ अपडिविरया एगच्चाओ पयणपयावणाओ पडिविरया जावज्जीवाए, एगच्चाओ पयणपयावणाओ अपडिविरया, एग-च्चाओ कोट्टणपिट्टणतज्जणतालणवहबंधपरिकिलेसाओ पडिविरया जावज्जी-वाए, एगच्चाओ अपडिविरया, एगच्चाओ ण्हाणमद्दणवण्णगविलेवणसद्दफरिस-रसरूवगंधमल्लालंकाराओ पडिविरया जावज्जीवाए, एगच्चाओ अपडिविरया, जे यावण्णे तहप्पगारा सावज्जजोगोवहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा कज्जंति तओ वि एगच्चाओ पडिविरया जावज्जीवाए, एगच्चाओ अपडिविरया ॥६२॥

शब्दार्थ—[से जे इमे] जो ये [गामागर जाव सण्णिवेसेसु मणुया भवंति] ग्राम आकर यावत् सन्निवेशों में मनुष्य रहते हैं [तं जहा] जैसे [अप्पारंभा अप्पपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया] अल्प आरंभी-जो पृथिव्यादिक जीवों के उपमर्दनवाले कृष्यादिक आरंभ को अल्प करते हैं वे, अल्प परिग्रही-अर्थात् जिनके धन धान्यादिक के स्वीकार रूप ममत्व भाव अल्प होता है वे, धार्मिक—प्राणातिपातादिक विरमणरूप धर्म से जो युक्त होते हैं वे, तथा धर्मानुग-धर्मपद्धति के अनुसार जो चलते हैं वे, [धम्मिट्ठा धम्मक्खाई, धम्मप्पलोई धम्मपलज्जणा धम्मसमुदायारा] धर्मेष्ट—धर्म ही जिन्हे प्रिय हैं वे, अथवा धर्मिष्ठ—धर्म के अतिशय से जो युक्त हैं वे, धर्मख्याति—धर्म से जिनकी ख्याति हुई है वे अथवा—धर्मख्यायी—भव्यजनों के लिए जो श्रुतचारित्ररूप धर्म का कथन करनेवाले होते हैं वे, धर्मप्रलोकी—धर्म को जो उपादेय रूप से मानते हैं वे, धर्मप्ररंजन धर्म के सेवन करने में जो अधिक अनुराग संपन्न होते हैं वे, धर्म समुदाचार—धर्म ही

जिनका उत्तम आचार हैं वे, [धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा] तथा जो धर्म से ही अपनी जीविका चलाते हैं वे, [सुसीला सुव्वया सुप्पडियाणंदा] शोभन आचार जिनका है वे सुव्रत—निरतिचार व्रतों के जो पालन करनेवाले हैं वे सुप्रत्यानन्द—जिनका चित्त सदा अच्छे प्रकार से आनंद संपन्न रहा करता है वे, तथा जो [साहुहिं एगच्चाओ] साधु के समीप प्रत्याख्यान लेकर केवल एक [पाणाइवायाओ] स्थूल प्राणातिपातरूप से [जावज्जीवाए पडिविरया] जीवन पर्यन्त—प्रतिविरत—निवृत्त रहते हैं, [एगच्चाओ अपडिविरया] परंतु सूक्ष्मरूप प्राणातिपात से विरक्त नहीं रहते हैं वे [एवं जाव पडिग्गहाओ] तथा इसी प्रकार स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान, स्थूल मैथुन, एवं स्थूल परिग्रह से विरक्त रहते हैं वे [एगच्चाओ कोहाओ माणाओ मायाओ कोहाओ पेज्जाओ दोसाओ कलहाओ अब्भक्खाणीओ पेसुण्णाओ परपरिवायाओ अरइरईओ मायामोसाओ मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया जावज्जीवाए] इसी प्रकार स्थूल क्रोध, मान, माया,

लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यात, पैशून्य, परपरिवाद, अरति, रति, मायामृषा, एवं मिथ्यादर्शन शल्य से जीवन पर्यन्त प्रतिविरत रहा करते हैं, [एगच्चाओ अपडिविरया] किन्तु सूक्ष्म क्रोधादिकों से प्रतिविरत नहीं रहते हैं, [एगच्चाओ आरंभ समारंभाओ पडिविरया जावज्जीवाए] ऐसे ही वे स्थूल आरंभ समारंभ से ही जीवन पर्यन्त विरक्त रहते हैं [एगच्चाओ अप्पडिविरया] सूक्ष्म आरंभ समारंभ से नहीं। [एगच्चाओ करणकारावणाओ पडिविरया जावज्जीवाए] कोइ ऐसे हैं जो केवल स्वयं करने से एवं दूसरों से कराने से जीवन पर्यन्त विरत रहते हैं, [एगच्चाओ अपडिविरया] कोइ ऐसे हैं जो राजा की आज्ञा आदि के कारण इनसे प्रतिविरत नहीं है [एगच्चाओ पयण-पयावणाओ पडिविरया जावज्जीवाए] कोइ २ ऐसे हैं जो पचन पाचनक्रिया से जीवन पर्यन्त विरत हैं। [एगच्चाओ पयणपयावणाओ अपडिविरया] कोई २ ऐसे है जो इन पचन-पाचनादि क्रियाओं से विरत नहीं है। [एगच्चाओ कोट्टणपिट्टणतज्जणतालण-वह-बंध-परिकिलेसाओ पडिविरया जावज्जीवाए] कोई २

ऐसे है जो कुट्टनछेदनपिट्टन-पीटना वस्त्रादिक का जिस प्रकार मुद्गरादिक से कूटना होता है उसी प्रकार मुद्गर मूसल आदि से पीटना-कूटना, तर्जन-खोटे वचनो द्वारा भर्त्सना करना, ताडन चपेटा थप्पड आदि मारना, वध—प्राणव्यपरोपण करना, बन्ध रज्जु पाश आदि से किसी को बांधना, एवं परिक्लेश, किसी को बाधा आदि उत्पन्न करना इन सब कार्यों यावज्जीवन प्रतिविरत है, [एगच्चाओ अपडिविरया] कोई २ ऐसे है जो इन क्रियाओं से प्रतिविरत नहीं है [एगच्चाओण्हाणमद्दणवण्णगविलेवणसद्द-फरिस-रसरूवगंधमल्लालंकाराओ पडिविरया जावज्जीवाए] कोइ २ ऐसे हैं जो जीवन पर्यन्त स्नान से, मर्दन से, विलेपन से, शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श, इन इन्द्रियों के योगो से माला एवं अलंकार आदि से निवृत्त है [एगच्चाओ अपडिविरया] कोई २ ऐसे भी हैं जो इनसे बिलकुल ही प्रतिविरत नहीं है। [जे यावण्णे तहप्पगारा सावज्जजोगो-वहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा कज्जंति] इसी प्रकार के और भी जितने सावद्य

योगोपधिक अर्थात् सावद्य योग युक्त और माया कषाय जन्य तथा दूसरों के प्राणों को परिताप पहुंचाने वाले कृष्यादि व्यापार हैं [तओवि] उनसे भी कितनेक ऐसे मनुष्य हैं जो [एगच्चाओ पडिविरया जावज्जीवाए] एकान्तः जीवनपर्यन्त प्रतिविरत हैं तथा कितनेक ऐसे है जो [एगच्चाओ अपडिविरया] इनसे प्रतिविरत नहीं हैं ॥६२॥

औ. सूत्र ६२ पेज ६४७ से

मूलम्—तं जहा समणोवासगा भवंति, अभिगयजीवाजीवा उवलद्ध पुण्णपावा आसवसंवरनिज्जरकिरियाअहिगरणबंधमोक्खकुसला असहेज्जा देवासुरनागजक्खरक्खसकिन्नराकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाइएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जा, निग्गंथे पावयणे णिस्संकिया णिक्कंखिया निव्वितिगिच्छा लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा अभिगयट्ठा अट्ठिमिंजपेमा-

णुरागरत्ता, अयमाउसो! निग्गंथे पावयणे अट्ठे, अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे, ऊसिय फलिहा अवंगुयदुवारा चियत्तंतेउरघरप्पवेसा बहूहिं सीलव्वयगुण-वेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं चउद्दसट्ठमुदिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेत्ता समणे निग्गंथे फासुयएसणिज्जेणं असणपाणखाइम-साइमेणं वत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेणं ओसहभेसज्जेणं पडिहारिएण य पीढ-फलगसेज्जासंथारएणं पडिलाभेमाणा विहरंति, विहरित्ता भत्तं पच्चक्खंति, ते बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति छेदित्ता आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे, कालं किच्चा उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, ताहिं तेसिं गई, बावीसं सागरोवमाइं ठिई आराहगा सेसं तहेव ॥६३॥

शब्दार्थ—[तं जहा] इसी प्रकार [समणोवासगा भवंति] अन्य श्रमणोपासक

होते है जोकि [अभिगयजीवाजीवा] जीव और अजीव के यथार्थ स्वरूप के ज्ञाता होते हैं [उवलद्धपुण्णपावा] पुण्य एवं पाप का यथावस्थित स्वरूप जिन्होंने अच्छी तरह जान लिया है [आसवसंवरनिज्जरकिरियाअहिगरणबंधमोक्खकुसला] आस्त्रवसंवरनिर्जरा, क्रिया अधिकरण, बंध, मोक्ष इनमें हेय कौन २ हैं और उपादेय कौन २ हैं इस प्रकार हेय और उपादेय के ज्ञान से जिनका भाव परिपक्व हो चुका है जिस प्रकार नौकामें छिद्रों द्वारा जल का प्रवेश होता रहता है उसी प्रकार इस आत्मा रूप सरोवर मे जिसके द्वारा अष्टविध कर्म रूप जल का आगमन होता है उसका नाम आस्त्रव है। मिथ्या दर्शन, अविरति, प्रमाद कषाय, एवं, योग के भेद से यह आस्त्रव अनेक प्रकार का है। छिद्रों के बंद करने से जिस प्रकार नौका मे पानी का आना रुक जाता है, उसी प्रकार जिन परिणामों से आते हुए कर्म रुकजाते हैं उन परिणामों का नाम संवर है। गुप्ति, समिति, एवं परिषह आदि के भेद से यह संवर अनेक प्रकार का

कहा गया है। जीवप्रदेश से कर्मों के एकदेश का नाशहोना इसका नाम निर्जरा है। काय आदि संबंधो का नाम क्रिया है। नरकगति मे जाने की योग्यता जीव जिसके द्वारा प्राप्त करता है। वह अधिकरण है द्रव्य और भाव के भेद से यह दो प्रकार का है। यहां पर भाव अधिकरण का कथन है, अतः वह क्रोधादिक कषाय रूप जानना चाहिए। जीव का एवं कर्मपुग्दलों का परस्पर में एकक्षेत्रावगाह रूप संबंध का नाम बंध है। समस्त कर्मो की अत्यन्त–आत्यन्तिक क्षय का नाम मोक्ष है। समस्त कर्मो के क्षय होने पर उनके संयोग से आपादित मूर्तित्व का शीघ्र ही पर्यवसान जीव में हो जाता है इससे अमूर्तित्व स्वरूप स्वभाव का प्राचुर्य होने से उसका अव्याबाध रूप से अवस्थान हो जाता है। कहा भी है–समस्त कर्मों का विगम ही मोक्ष है और वही जीव का शुद्ध स्वरूप है। इस स्वरूप के प्राप्त होते ही जीव का अवस्थान अव्याबाधरूप से आत्मा में हो जाता है। जो 'असाहाय्या' है

अर्थात् धर्म जनित सामर्थ्य के अतिशयसे देवादिकों के सहायता की स्वप्न में भी इच्छा नहीं रखते हैं, अथवा अपने द्वारा कृत शुभाशुभ कर्म आत्मा स्वयं ही भोग करता है दूसरों की सहायता इसमें कार्यकारी नहीं हो सकती–इस प्रकार की मानसिक दृढता के कारण जो दूसरों की सहायता की थोडी सी भी परवाह नहीं करते हैं। [देवासुरनागजक्खरक्खसकिंनरकिंपुरिसगंधव्वमहोरगाइएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पावणयाओ, अणइक्कमणिज्जा] देव, असुरकुमार, नागकुमार, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरुष, गरुड, सुपर्णकुमार, गन्धर्व, एवं महोरग इत्यादिक देवगणों द्वारा भी जो निर्गन्थ प्रवचन से एक वाड भी विचलित नहीं किए जा सकते हैं [निग्गंथे पावयणे णिस्संकिया णिक्कंखिया णिव्वितिगिच्छा लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा अभिगयट्ठा] निग्रंथ प्रवचन मे जिनकी श्रद्धा निःशंकित हो, निकांक्षित हो परमत की ओर जिनके हृदयमें जाने की अथवा उसे सराहने आदि की थोडी सी भी अभिलाषा

नहीं है। निर्विचिकित्सागुण से जो भरपूर है। फल की प्रति जिनकी श्रद्धा संदेह से सर्वथा रिक्त है जो लब्धार्थ है। गृहीतार्थ है, पृष्ठार्थ है, अभिगतार्थ है [विणिच्छियट्ठा] विनिश्चितार्थ हैं [अट्ठिमिंजपेमाणुरागरत्ता] प्रवचन के प्रति अनुराग जिनकी नस २ में भरा हुवा है ऐसे ये श्रावकजन वार्तालाप के प्रसंगमे अपने २ पुत्रादि कों को अथवा अन्य जनों को इस प्रकार कह कर समझाते हैं बुझाते है [अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्ठे, अयं परमट्ठे सेसमणट्ठे] हे आयुष्मन् ! यह निर्गन्थ प्रवचन ही मोक्ष का कारण है, इसलिए यही परमार्थ भूत है इससे भिन्न जो कुप्रवचन है—मिथ्यादृष्टियों द्वारा उपदिष्ट प्रवचन है वह तथा धन धान्य पुत्र एवं कलत्रादि, अनर्थ के कारण है। इन व्यक्तियों का [ऊसिय फलिहा] हृदय स्फटिक मणि की समान निर्मल रहा करता है। [अवंगुयदुवारा] इनके घर के दरवाजे सदा दान के लिए खुले रहा करते है [चियतंतेउरघरप्पवेसा] राजा के अंतःपुर में भी इनको आने

जाने की कोइ रोक टोक भी नहीं होती है [बहूहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोव-वासेहिं चउद्दस अट्ठमुदिट्ठ पुण्णमासिणीसु] 'शील' शब्द से सामायिक, देशावगासिक पोषध, अतिथीसंविभाग' ये चार लिए जाते ह। 'वृत' से पांच अणुवृत 'गुण' से तीन 'गुणवृत लिए जाते ह। विरमण–मिथ्यात्व से निवृत होना, प्रत्याख्यान-पर्वदिनो में निषिद्धवस्तुका त्यागकरना। पोषधोपवास (पोषं धत्ते) इस व्युत्पत्ति से धर्म की वृद्धि को जो करता है वह पोषध कहलाता है। अर्थात् चतुर्दशी, अमावस्या अष्टमी, पूर्णिमा ये पोषध कहलाते ह इन पर्व दिनों में आहार, शरीर सत्कार, अब्रह्मचर्य और सावद्य व्यापार इन चारों का त्याग करना पोषधोपवास हैं। इस प्रकार के श्रावक धर्म को [सम्मं अणुपालेत्ता] अच्छी तरह पालन करते हैं। [समणे निग्गंथे] श्रमणनिर्ग्रन्थों को [फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं] प्रासुक एषणीय, अशन, पान, खाद्य, तथा स्वाद्य ऐसे चारों प्रकार में आहारों को [वत्थपरिग्गहकंबलपायपुंछणेणं ओसह भेस-

ज्जेणं] एवं वस्त्र पात्र कम्बल, रजोहरण औषध [पडिहारिएण य पीढफलगसेज्जा संथारएणं पडिलाभेमाणा विहरंति] एवं प्रतिहारिक (पडिहारा) पीठ (बाजोठ) फलक (पाट) शय्या (वसति) और संस्तारक आदि से, मुनिराजों को प्रतिलाभित करते हुए विचरते हैं अर्थात् उन्हे इन पूर्वोक्त वस्तुओं को आवश्यकतानुसार प्रदान करते हैं। [विहरिता भत्तं पच्चक्खंति] पश्चात् अन्तिम समय में भक्त प्रत्याख्यान करते हैं। [ते बहुइं भत्ताइं अणसगाए छेदेंति] वे अनेक भक्त का अनशन द्वारा छेदन करते है [छेदित्ता, आलोइयपडिक्कंता, समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा] छेदन कर अपने पापस्थानों की अलोचना एवं प्रतिक्रमण करके वे समाधि सहित कालअवसर मे कालकर [उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति] जघन्य से पहले देवलोक उत्कृष्ट से बारहवें देवलोक अच्युतकल्प में देवपर्याय से उत्पन्न होते हैं। [तहिं तेसिं गई, बावीसं सागरोवमाइं ठिई, आरहगा, सेसं तहेव] प्रथम देवलोक में से इन की उत्कृष्ट

दोसागरोपम और बारहवें देवलोक में उत्कृष्ट २२ सागरोपम की स्थिति कही गई है। अवशिष्ट सामान्य धर्म से लेकर सब कथन यहां पर्यन्तका समझना चाहिए ॥६३॥

मूलम्—ते णं भंते ! मणुया णिस्सीला णिव्वया णिम्मेरा णिग्गुणा निप्पचक्खाणपोसहोववासा उसण्णं मंसाहारा मच्छाहारा खुड्डाहारा कुणिमाहारा कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिंति कहिं उववज्जिहिंति ? गोयमा ! उसण्णं णरगतिरिक्खजोणिएसु उववज्जिहिंति ॥ (जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति)

अर्थ—अहो भगवन् वे मनुष्य शीलाचार रहित, सामायिक आदि व्रतरहित गुणरहित कुलजाति धर्म की मर्यादा रहित, रात्रिभोजन नौकारसी आदि प्रत्याख्यान रहित पोषधोपवास रहित प्रायः मांस का आहार करनेवाले, जलचर मत्स्यादि का आहार करनेवाले क्षुद्र द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय तथा इंडा विगेरे का आहार करनेवाले

कुणिम का–मरे हुए मनुष्य, हाथी, घोडा, गाय भेंस विगैरहका आहार करनेवाले होते हैं, वे काल के अवसर में काल कर कहां जाते है कहां उत्पन्न होते है? अहो गौतम वे प्रायः नरक तिर्यंच में उत्पन्न होते हैं।

[सूरं वा मेरगं वावि, अन्नं वा मज्जगं रसं] इत्यादि वचन से मद्यपान का भी शास्त्रकारने निषेध किया है जैसे–सुरं–सुरापान 'मेरगं–सरके का पान 'मज्जगं' मद जनक पान–गांजा अफीन आदि का पान करने योग्य नहीं है ये शास्त्र से निषिद्ध मद्य-पान करनेवाले नरक तिर्यंच गतिको प्राप्त होते हैं। (दशवैकालिक सूत्र अ. ५)

श्रावक के इक्कीस गुण हैं

१ नो तत्व और पच्चीस क्रिया का ज्ञान करना, २ देवताकी भी सहायता न चाहना, ३ मनुष्य तिर्यञ्च और देवता के उपसर्ग आने पर भी धर्म में दृढ रहना ४ जैन धर्म में शंका कांक्षा विचिकित्सा न करना ५ जिनवाणी में उपयोग सहीत श्रद्धा करना

६ जिनधर्म में हाड़ हाड़ की मिंजी रंगना ७ अविश्वासी के घर नहीं जाना ८ दान देने के लिए सदा दरवाजा खुला रखना ९ अन्तःपुर में प्रवेश करने पर भी किसी को अप्रतीति न होना १० महीने में छह पौषध करना ११ यथाशक्ति तपस्या करना १२ अशन-पान आदि चौदह प्रकारका शुद्ध दान देना १३ उभयकाल छह आवश्यक करना १४ बारहव्रत धारण करना १५ तीन मनोरथों का चिन्तन करना ४ विसामा, (विश्रान्ति करना) १६ पन्द्रह कर्मादान टालना १७ ग्यारह पडिमा धारण करना १८, सर्व जीवों पर अनुकम्पा करना १९ सब जीवों पर समताभाव रखना २० व्रत पच्चक्खाण निर्मल पालना २१ आलोचना आदि करके आराधक होना.

प्रकारान्तर से भी २१ गुण हैं। १ क्षुद्रता नहीं २ रूपनिधि (सौन्दर्य) ३ सौम्य ४ जन प्रियता ५ अक्रूरता ६ पापभीरुता ७ अशठता ८ सुदाक्षिण्य ९ लज्जालुता १० दयालुता ११ सौम्यदृष्टिपन (शान्तनजर) १२ अमत्सरता (इर्ष्या न करना) १३ गुणा-

नुरागिता १४ सत्यवादिपन १५ सुपक्षता (न्यायपक्षक ग्रहण) १६ दीर्घदर्शिता (आगे-पीछे का गहरा विचार करना) १७ विशेषज्ञता (प्रत्येक तत्व को बारिक रीति से जानना) १८ वृद्धानुगतता (शिष्टों की परम्परा का पालन करना) १९ विनीतता (विनयवान् होना) २० कृतज्ञता (दूसरों से किये हुए उपकार को न भूलना) २१ परहितकारिता (परोपकार करना)

छ आवश्यक फल

मूलम्—सामाइएणं भंते ! जीवे किं जणयइ ? सामाइएणं सावज्जजोग-विरइ जणयइ ॥८॥

अर्थ—हे भगवन् ! सामायिकथी जीवने शुं फल थाय छे? सामायिकथी सावद्य पापना योगनी निवृति थाय छे॥८॥

मूलम्—चउविसत्थएणं भंते! जीवे किं जणयइ? चउविसत्थएणं दंसण-विसोहिं जणयइ ॥९॥

अर्थ—हे भगवन्! चौवीश तीर्थंकरनी स्तुतिथी जीवने शुं फलनी प्राप्ति थाय छे? चौवीश तीर्थंकरनी स्तुतिथी दर्शन विशुद्धि थाय छे.

मूलम्—वंदणएणं भंते! जीवे किं जणयइ? वंदणएणं नीयागोयं कम्मं खवेइ उच्चागोयं कम्मं निबंधइ सोहग्गं च णं अप्पडिहयं आणाफलं निवत्तेइ-दाहिणभावं च णं जणयइ ॥१०॥

अर्थ—हे भगवन्! वंदन करवाथी जीवने शो लाभ थाय छे? वंदनाथी नीच गोत्र कर्मनो क्षय करीने उच्च गोत्र कर्म बांधे छे अविच्छिन्न सौभाग्य तथा आज्ञाफल प्राप्त करे छे अने विश्ववल्लभ थाय छे ॥१०॥

मूलम्—पडिक्कमणेणं भंते! जीवे किं जणयइ? पडिक्कमणेणं वयछिंदाइ पिहेइ पिहियवयछिद्दे पुण जीवे निरुद्धासवे असबलचरित्ते अट्ठसु पवयणमायासु उवउत्ते अपुहुत्तं सुप्पणिहिए विहरइ ॥११॥

अर्थ—हे भगवन्! प्रतिक्रमण करवाथी जीवने शुं फल प्राप्त थाय छे? प्रतिक्रमणथी व्रतोंमां पडेला छिद्रो ढंकाय छे पछी शुद्ध व्रतधारी थइने आश्रवोने रोके छे आठ प्रवचन मातामां सावधान थाय छे शुद्ध चारित्र पालतो समाधिपूर्वक संयममां विचरे छे।११।

मूलम्—काउस्सग्गेणं भंते! जीवे किं जणयइ? काउस्सगेणं तीयपडुप्पण्णं पायच्छित्तं विसोहइ विसुद्धपायच्छित्ते य जीवे निव्वुयहियये ओहरियभरूव्व भारवाहे पसत्थज्झाणोवगए सुहसुहेणं विहरइ ॥१२॥

अर्थ—हे भगवन् काउस्सगथी जीवने शुं फल प्राप्त थाय छे? काउस्सगथी भूत

अने वर्तमान कालना अतिचारोंनी शुद्धि थाय छे आ शुद्धिथी जीव बोझा रहित हलको निश्चिंत अने प्रशस्त ध्यानयुक्त थईने सुखपूर्वक विचरे छे ॥१२॥

मूलम्—पच्चक्खाणेणं भंते! जीवे किं जणयई? पच्चक्खाणेणं आसवनिरूंभई पच्चक्खाणेणं इच्छानिरोहं जणयई। इच्छाणिरोहं गए य णं जीवे सव्व दव्वेसु विणीयतण्हे सीइभूए विहरइ ॥१३॥

अर्थ—हे भगवन्! पच्चक्खाणथी जीवने शो लाभ थाय छे? पच्चक्खाणथी जीव आस्रवद्वारोने रूंधे छे अने ईच्छा निरोध करे छे इच्छानिरोधथी जीव बधा द्रव्योथी तृषणा रहित थइने शांतिथी विचरे छे ॥१३॥

मूलम्—थयथुइमंगलेणं भंते! जीवे किं जणयइ? थयथुइमंगलेणं नाणदंसणचरित्तं बोहिलाभं जणयइ नाणदंसणचरित्तं बोहिलाभं संपन्ने य णं जीवे

अंतकिरियं कप्पविमाणोववत्तियं आरोहेणं आरोहेई ॥१४॥

अर्थ—हे भगवन् ! स्तवन अने स्तुति मंगल करवाथी एटले के 'नमोत्थुणं' नो पाठ करवाथी जीवने शो लाभ थाय छे ? स्तवनने स्तुति मंगलथी ज्ञानदर्शनचारित्ररूप बोधि लाभे छे, आ बोधिलब्ध जीव कां तो मोक्ष पामे छे अथवा कल्पविमानमां उत्पन्न थई आराधक थाय छे ॥१४॥

मूलम्—अप्पिया देवकामाणं कामरूवविउव्विणो ।
उड्ढं कप्पेसु चिट्ठंति, पुव्वा वाससया बहु ॥१५॥

अर्थ—देवसंबंधी सुखों के लिये ही मानो समर्पित किये हैं अर्थात् पूर्वभव में आचरित पुण्यों के द्वारा ही मानो उस स्थान पर लाकर रख दिये हैं इसलिये वहां अपनी इच्छानुसार रूपों को बनाते हुए वे देव ऊपर ऊपर के सौधर्म आदि कल्पों में कंई पूर्वों तक तथा असंख्यात सैंकडों वर्ष पर्यन्त निवास करते हैं अर्थात् वहां के सुखोंका उपभोग करते हैं ।१५।

मूलम्—तत्थ ठिच्चा जहा ठाणं जक्खा आउक्खए चुया।
उवेंति माणुसं जोणिं, से दसंगे भिजायए ॥१६॥

अर्थ—उन देवलोकों में यथास्थान स्थित होकर अपनी २ योग्यताके अनुसार स्थितिको प्राप्त कर वे देव वहां की आयु समाप्त होनेपर वहां से च्यव कर मनुष्य योनि में जन्म लेते हैं। वहां पर वह प्रत्येक जीव अपने पुण्य कर्म के अवशेष रह जाने से दश प्रकार के भोगोपभोगों की सामग्रीवाला होता है ॥१६॥

मूलम्—खित्तं वत्थु हिरण्णं च, पसवो दासपोरुसं।
चत्तारि कामकंधाणि, तत्थ से उववज्जइ ॥१७॥

अर्थ—ग्रामउद्यान आदि क्षेत्र वास्तु भूमिगृह आदि उच्छ्रीत प्रासाद आदि सुवर्ण गाय, भेंस हाथी घोडा आदि चेटक चेटी, दास आदि पौरुषेय ये चार तथा कामभोगके हेतुरूप स्कंध पुद्गल समूह जहां होते हैं ऐसे कुलों में वह जीव उत्पन्न होता है १ ।१७।

मूलम्—मित्तवं नाइवं होइ, उच्चागोए य वण्णवं।
अप्पायंके महापण्णे अभिजाए जसो बले॥१८॥

अर्थ—वह जीव सन्मित्रों से युक्त होता है २ प्रशस्त जाति से संपन्न होता है ३ उत्कृष्ट कुलवाला होता है ४ शरीर में अच्छे वर्णवाला होता है रूप लावण्य आदि से संपन्न होता है५, रोगादिक रहित होता है६, विशिष्ट बुद्धिशाली होता है७, विनीत होता है ८, ख्याति से युक्त होता है ९, प्रत्येक कार्य को करने की शक्तिवाला होता है॥१८॥

मूलम्—भुच्चा माणुस्सए भोए. अप्पडिरूवे अहाउयम्।
पुव्वं विसुद्धसद्धमे, केवलं बोहि बुज्झिया ॥१९॥

अर्थ—वह जीव निरुपम—उपमारहित वह है उतनी ही पुरी आयु तक मनुष्य-भव संबंधी भोगों को भोगकर पूर्व जन्म में निदान आदि से रहित होने के कारण सद्धर्मशाली होता हुआ केवल निर्मल सम्यक्त्वको पाते हैं और उसे प्राप्त करके—

मूलम्-चउरंगं दुल्लहं नच्चा, संजमं पडिवज्जिया।
तवसा धुयकम्मंसे, सिद्धे हवइ सासए ॥त्तिबेमि॥२०॥

अर्थ-दुर्लभ इस चतुरंगी को मनुष्यत्व, श्रुति श्रद्धा और संयम में वीर्योल्लास को प्राप्त करके तथा संयम को अंगीकार करके एवं तपसे अवशिष्ट कर्मांशको नष्ट करके शाश्वत सिद्ध हो जाता है ॥२०॥ उत्तराध्ययनसूत्र

मूलम्-तहारूवं भंते! समणं वा माहणं वा पज्जुवासमाणस्स किं फला पज्जुवासणा गोयमा! सवणफला, से णं भंते! सवणे किं फले? णाणफले, से णं भंते! नाणे किं फले? विण्णाणफले? से णं भंते! विण्णाणे किं फले? पच्चक्खाणफले से णं भंते! पच्चक्खाणे किं फले? संजमफले, से णं भंते!

संजमे किं फले ? अणासवे फले, अणासवे किं फले ? तवेफले, तवे किं फले ? तवे वोदाणफले, वोदाणे किं फले ? अकिरिया फले, से णं भंते अकिरिया किं फला ? सिद्धि पज्जवसाणफला पण्णत्ता गोयमा ! १७८

अर्थ—हे भगवन् तथारूप (जिन प्ररूपित नियमों के अनुसार महाव्रतों के पालक) श्रमण माहण की सेवा करनेवाले के लिए सेवा का क्या फल होता है ? हे गौतम ! शास्त्रश्रवण का फल होता है। हे पुण्य ! शास्त्रश्रवण का क्या फल होता है ? उसमें ज्ञान प्राप्ति का फल होता है। ज्ञानप्राप्ति का क्या फल होता है ? ज्ञान से हेय उपादेय जानने रूप विज्ञान फल की प्राप्ति होती है। विज्ञान प्राप्ति का क्या फल होता है ? उसमें प्रत्याख्यान फल की प्राप्ति होती है। प्रत्याख्यान का क्या फल होता है ? उसमें संयम रूप फल की प्राप्ति होती है। संयम रूप प्राप्ति का क्या फल होता है ? अनाश्रव

अर्थात् नूतन कर्मोंका नहीं आना रूप फल होता है। इसी प्रकार अनाश्रव से तप फल की प्राप्ति होती है, तपसे पूर्व कर्म के विनाशरूप फल की प्राप्ति होती है। पूर्व-कर्म के विनाश से अक्रिया रूप फल की अर्थात् योग निरोध फल की प्राप्ति होती है। हे पूज्य! उस योग निरोध का क्या फल होता है? हे गौतम उसका सिद्धि मोक्ष अवस्था रूप सर्वोत्कृष्ट अंतिम फल कहा गया है। स्थानांगसूत्र स्था. ५

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं जीवा सुलभबोहियत्ताए कम्मं पगरेंति अरिहंताणं वण्णं वदमाणे अरिहंतपण्णत्तस्स धम्मस्स वण्णं वदमाणे आयरियउवज्झायाणं वण्णं वदमाणे चाउवण्णस्स संघस्स वण्णं वदमाणे विविक्कतवबंभचेराणं देवाणं वण्णं वदमाणे १३६

अर्थ—पांच कारणों से जीव सुलभबोधि होने का कर्म बांधा करते हैः—१ अरिहंतों

का गुणानुवाद बोलते हुए २ अरिहंत प्रणीत धर्मका गुणानुवाद बोलते हुए ३ आचार्य उपाध्याय महाराज का गुणानुवाद बोलते हुए ४ चतुर्विध श्रीसंघका गुणानुवाद बोलते हुए ५ निर्दोष ब्रह्मचर्यका पालन करनेवाले महात्माओं का (इस कारण से देवता होनेवालों का गुणानुवाद बोलने वालों को सुलभबोधि की प्राप्ति होती है। स्थानांगसूत्र स्था. ३

मूलम्—तिहिं ठाणेहिं समणोवासए महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ तं कयाणं अहं अप्पं वा बहुं वा परिग्गहं परिचइस्सामि कयाणमहं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामि कयाणमपच्छिममारणंतिय संलेहणा झूसणा झूसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालमवकंखमाणे विहरिस्सामि एवं समणसा सवयसा सकायसा जागरमाणे समणोवासए महानिज्जरे महापज्ज-वसाणे भवइ ॥३८॥

अर्थ—तीन स्थानों द्वारा (कारणोद्वारा) श्रमणोपासक महानिर्जरावाला, महापर्यवसानवाला (कर्मों की) (अनंत निर्जरावाला) होता है वह इस प्रकार है कब मैं अल्प अथवा बहुत (सभी प्रकार के) परिग्रह को छोडूंगा कब मैं श्रावक से साधु धर्म को ग्रहण करूंगा (दीक्षा) (लूंगा) कब मैं अपश्चिम मारणान्तिकी संलेखना (मृत्यु के समय कषाय का उपशम करके और देह में मूर्च्छा न रख करके जो तप विशेष किया जाता है वह संथारा) कर्मों को क्षय करने की क्रिया का आचरण करता हुआ भोजन पानी आदि का प्रत्याख्यान किया हुआ स्वस्थता पूर्वक अचल रह कर मृत्यु की प्रतीक्षा करता हुआ विचरूंगा अर्थात् रहूंगा इस प्रकार मन से वचन से और काया से जागृत होता हुआ (संयम की साधना करता हुआ) श्रमणोपासक महानिर्जरावाला और महापर्यवसानवाला (कर्मों के अनंत परमाणुओं के क्षय करनेवाला) होता है॥३८॥

अथ पच्चीस क्रिया का नाम तथा भावार्थ

१ काइया क्रिया का दो भेद्--१ 'अणुवरयकाइया' पाप से नहीं निवर्तने से लागे। २ 'दुपउत्तकाइया'–इन्द्रियों के इष्ट अनिष्ट विषय से नहीं निवर्तने से लागे। या अजतनासे प्रवर्तावे घणा काल से काया वोसराया विना पाछला रह्या हुआ काया का पुद्गल उसकी क्रिया लागे।

२ अहिगरणीया (अधिकरण) क्रिया का दो भेद्–१ 'संजोजनादिगरणिया'–खड्ग मूशलहथियारकसि कुदाला इत्यादि संग्रह करे उनकी क्रिया लागे। २ 'निव्वत्तणादिगरणिया' शस्त्र हथियार वगेरह नया न बनावे तथा मरम्मत करावे उनकी क्रिया लागे।

३ पाउसिया क्रिया का दो भेद्–१ 'जीव पाउसीया' जीव पर द्वेष करने से लागे तथा मत्सर परिणाम राखे उसकी क्रिया लागे। ३ 'अजीवपाउसिया'–अजीव पर द्वेष करे तथा मत्सर परिणाम राखे उसकी क्रिया लागे।

४ परितावणिया क्रिया का दो भेद—१ 'सहत्थ परितावणिया' आप तपे तथा दूसराने तपावे (परितापना उपजावे) उसकी क्रिया लागे।

५ पाणाइवाइया क्रिया का दो भेद–१ 'सहत्थ पाणाइवाइया'–खुद के हाथ से खुद का तथा दूसरे का प्राण हरे उसकी क्रिया लागे। २ 'परहत्थपाणाइवाइया' दूसरे के हाथ से खुद का तथा दूसरे का प्राण हरावे उसकी क्रिया लागे। जीवरी हिंसा करे।

६ अपच्चखाणिया का दो भेद–१ 'जीव अपच्चखाणिया' २ 'अजीव अपच्चखाणिया' व्रतपच्चखाण किंचित्मात्र पण नहीं करे चोथे गुणस्थान तक लागे।

७ आरम्भिया क्रिया का दो भेद–१ जीव आरम्भिया–जीव को आरम्भ बधावे। अजीव आरम्भिया-अजीव को आरम्भ बधावे। खेती, बाग बगीचा, मील कल दूकान, मकान वगेरह को आरम्भ बधावे उसकी क्रिया लागे।

८ परिग्गहिया क्रिया का दो भेद—१ 'जीवपरिग्गहिया'-घोडा, ऊंट, बैल, हाथी,

दास-दासी वगेरा को परिग्रह बधावे उसकी क्रिया लागे। २ 'अजीवपरिग्गहिया' धन, आभूषण, कपडा, मकान वगेरह को परिग्रह बधावे उसकी क्रिया लागे।

९ मायावणिया का दो भेद–१ आय भाव कंकणया–अपनी आत्मा के वास्ते ठगाइ करे व अपनी आत्मा का खोटा भाव छिपाने खोटा आचरण आचरे खोटा लेख लिखे। २ परभाव कंकणया–पराया ते वास्ते ठगाई करे, करावे, खोटा आचरण करे तथा करावे, खोटा लेख लिखे तथा लिखावे।

१० मिथ्यादंसणवत्तिया का दो भेद–१ 'उणाइरित मिथ्यादंसण' ओछा, अधिका सर्दहे तथा परूपे उसकी क्रिया लागे। २ तवाइरित मिथ्यादंसण विपरीत सर्दहे तथा परूपे उसकी क्रिया लागे।

११ दिट्ठीया क्रिया का दो भेद–१ जीव दिट्ठीया घोडा, हाथी, विगेरह को देखकर सरावे या [illegible] वो क्रिया लागे। २ अजीव दिट्ठीया-चित्रामादि आभूषण देखकर

सरावे या विसरावे तो क्रिया लागे ।

१२ पुट्टिया क्रिया का दो भेद–१ 'जीवपुट्टिया'। २ 'अजीवपुट्टिया'। जीव अजीव के ऊपर रागद्वेष लाकर हाथ फेरे तथा खोटा भाव से प्रश्न करे (सवाल करे)

१३ पाडुच्चिया क्रिया का दो भेद—१ 'जीव पाडुच्चिया'-जीव को खोटो वंच्छे तथा उस पर इर्षा करे उसकी क्रिया लागे। २ 'अजीवपाडुच्चिया' द्वेषबुद्धि से अजीव पर खोटी चिन्तवना करे उसकी क्रिया लागे। बाहिर वस्तु के निमित्त से लागे जैसे ओघा पातरा, घर, हाट, इत्यादिक से अथवा सामान्य तरेसु रागद्वेष करने से तथा दूसरे की सम्पदा देखकर इर्षा करने से ।

१४ सामंतोवणिवाईया क्रिया का दो भेद–१ 'जीवसामंतोवणिवाईया' २ 'अजीव सामंतोवणिवाईया'-जीव अजीव का समुदाय इकट्ठा करना उसकी क्रिया लागे। अपना भला पदार्थ देखकर लोगों आगे प्रशंसा करे याने पोमावतो फिरे तथा अपनी वस्तु ने

दूसरों सरावे तो राजी हुवे। तथा विसरावे तो भी राजी हुवे तथा नाटक मेला, तमासा मनुष्य को फांसी देता (चोरमारता) देखे उसकी क्रिया लागे।

१५ साहत्थिया क्रिया का दो भेद—१ 'जीव साहत्थिया'-जीवने खुदरे हाथ से पकड़ कर हणे (मारे) उसकी क्रिया लागे। २ 'अजीवसहत्थिया' तलवार, वन्दुक आदि पकड़-कर हणे (मारे) उसकी क्रिया लागे।

१६ नेसत्थिया क्रिया उसका दो भेद—१ 'जीव नेसत्थिया'-जीव में जीव नांखने से जैसे वनस्पति में पाणी फेंके अथवा गुरु चेलाने दूसरे सन्तों के पास व्यावच में भेजे या पुत्र को पिता दूसरी जगह भेजे या निकाल दे (वियोग से जीव खेद पावे याने दुःख पावे) उसकी क्रिया लागे।

२ 'अजीव नेसत्थिया'-पत्थर, तीर धनुष इत्यादि फेंकवा से क्रिया लागे।

१७ आणवणिया क्रिया का दो भेद—१ 'जीव आणवणिया' २ 'अजीव आणवणिया'

जीव अजीव वस्तु कोईके पास से मंगावा से देवे। या नहीं देवे, उस पर रागद्वेष उपजे जीसको क्रिया लागे।

१८ वेदारणिया का दो भेद—१ जीव वेदारणिया अजीववेदारणिया जेसे सुपारी का दो टुकडा करे। जीव अजीव को काटे तथा जाणे जे जाणे की आज्ञा देवे तथा उनका अदातागुण करके वेचे तथा हिंसाकारक दलाली करे।

१९ अणाभोगवत्तिया का दो भेद—१ अणाउत्त आयणता—असावधानपणे से वस्त्रादिक को ग्रहण करे वा पहिरे उसकी क्रिया लागे। २ 'अणाउत्तधम्मज्जणता' उपयोग विना पात्रादिक पुंजे उसकी क्रिया लागे। उपयोग विना शून्यपणे तथा अज्ञानतासे लागे।

२० अणवकंखवत्तिया का दो भेद—१ 'आयसरीरअणवकंखवत्तिया' खुद के शरीर से पाप लागे वेसा काम करे आपघात करे उसकी क्रिया लागे। २ 'पर शरीर अणवकंखवत्तिया—दूसरा का शरीर से पाप लागे वैसा कर्म करे परघात करे उसकी क्रिया लागे। इहलोक

वा परलोक से विरुद्ध काम करे। इहलोक में निंदा हुवे परलोक में विगाडे वैसा काम करे।

२१ पेज्जवत्तिया का दो भेद–१ 'मायावत्तिया'-कपटाई से राग धरे उसकी क्रिया लागे। २ 'लोभवत्तिया'–लोभ से राग धरे उसकी क्रिया लागे।

२२ दोषवत्तिया का दो भेद–१ 'कोहे' क्रोध से क्रिया लागे २ 'माणे' मानसे क्रिया लागे।

२३ पउग्ग क्रिया का तीन भेद १ मणपउग्ग। २ वयपउग्ग। ३ कायपउग्ग। मन वचन काया का जोग से कर्म ग्रहण करे याने शुभ अशुभ प्रवर्तावे।

२४ सामुदाणिया क्रिया का तीन भेद–१ 'अणंतरसामुदाणिया' काल में छेटी पडी जावे और काल में छेटी नहीं पडे दोनों साथ। प्रयोग क्रिया द्वारा ग्रहण क्रिया कर्म सामुदाणि से खीच्चा उन कर्मों का भेद चार प्रकार से करे १ प्रकृतिपणे २ स्थितिपणे ३ अनुभागपणे ४ प्रदेशपणे, दृष्टान्त जैसे मेदा को आलोय कर लोघो बनायो जब तो प्रयोग क्रिया लागे और पीछे लोघाने लेकर पेटो, निमकी, खाजा इत्यादिक नाना प्रकार

पणे बनाया जब सामुदाणी क्रिया लागे। (पहले के समय भेद करे अवान्तर क्रिया दूजे समय तीजे समय भेद करे तव परंपर क्रिया)।

२५ 'इरियावहिया क्रिया'—वीतरागी तथा केवली ने पहेले समय में लागे दूजे समय वेदे तीजे समय निर्जरे।

श्रावक की ग्यारह पडिमा

अव श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का वर्णन करते हुए सूत्रकार प्रथम प्रतिमा का वर्णन करते हैं—'सव्वधम्मरुइ' इत्यादि।

मूलम्—अह पढमा उवासगपडिमासव्वधम्मरुइ यावि भवइ। तस्स णं बहुइं सीलवयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं नो सम्मं पट्ठविय पुव्वाइं भवंति। एवं दंसणवासगा भवइ। इमा पढमा उवासगपडिमा १ ॥१८॥

अर्थ—पहली उपासक प्रतिमा में उपासक को क्षान्ति आदि सर्व धर्मों में प्रीति होती है। यहां चकार वाक्यालङ्कार में है, अपि शब्द से धर्म में दृढता और सद्गुण में रुचिवाला होता है। किन्तु उस क्रियावादी उपासक के बहुत से शील, व्रत, गुण, विरमण, प्रत्याख्यान, पोषधोपवास आदि ग्रहण किये हुए नहीं होते हैं। शील—शब्द से सामायिक, देशावकाशिक, पोषध, अतिथिसंविभाग, ये चार लिये जाते हैं। व्रत से पांच अणुव्रत, गुण से तीन गुणव्रत लिये जाते हैं। विरमण-मिथ्यात्व से निवृत्ति करना। प्रत्याख्यान-पर्व-दिनों में निषिद्ध वस्तु का त्याग करना। पोषधोपवास-'पोषं धत्ते' इस व्युत्पत्ति से धर्म की वृद्धि को जो करता है वह पोषध कहाजाता है, अर्थात् चतुर्दशी, अमावास्या, अष्टमी, पूर्णिमा आदि पर्वदिनों में अनुष्ठान करने योग्य व्रत को पोषध कहते हैं। वह आहारत्याग १, शरीरसत्कारत्याग २, ब्रह्मचर्य ३, अव्यापार ४, इन भेदो से चार प्रकार का है। ऐसे नियमरूपी पोषध में, अथवा पोषध के साथ जो उपवास हो इस

को पोषधोपवास कहते हैं। ये सब उनको सर्वथा नहीं होते हैं। इस प्रकार प्रथम-प्रतिमाधारी दर्शन-श्रावक होता है। सम्यक्श्रद्धानरूप यह प्रथम उपासक प्रतिमा है, यह प्रतिमा एक मास की होती है।१८।

अब दूसरी उपासक प्रतिमा का वर्णन करते हैं—'अहावरा दोच्चा' इत्यादि।

मूलम्—अहावरा दोच्चा उवासगपडिमा, सव्वधम्मरूइ यावि भवइ। तस्स णं बहुइं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं सम्मं पट्ठवियाइं भवंति। से णं सामाइय देसावगासिय नो सम्मं अणुपालित्ता भवइ। दोच्चा उवासगपडिमा २॥१९॥

अर्थ—दूसरी उपासक प्रतिमा—व्रतप्रतिमा का निरूपण किया जाता है—दूसरी प्रतिमा वाले श्रावक की क्षान्त्यादि सर्व धर्म में रुचि होती है, और वह शीलव्रत आदि को सम्यक्रूप से धारण करता है किन्तु वह सामायिक और देशावकाशिक का सम्यक्

पालन नहीं करता है। सामायिक-समस्य आयः समायः। सम-रागद्वेषरहित सर्वभूतों को आत्मवत् जाननेरूप आत्मपरिणाम, उसका आय-बढते हुए शरद् ऋतु के चन्द्रकला के समान प्रतिक्षण विलक्षण ज्ञानादि का लाभ, अथवा समता से होनेवाली प्रतिक्षण में अपूर्व २ कर्मनिर्जरा के कारणरूप शुद्धि का लाभ। वही जिसका प्रयोजन हो उसको सामायिक कहते हैं। कहा भी है—

'सामायिकं गुणानामाधारः खमिव सर्वभावानाम्।
न हि सामायिकहीना, श्चरणादिगुणान्विता येन ॥१॥
तस्माज्जगाद भगवान्, सामायिकमेव निरूपमोपायम्।
शारीरमानसानेकदुःखनाशस्य मोक्षस्य' ॥२॥ इति ॥

सामायिक सब गुणों का आधार है, जैसे सब भावों का आधार आकाश है। सामायिकहीन को चारित्र आदि गुण नहीं होते हैं ॥१॥ अतः भगवान् ने सामायिक को

ही सकल दुःख का विनाशक मोक्ष का निरूपम उपाय कहा है ॥२॥

सामायिक का विवरण विस्तार से उपासकदशाङ्गसूत्र की अगारधर्मसंजीवनी टीका से जान लेना। यद्यपि श्रावक के लिये बारह व्रतों का सम्यग् आराधन करना आवश्यक है तो भी वह सामायिक व्रत और देशावकाशिक व्रत का सम्यक्तया शरीर से आराधन नहीं कर सकता है। इस दूसरी प्रतिमा—व्रत प्रतिमा का दो मास में सम्पादन होता है ॥१९॥

अब तृतीय उपासक प्रतिमा का वर्णन करते हैं—'अहावरा तच्चा' इत्यादि।

मूलम्—अहावरा तच्चा उवासगपडिमा। सव्वधम्मरूई यावि भवइ। तस्स णं बहूइं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं सम्मं पट्ठवियाइं भवंति से णं सामाइयं देसावगासियं सम्मं अणुपालित्ता भवइ। से णं चउद्दसिअट्ठमिउद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहोववासं नो सम्मं अणुपा-

लिता भवइ। तच्चा उवासगपडिमा ३ ॥२०॥

अर्थ--अब तिसरी प्रतिमा का निरूपण करते हैं--उसको क्षान्त्यादि सर्व धर्म में रूचि होती है, इत्यादि पूर्ववत् समझना चाहिये। उसके शील व्रत आदि धारण किये हुए होते हैं। वह सामायिक व्रत और देशावकाशिकव्रत का सम्यक् पालन करता है परन्तु चतुर्दशी अष्टमी अमावास्या और पौर्णमासी, इन तिथियों में पोषधोपवास का सम्यक् पालन नहीं करता है। यह तीन मास की प्रतिमा है ३ ॥२०॥

अब चौथी उपासकप्रतिमा का वर्णन करते हैं--'अहावरा चउत्थी' इत्यादि।

मूलम्--अहावरा चउत्थी उवासगपडिमा सव्वधम्मरूई यावि भवइ। तस्स णं बहुइं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं सम्मं पट्ठवियाइं भवंति। से णं सामाइयं देसावगासियं सम्मं अणुपालिता भवइ। से णं

चउद्दसिअट्ठमिउद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालिता भवइ। से णं एगराइयं उवासगपडिमं नो सम्मं अणुपालिता भवइ। चउत्थी उवासगपडिमा ४ ॥२१॥

अर्थ--अब तृतीय प्रतिमा का निरूपण करने के बाद चतुर्थी उपासकप्रतिमा का निरूपण किया जाता है–उसके क्षान्त्यादि सर्व धर्म में रुचि होती है तथा आत्मा में बहुत से शील, व्रत, गुण, विरमण, प्रत्याख्यान, पोषधोपवास, सम्यक्रूप से ग्रहण किये हुए होते हैं। वह सामायिक व्रत और देशावकाशिक व्रत का सम्यक् पालन करता है। और चतुर्दशी अष्टमी अमावास्या पौर्णमासी तिथियों में प्रतिपूर्ण पोषध का सम्यक् अनुपालन करता है किन्तु जिस दिन में उपवास करता है, उस दिन में 'एकरात्रि की' उपासक प्रतिमा की सम्यक् आराधन नहीं करता है। चतुर्थी उपासक प्रतिमा चार महीने की है ४ ॥२१॥

अब पांचवी उपासकप्रतिमा का वर्णन करते हैं—'अहावरा पंचमी' इत्यादि।

मूलम्—अहावरा पंचमी उवासगपडिमा। सव्वधम्मरूई यावि भवइ। तस्स णं बहुइं सीलव्वय जाव सम्मं अणुपालिता भवइ से णं सामाइयं तहेव से णं एगराइयं उवासगपडिमं सम्मं अणुपालिता भवइ। से णं असिणाणए, वियड-भोइ, मउडिकडे, दिया बंभयारी, रत्ति परिमाणकडे। से णं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे, जहन्नेणं एगाहं वा दुवाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं पंचमासं विहरइ। पंचमा उवासगपडिमा ५॥२२॥

अर्थ-अब पांचवीं प्रतिमा कहते हैं—इस प्रतिमावाले की क्षान्त्यादि सर्व धर्म विषयक रुचि होती है। उसके शील आदि व्रत ग्रहण किए रहते हैं। वह सामायिक और देशावकाशिक व्रत की भली-भांति आराधना करता है। चतुर्दशी आदि पर्व दिनों में

पोषधव्रत का भी अच्छी प्रकार पालन करता है। एक रात्रि की उपासक प्रतिमा का भी सम्यक् प्रकार से पालन करता है। वह स्नान नहीं करता, रात्रिभोजन का त्याग करता है। धोती की एक लांग खुली रखता है। दिन में ब्रह्मचारी रहता है और रात्रि में मैथुन का परिणाम करनेवाला होता है। इस प्रकार विचरता हुवा कम से कम एक दिन या तीन दिन से लेकर अधिक से अधिन पांच मास तक विचरता है इस का यह तात्पर्य है कि-यह प्रतिमाधारी जो कालधर्म को प्राप्त हो जाय अथवा दीक्षा ले ले तो प्रतिमापालन भङ्गरूप दोष उसको नहीं लगता है। और यदि जावजीव भी इस प्रतिमा का पालन करे तो भी दोष नहीं है। यह प्रतिमा पांच मास की होती है ५ ॥२२॥

अब छठी उपासकप्रतिमा का निरूपण करते हैं–'अहावरा छट्ठी' इत्यादि।

मूलम्–अहावरा छट्ठी उवासगपडिमा। सव्वधम्मरूई यावि भवइ, जाव से णं एगराइयं उवासगपडिमं अणुपालिता भवइ से णं असिणाणए, वियड–

मोइ मउलिकडे, दिया वा राओ वा बंभयारी, सचित्ताहारे से अपरिण्णाए भवइ। से णं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे जहन्नेणं एगाहं दुयाहं वा जाव उक्कोसेणं छम्मासे विहरेज्जा। छट्ठी उवासगपडिमा ६ ॥२३॥

अर्थ--अब पांचवीं प्रतिका के बाद छठी प्रतिमा का निरूपण किया जाता है। जैसे कि जो छट्ठी प्रतिमा ग्रहण करता है उसकी सर्वधर्मविषयक रुचि होती हैं। 'यावत्' शब्द से उसकी आत्मा में अनेक शील, व्रत, गुण, विरमण, प्रत्याख्यान, पोषधोपवास सम्यक् ग्रहण किये हुए होते हैं। वह सामायिक व्रत का और देशावकाशिक व्रत का सम्यक् अनुपालन करता है। चतुर्दशी आदि तिथियों में प्रतिपूर्ण पोषध का सम्यक् अनुपालन करता है। तथा एकरात्रि की उपासकप्रतिमा का पालन करता है स्नान नहीं करता है। रात्रिभोजन नहीं करता है। धोती की एक लांग खुली रखता है। दिन और रात्रि में ब्रह्मचर्यव्रत पालन करता है। इसके औषध आदि सेवन के अथवा दूसरे कारणवश

सचित्ताहार का त्याग नहीं होता है, अर्थात् विना कारण सचित्त आहार का त्याग होता है। वह उपासक इस प्रकार के नियम से जघन्य एक दिन दो दिन तीन दिन और उत्कृष्ट छः मास तक रहता है। यह छठी उपासकप्रतिमा छह महिने की होती है ६ ॥२३॥

अब सातवीं उपासकप्रतिमा का वर्णन करते हैं–'अहावरा सत्तमा' इत्यादि।

मूलम्–अहावरा सत्तमा उवासगपडिमा सव्वधम्मरूई यावि भवइ। जाव ओवरायं वा बंभयारी सचित्ताहारे से परिण्णाए भवइ। आरंभे से अपरिण्णाए भवइ। से णं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे जहन्नेण एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा जाव उक्कोसेण सत्तमासं विहरेज्जा। से तं सत्तमा उवासगपडिमा ७ ॥२४॥

अर्थ–अब छट्ठी प्रतिमा के बाद सातवी प्रतिमा का निरूपण करते हैं, जैसे कि-उसकी सर्वधर्म में रुचि होती है। शील, व्रत, गुण, आदि पूर्ववत् जानना। रात्र्यपरात्र–अहो-

रात्र, अर्थात् रात और दिन सदैव ब्रह्मचारी रहता है। उसके अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य इन चार प्रकार के सचित्त आहार त्याग होता है। अशन में चना आदि, तथा अपक्व और दुष्पक्व औषधि आदि, पान में सचित्त जल तथा तत्काल में डाले हुए सचित्त लवण आदि से मिश्रित, खाद्य में लकडी और खरबूजा आदि, स्वाद्य में दन्त-धावन (दतवन) ताम्बूल, हरडे आदि आहार सचित्त आहार कहा जाता है। वह इन सब का परित्याग करता है, तथा आरम्भ-पचन पाचन आदि सावद्य व्यापार का कराना और अनुमोदन आदि का त्याग नहीं करता है। वह इस वृत्ति से जघन्य एक दिन दो दिन या तीन दिन तक उत्कर्ष से सात महीने तक विचरता है। यह सातवीं उपासक प्रतिमा सात मास की होती है ७ ॥२४॥

अब आठवीं उपासकप्रतिमा का निरूपण करते हैं–'अहावरा अट्ठमा' इत्यादि।

मूलम्–अहावरा अट्ठमा उवासगपडिमा। सव्वधम्मरुई यावि भवइ। जाव

राओवरायं बंभयारी। सचित्ताहारे से परिण्णाए भवइ। आरंभे से परिण्णाए भवइ। पेसारंभे अपरिण्णाए भवइ से णं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे जाव जहन्नेण एगाहं दुयाहं तियाहं वा जाव उक्कोसेण अट्ठ मासे विहरेज्जा से तं अट्ठमा उवासगपडिमा८ ॥२५॥

अर्थ- अब आठवीं प्रतिमा की प्ररूपणा करते हैं--इस प्रतिमा को धारण करनेवाले की सर्वधर्म विषयक रुचि होती है, वह यावद् रात्रि और दिवस में ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करता है। सचित्त आहार का परित्याग कर देता है। वह स्वयं आरम्भ–कृषि, वाणिज्य आदि सावद्य व्यापार का परित्याग करता है किन्तु दूसरों भृत्य आदि से आरम्भ कराने का परित्याग नहीं करता है। उपासक की आठवीं प्रतिमा में स्वयं किये हुए आरम्भ का ही त्याग होता हैं, प्रेष्यारम्भ का अर्थात् दूसरे से आरम्भ कराने का त्याग नहीं होता।

प्रेष्यारम्भ में यह विशेषता जाननी चाहियेः—

प्रेष्यारम्भ इस प्रकार का होना चाहिये कि जिस में आत्मा का तीव्र परिणमन हो। वह भी जीवननिर्वाह का दूसरा उपाय न होने के कारण मन्द मन्दतर परिणाम से अप्रत्याख्यान है। उस में भी अपने या दूसरे के लिये आरम्भ में प्रवृत्त हुए प्रेष्य की प्रेरणा करे, किन्तु अपने लिए नया आरम्भ नहीं करावे।

यहां शंका होती है कि–स्वयं आरम्भमात्र से निवृत्त होने से क्या लाभ ? क्यों कि जो दोष स्वयं आरम्भ करने में होता है वही दोष प्रेष्य--भृत्य दास आदि के द्वारा कराने में भी होगा।

उत्तर में कहा जाता है कि–जो सर्वथा सम्पूर्णरूप से निर्दय कठोर, तीव्ररूप परिणाम की धारा स्वयं किये जाने वाले आरम्भ में होता है, वैसी प्रेष्यारम्भ में नहीं होती। जैसे बडे वेग से दौडने वाला पुरुष कोई पत्थर आदि की ठोकर खाकर गिरता

हुआ मन्दगति से प्रवृति करता है वैसे ही आत्मपरिणाम भी प्रेष्य का सम्बन्ध पाकर मन्द हो जाते हैं और वह विचार करने लगते हैं कि–'अहो ! यह जीवन का निर्वाह आरम्भमय है, और आरम्भ दुर्गति का हेतु होने से सर्वथा हेय–त्याज्य है, तब मैं जीवन निर्वाह कैसे करूँ ?' ऐसा विचार कर भृत्यों की प्रेरणा करते समय ही अपने आत्मपरिणाम शिथिल हो जाते हैं।

कोई कहते हैं कि–स्वयं एक होने से और विवेकपूर्वक कार्य करने वाला होने से स्वयंकृत आरम्भ अल्प है और प्रेष्यद्वारा कराया हुआ महा आरम्भ है, क्योंकि–प्रेष्य–अपने से भिन्न होने के कारण समस्त संसार के सभी प्रेष्यों का ग्रहण हो जाता है और वे विवेकपूर्वक कार्य भी नहीं कर सकते हैं। जो ऐसा कहते हैं वह ठीक नहीं है, क्यों कि उसमें आरभ्भ के प्रति कर्त्ता का व्यापार साक्षात् कारण होने से, तीव्रतर परिणाम होते हैं अतः कारित आदि की अपेक्षा स्वयंकृत आरम्भ ही महा आरम्भ है।

कारित आदि आरम्भ इस से अधिक तीव्र नहीं है।

स्वयंकृत आरम्भ महा आरम्भ होने के कारण ही त्रिविध करणों में भगवान ने इस को ही प्रथम कहा है। और इसके फल का उपभोग भी कारित आदि की अपेक्षा अत्यन्त कटु है। जैसे तण्डुलमत्स्य स्वयं कारणरूप तीव्र परिणाम मात्र से ही सप्तम सातवें नरकगामी होता है। अतः सबसे प्रथम उसका ही प्रत्याख्यान करना उचित है। इसी आशय से भगवान् ने सामायिक प्रतिज्ञा में इस प्रकार कहा है—'करेमि भंते। सामाइयं' इत्यादि। यहां स्वयंकृत सावद्ययोग का प्रथम प्रत्याख्यान करने के लिये पहले 'न करेमि' ऐसा ही कहा किन्तु 'न कारयामि' ऐसा नहीं कहा। अत एव भगवान् ने इस सूत्र में आठवीं प्रतिमा का निरूपण करते समय 'आरंभे से परिण्णाए भवइ' इस वचन से स्वयंकृत आरम्भ का ही प्रत्याख्यान कहा है किन्तु प्रेष्यारम्भ का नहीं। इस से विरुद्ध निरूपण करने से उत्सूत्र प्ररूपणा का दोष आवेगा, और इस से अनन्त

संसार की प्राप्ति होगी।

वह उपासक ऐसा करता हुआ जघन्य एक दिन दो दिन अथवा तीन दिन और उत्कृष्ट आठ मास तक रहता है। यह आठवीं प्रतिमा आठ महीने की होती है ८ ॥२५॥

अब नववीं प्रतिमा का निरूपण करते हैं—'अहावरा नवमा' इत्यादि।

मूलम्—अहावरा नवमा उवासगपडिमा। सव्वधम्मरुई यावि भवइ। जाव राओवरायं बंभयारी। सचित्ताहारे से परिण्णाए भवइ। आरंभे से परिण्णाए भवइ। पेसारंभे से परिण्णाए भवइ। उद्दिट्ठभत्ते से अपरिण्णाए भवइ। से णं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे जहन्नेण एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेण नवमासे विहरेज्जा से त्तं नवमा उवासगपडिमा ९ ॥२६॥

अर्थ—आठवीं प्रतिमा के बाद नववीं प्रतिमा का निरूपण करते हैं—यह सर्व धर्म

में रुचि वाला होता है। रात्रि और दिवस में ब्रह्मचर्य पालता है। सचित्ताहार का प्रत्याख्यान करता है। कृषि वाणिज्य आदि आरम्भ का परित्याग करता है। भृत्य आदि अन्य द्वारा आरम्भ कराने का परित्याग करता है, परन्तु उसके उद्दिष्टभक्त—उसके लिए बनाये गये आहार आदि का परित्याग नहीं होता है। वह इस प्रकार से जघन्य एक दिन दो दिन तीन दिन और उत्कृष्ट नव मास पर्यन्त विचरता है। यह नववीं प्रतिमा नौ महीने की होती है ९॥२६॥

अब दशवीं प्रतिमा का वर्णन करते हैं—'अहावरा दसमा' इत्यादि।

मूलम्—अहावरा दसमा उवासगपडिमा। सव्वधम्मरुई यावि भवइ। जाव उद्दिट्ठभत्ते से परिण्णाए भवइ। से णं खुरमुंडए वा सिहधारए वा। तस्स णं आभट्ठस्स समाभट्ठस्स वा कप्पंति दुवे मासाओ भासित्तए, जहा जाणं वा जाणं अजाणं वा णो जाणं। से णं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे जहन्नेणं

एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेण दस मासं विहरेज्जा। से त्तं दसमा उवासगपडिमा १० ॥२७॥

अर्थ—नववीं प्रतिमा का निरूपण हुआ। अब दशवीं प्रतिमाका निरूपण करते हैं—यह सर्व धर्म में रुचि रखता है यावत् इस के उद्दिष्टभक्त अर्थात् भक्त प्रतिमा बाले के लिये बनाये हुए आहार का भी परित्याग होता है। क्षुरमुण्डित होने अथवा केश 'रखे, इस दशमी प्रतिमाधारी का किसी द्वारा एक बार या अनेक बार पूछे जाने पर दो भाषा बोलनी कल्पे, अर्थात् किसी पूछने पर जानता हो तो 'मैं जानता हूँ' ऐसा कहे, अगर न जानता हो तो मैं नहीं जानता हूँ ऐसा कहे। वह उपासक इस रीति से विचरता हुआ जघन्य एक दिन दो दिन अथवा तीन दिन तक और उत्कृष्ट दश मास तक इसका अराधन करे। यह दशवीं प्रतिमा दश मास की होती है १० ॥२७॥

अब ग्यारहवीं प्रतिमा का निरूपण करते हैं-'अहावरा एगारसमा' इत्यादि।

मूलम्-अहावरा एगारसमा उवासगपडिमा। सव्वधम्मरुई यावि भवइ। जाव उद्दिट्ठभत्तं से परिण्णाए भवइ। से णं खुरमुंडए वा लुंचियसिरए वा, गहियायारभंडगनेवत्थे। जे इमे समणाणं निग्गंथाणं धम्मे पण्णत्ते, तं सम्मं काएणं फासेमाणे, पालेमाणे पुरओ जुग्गमायाए पेहमाणे, दट्ठूण तसे पाणे उद्धट्टु पाए रीएज्जा, साहट्टु पाए रीएज्जा, तिरिच्छं वा पायं कट्टु रीएज्जा सति परक्कमे संजयामेव परिक्कमेज्जा, नो उज्जुयं गच्छेज्जा। समणभूए से। केवलं से नाइए पेज्जबंधणे अवोच्छिन्ने भवइ। एवं से कप्पइ नायवीहिं पत्तेउं ११ ॥२८॥

अर्थ-दशवीं प्रतिमा का निरूपण करके अनन्तर ग्यारहवीं प्रतिमा का निरूपण

किया जाता है—यह सर्वधर्मविषयक रुचि वाला होता है यावत् उद्दिष्ठभक्तका परित्याग करता है। क्षुरमुण्डित होता है, अथवा केशो का लुञ्चन करता है। वह साधु जैसा आचार अर्थात् साधु के समान आचार और वेष—वस्त्र, पात्र और यथाकल्प डोरे के साथ मुखवस्त्रिका, रजोहरण एवं प्रमार्जिका, चद्दर, चोलपट्ट, शय्या, संस्तारक आदि को धारण करके श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए भगवानने जैसा धर्म बताया है, वैसे धर्म का सम्यक्तया काय से स्पर्श करता हुआ और पालन करता हुआ चलते समय आगे युग्ममात्र—झुसरा प्रमाण भूमि को देखता हुआ द्वीन्द्रिय आदि प्राणियों को देख कर पैर को जीव की रक्षा के लिये उठा कर चले। एवं जीव की रक्षा के लिये पैर को संकुचित करके चले और टेढा करके चले किन्तु जीवसहित मार्ग पर सीधा न चले। यह विधि दूसरा मार्ग हो तो ईर्यासमिति के अनुसार दूसरे मार्ग से चले, अर्थात् जिस प्रकार जीव रक्षा हो वैसे चलना चाहिये। यह प्रतिमाधारी श्रावक श्रमणभूत—साधु सदृश होता है

किन्तु इसके केवल ज्ञातिवर्ग से प्रेमबन्धन का व्यवच्छेद नहीं होता है। वह स्वज्ञाति में ही भिक्षावृत्ति के लिए जाता है ११ ॥२८॥

(दर्शनना पांच अतिचार)

दंसण—सरधवुं, श्रद्धा समकित साचु सत्य परमत्थ—परमअर्थ, जीवादिक नव तत्वना पदार्थनो संथवो वा—परिचय करवो अभ्यास करवो तथा सुदिठ—भला दिन छे सारी दृष्टिये जोया छे परमत्थ—सूत्रना अर्थ सिद्धांत वचन सेवणा—(एवा गुरुजीनी सेवा भक्ति करवी) वा वि--अथवा वळी वावन्न समकित पामीने वमी गया चारित्रथी खसी गया एवा कुदंसण--(वळी) कडुदर्शन जेनुं छे एवा मूळथी जेओ समकित पाम्या नथी एवा मिथ्या (विवज्जणा--वर्जवा) (एवानो) संग न करवो य समस्त सद्रहणा एवी समकितनी श्रद्धा (उपर कह्या) मुजब चार बोले करी समकितनी श्रद्धा राखवी तेज समकित) एवा समकितना (समणोवासएणं--एहवा समकितना व्रत धारणहार श्रमणोपासक श्रावकने

समत्तस्स--समकितना पंच अइयारा--पांच अतिचार (पेयाला म्होटा जाणियव्वा) जाणवा (पण न समायरियव्वा--नहि आचरवा योग्य) संका (१) जीन वचनमां सत्य असत्यनी शंका राखी होय कंखा (२) बीजा मार्गनी इच्छा राखी होय वितिगिच्छा (३) जैन धर्मनी करणीना फलनो संदेह राख्यो होय परपासंड परसंसा (४) बीजा मिथ्यात्वी मतनो संग कीधो होय ए रीते दर्शन (समकित) ना पांच अतिचार माहेलो कोइ दोष लाग्यो होय तो

बारह व्रत

मूलम्–पहिला अणुव्रत—थूल पाणाइवायाओ वेरमणं त्रसजीव बेइंदिय, तेइंदिय, चउरिंदिय, पंचेंदिय, जानके पहिचानके, संकप्पओ हणण हरणावण पच्चक्खाण, ससरीर सविसेस पीडाकारणी ससंबंधि सविसेस पीडाकारणी सावराहिणे वा वज्जिउण, जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा ऐसे पहिले

स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत के पंच•अइयारा पयाला जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा बंधे, वहे, छविच्छेए, अइमोर, भत्तपाण वुच्छेए।

अर्थ-प्रथम प्राणातिपात विरमण व्रत–सूक्ष्म, एकेन्द्रिय, बेइंदिय तेइंदिय, चउरिंदिय और पंचिंदिय जीवने जानकर पहिचान कर अपने मारने की बुद्धि से हणवा, हणावानां पच्चक्खाण। दुर्भावनावश हिंसा करनी नहीं, करवानी नहीं.

आगार–कोई खूनी मनुष्य अथवा हिंसक पशु खुदकी या दूसरे की जान लेने पर बाध्य हो जाय उस वक्त अपने प्राण बचाने के लिये या अनुकंपा से दूसरे के प्राण बचाने के लिये उसको शिक्षा देने के लिये ऐसा मार्ग अपनाना पडे। कोई मनुष्य बलात्कार से किसी के शील को हानि पहूंचाने पर या उसके जानमाल लूटने पर बाध्य होजावे ऐसे बल पर अपराधी को शिक्षा देनी पडे या सजा देनी पडे उसका आगार।

राज्य अथवा सरकार की नौकरी के कारण, सरकार के नियम अनुसार अपराधी

को सजा देनी पडे उसका आगार।

राजा के हुकम से या किसी ऊपर के अमलदार के हुकम से किसी को सजा करनी पडे, करवानी पडे उसका आगार।

अपने शरीर में या किसी अन्य मनुष्य अथवा जानवर के शरीर में कीडे पड गये हो, उन कीडों से शरीर में वेदना होती हो तो वेदना दूर करने के लिये दवा का सेवन करना पडे उसका आगार।

विषयभोग करता, टट्टी-पेशाब करता, थूंकता नाक सिनकता समुर्च्छिमनी विराधना होवे उसका आगार।

रास्ते में चलना, पशुओं को गाडी में जोडकर गाडी चलाना, खेती का काम करना व्यापार होनेके कारण अनाज की, मसालों की तथा अन्य खानेपीने की वस्तुओं की संभाल करते उनको निकालना, फिर भरना, रसोई बनाने के लिये अग्नि चूले-सिगडी

जलाना, नदी नालें पानी के लिये खुदाना, नींदमें करवटे बदलना तथा अन्य क्रिया करते त्रस जीव की हिंसा अथवा विराधना होय उसका आगार। पांच स्थावर के आरंभ की कोई क्रिया करना उसका आगार।

पांच स्थावर की मर्यादा–पृथ्वी–नये मकान बनाने के, पुराने मकानों को गिराकर फिर से बनाना, उसमें मोरी, खिडकी, दरवाजे, टॉड, अलमारी नये बनवाना अथवा टूट-फूट ठीक करवानी पडे तो एक वर्ष में कितने मकानो की संख्या....की मर्यादा

अनाज रखने के लिये या कोई दूसरी वस्तु को जमीन भोंरे में खढा खोदकर उसमें डाटनी पडे तो उसके लिये कितने गज लम्बा....कितने गज चौडा....कितने गज ऊंडा....

कोयला की, पत्थर की खान खोदनी पडे तो मेरे घर उपयोग के लिये जीवन पर्यंत अथवा वर्ष....व्यापार संबंधी एक वर्ष में सीमित संख्या.......!

जमीन में खेती करनी या करवानी पडे तो वर्ष में जमीन की सीमित संख्या वीघा....! सडके बनवाने, नदियो के ऊपर रास्ते के लिये पुल बनवाने पडे तो एक वर्ष में माइल बावडी, कुओ खोदने पडे या खुदवाने पडे तो जीवनपर्यंत के लिये....

कपडे धोनेका सोडा खार एक वर्ष में मण....पापड बनाने का खार एक वर्ष में मण....नमक मण....हिंगलु सेर....फटकडी सेर....सींधानमक सेर....गेरू सेर........ अपने घर के लिये जरूरत पडे तो सचित्त पृथ्वी की बनी हुई चीजों की सीमित संख्या मण....वर्ष एकमें घर-मकान के लिये चूना एक वर्षमां मण....मट्टी के गाडा नं.... कांकरा के गाडा नं....रेती के गाडा नं....सीमेंट....इंट....आटा पीसने की चक्की, पानी भरनेका डोल, छाजला, हमामदस्ता, खरल, चलनी नई लेनी पडे तो सीमित संख्या वर्ष एक में नंग....

आगार—वनस्पति अथवा हरे साग-सब्जी का आरम्भ समारंभ करना, चलते

हुए वस्तु लेना, रखना, छीलते हुए, लपेटते हुए कोई सचित्त वस्तु पृथ्वी की हिंसा हो तो उसका आगार।

पानी की मर्यादा—घर में रोजाना पानी की जरूरत पीने के लिये, नहाने–धोने के लिये पडती है उसके लिये एक दिन में कितना पानी भरना या भरवाना उसकी सीमित संख्या....पानी की जरूरत विवाह में, मेहमानों के लिए अथवा कोई अन्य कार्य के लिये पानी के टांकी की संख्या नंग....कपडों की गांठ बांध कर धोना, नहाना नदी, तालाब, वावडी तथा कुए के पानी से तो महिने में कितने दिन....इसके अलावा अशुची तथा सूतक–स्नान का आगार। खेती करने के लिये पानी निकालना कुएसे पडे उसकी सीमित संख्या दिन में नंग....मकान नया बनवाने में या पुराने मकान की टूट–फूट ठीक करने, कराने में पानी भरना, भरवाना पडे तो दिन में सीमित संख्या

आगार—आग को बुझाने का, कुएं में पडी वस्तु को निकालने का, जानमाल

बचाने का अपनी मर्यादा के अलावा पानी का उपयोग करना पडे उसका आगार। बरसात में चलते हुए, नदी, समुद्र के रास्ते को पार करने के लिये, जानवरों को पानी पिलाते हुए, घरमें गली में, शहर में भरे हुए पानी को निकालना या निकलवाने में जो आरम्भ होय उसका आगार।

आग की मर्यादा—रोजाना के लिए रसोई करनी या करवानी पडे तो एक दिन में कितने चुले–सिगडी नंग....इसके अलावा विवाह तथा अन्य कोई सामाजिक प्रसंग के लिए ज्यादा जरूरत पडे तो आगार। रोजानी रोशनी के लिए दिया बत्ती, लालटेन बिजली के बल्ब जलाने पडे उसकी सीमित संख्या एक दिनमें नंग....इसके अलावा विवाह दीवाली और अन्य महोत्सव पर, या राजा और सरकार के कहने पर अधिक रोशनी करनी पडे उसका आगार। अपनी इच्छा से फटाके जैसी आतिशबाजी फोडनी नहीं। विवाह, दीवाली तथा सरकार के हुकुम पर या बच्चों के लिए फटाके आतिश-

बाजी चलाना, चलवाना पडे तो एक वर्ष में दिन....ठन्डी अधिक पडने पर, प्रसूति के कारण सगडी, हीटर जलाना या जलवाना पडे तो दिन में नंग....कोई कारण विशेष धूप खेनी पडे तो दिनमें....धूप अगरबत्ती, मोमबत्ती जलानी पडे तो दिन एक में नंग.... दियासलाई पेटी आग जलाने के लिए दिन एक में नंग....विवाह, दीवाली प्रसंगे घीका जलाना पडे तो एक दिन में नंग....

आगार—एक जगह से दूसरी जगह आंच रखते हुए आग की ज्वाला का फैलाना, बन्दुक से गोली चलाना अपनी रक्षा के लिए, दवा बनाने के लिए भट्ठी का जलाना, जलवाना, लुहार के यहां कोई काम करना, करवाना, मृत शरीर का अग्नि-संस्कार करना, करवाना इनसे जो हिंसा अग्नि की होती है उसका आगार

वायरा—हवा की मर्यादाः—जिससे वायुकाय कि हिंसा होय ऐसे उपकरणो की सीमित संख्या दिन एक में नंग....झुला नंग....पंखा हाथ का, पंखा बिजली का नंग

हमामदस्ता नंग....रेटीयु नंग....छाजला नंग....झाडू नंग....पालणा नंग....खरल नंग....चकलाबेलन नंग....चलनी नंग....चक्की नंग....हारमोनियमबाजा नंग....पियानो नंग....तार नंग...सारंगी नंग...तबला-ढोलक नंग...गाने बजाने का यंत्र या बाजे नंग...रेलगाडी में बैठना मुसाफरी करना, एक महिने में दिन...हवाईजहाज में उडना एक महिने में दिन...इसके अलावा नियम का उपयोग रखना

आगारः—बच्चों के लिए पतंग उडाना, राष्ट्र के झंडे का लहराना पसीने के लिए हवा करना, कोई वस्तु को एक जगह से दूसरी जगह रखते हुए, शरीर के अंगों से हाथ पैर हिलाने से, ताली तथा चुटकी बजाने से जो वायुकाय की हिंसा होती है उसका आगार।

वनस्पति की मर्यादाः—अपने पालतु जानवरों के लिए हरा घास लाना या दूसरे से मंगवाना पडे तो एक दिन में कितना पोटला नंग ..हरा चारा एक वर्ष के लिए गाडा नंग...खेत में, बगीचा-बाग में सडे हुए को काटना कटवाना पडे तो एक दिन में वीघा...

साग सुखाने के लिए या अचार बनाने के लिए हरा-साग सब्जी लाना पडे या किसीसे मंगाना पडे, छीलनी या छिलवानी पडे तो एक दिन में मण... विवाह अथवा मेहमानों के लिए कमी ज्यादा साग—सब्जी का उपयोग करना पडे उसका आगार।

अचार डालने के लिए एक वर्ष में मण... सुखाने के लिए एक वर्ष में मण... अपने बाग-बगीचे में जो साग-फल फूल लगे हों या लगवाये हों उन में से एक दिनमें कितने मण... अनाज, दाल मसाला पीसना-पिसवाना पडे एक दिन में मण... भूंजना-भुजवांना पडे तो दिन एक में मण... पकाना-पकवाना पडे तो दिन में मण... काटना-कटवाना पडे तो दिन एक में... उगाना-उगवाना पडे तो दिन एक में मण... सफा करना सफाकरवाना पडे तो एक दिन में मण... नारियल बधारना-बधरवाना पडे तो एक दिन में नंग... सुपारी काटनी-कटवानी पडे तो एक दिन में सेर... सचित्त धनिया, जीरा, सोंढ, सोंफ रोजाना काम में लेना पडे तो एक दिन में सेर... अपने

खेत में हुए अनाज को लाना पडे, दूसरों से मंगाना पडे तो एक वर्ष मे मण...

आगारः—पृथ्वी, पानी, अग्नि का आरंभ करते हुए, पृथ्वी पर चलते-फिरते हुए, वस्तुओ लेते-रखते हुए, दुष्काल मे अपनी भूख से पेट को भरने के लिए जो वनस्पति की हिंसा अथवा विराधना होय उसका आगार।

पांच स्थावर की मर्यादा में आगार—ऊपर लिखे मुजब पांच स्थावर की मर्यादा करी है। इसके अलावा पांचवें तथा सातवें व्रत में जो सीमित संख्या करी है उस प्रकार के व्यापार, कारखाने, ठेके अथवा नौकरी में किसी मालिक अथवा उच्च अधिकारी के हुक्म से वह काम करना पडे, अनुकंपा होते हुए पांच स्थावर की हिंसा होय तो उसका आगार। इसी प्रकार जाती, पंचायत या कोई दूसरी संस्था की व्यवस्था करनी पडे या कोई रिस्तेदार के ट्रस्टी बनकर काम करना पडे, कोई कंपनी में भागीदार बनना पडे, उसके शेयर खरीदने पडे, कारखाने बंधवाने पडे, उसके लिए पांच

स्थावरों की हिंसा या विराधना होय तो आगार।

प्रतिज्ञाः—ऊपर लिखे प्रमाणे इस प्रथम व्रत के अनुसार श्रावक या गृहस्थ को दो करण, तीन योग से जीवन पर्यंत इस व्रत का पालन करना, उसके पांच अतिचार का आचरण नहीं करना—इस में भूल—चूक, पराधीनता बुढोप का आगार। कोई भी त्रस जीवों की संकल्प पूर्वक, द्वेष से क्रूरतापूर्वक गाढे बन्धनों से नहीं बांधना। घातक प्रहार या हत्या करनी नहीं। अपने स्वार्थहेतु अङ्गों को काटना—कटवाना, छेदना, छेदवाना नहीं। सामर्थ्य से अधिक वजन किसी पशु पर लादना नहीं। समय पर भोजन—पानी की अंतराय डालना नहीं। किसी की आजीविका में बाधा डालना नहीं।

मूलम्—दूसरा अणुव्रत—थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं कन्नालीक, गवालीक, भोगालीक, नासावहारे थापणमोसो, कूट साक्ष्य इत्यादि स्थूल झूठ बोलने का पच्चक्खाण, जावजीवाए दुविहं, तिविहेण, न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, ऐसे दूजा

स्थूल मृषावाद विरमणव्रत के 'पंचअइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा— सहस्सब्भक्खाणे, रहस्सब्भक्खाणे, सदारमंतभेए, मोसुवएसे, कूडलेहकरणे'।

दूसरा मृषावाद विरमणव्रत—समाज में प्रतिष्ठा तथा प्रेम को ख्याति को नुकसान पहुंचे तथा धर्म और कुल को कलंक लगे और दूसरे का जानी माली नुकसान हो ऐसा झूठ ज्ञानपूर्वक बोलना नहीं, बोलाना नहीं। बडा झूठ पांच प्रकार का है।

(१) कन्या संबंधी—उम्र, गुण, अवगुण गलत बतलाना नहीं (२) गो आदि पशु संबंधी—गुण, दोष मिथ्या बोलना नहीं। (३) भूमि संबंधी—अधिकार जमाने के लिये झूठ बोलना नहीं। (४) किसी की जमा रकम या धरोहर दबाने संबंधी झूठ बोलना नहीं, बोलाना नहीं (५) झूठी साक्षी या मिथ्या लेख संबंधी बोलना नहीं बोलाना नहीं।

आगारः—ऊपर के पांच प्रकार की झूठ में किसी जीवके प्राणों को बचाने के लिए या अधर्मी क्रूर मनुष्य को शिक्षा कराने के लिए असत्य का सूक्ष्म सेवन करना पडे

उसका आगार। आजीविका के लिए, हंसी-मजाक में, क्रोध के कारण, सरकारी नौकरी में सरकार के हुकम के कारण सूक्ष्म असत्य बोलने का आगार।

दूसरे व्रत के पांच अतिचार—विना विचारे किसी दोषारोपण करना नहीं। किसी की गुप्त बात को अचानक प्रकट करना नहीं। किसी भी स्त्री-पुरुष को अपनी गुप्त मंत्रणा को प्रकट करना नहीं। किसी को निरर्थक मिथ्या उपदेश देना नहीं। झूठे लेख लिखना, जाली हस्ताक्षर, मुद्रा, दस्तावेज आदि बनाना तथा बनाके देने का नहीं।

३ तीसरा अणुव्रत—'थूलाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं' अथवा स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत, घर--मकान तोडकर, गांठडी तोडकर, ताले पर दूसरी ताली, चावी लगा-कर माल निकाल लेना रास्ते चलते हुए लोगों को लूट लेना, किसी भी दूसरे की चीज को पडी हुई देखकर उठा लेना और कब्जा कर लेना इत्यादि स्थूल अदत्तादान का पच्चक्खाण किन्तु सगे, सम्बन्धी और व्यापार तथा जंगल में पडी हुई वस्तु जिसका

मालिक निश्चित नही हो उसका आगार रखकर स्थूल अदत्तादान का पच्चक्खाण जावज्जीवाए दुविहं, तिविहेण, न करेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा। ऐसे तीसरे स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत 'समणोवासएणं पंचअइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा तं जहा–तेनाहडे तक्करप्पओगे, विरुद्धरज्जाइक्कमे, कूडतुलकूडमाणे, तप्पडिरूवगववहारे।

मूलम्–तीसरा अदत्तादान विरमण व्रतः—चोरी करने के इरादे से किसी की वस्तु चोरनी नहीं, चुरवानी नहीं किसी दूसरे की वस्तु को, मालसामान को अनीतिपूर्वक दबा लेना नहीं किन्तु कोई उसकी मिल्कत का दुरुपयोग करने से रोके अथवा उसका भला करने की इच्छा से ऐसा करे तो आगार। किसी से घूस रिश्वत लेनी नहीं किंतु न्याय से किसी को लाभ होता है और वह खुश होकर बक्षीस अथवा इनाम दे तो उसका आगार। लेने--देने में भूल से कोई ज्यादा रकम आजाय तो मालिक को वापिस लौटा देनी या धर्मादा में दे देनी किंतु उसको रख लेना नहीं। किसी की

गिरी हुई कीमती वस्तु मिलने पर उसके मालिक को लौटा देना अथवा राजकीय व्यवस्था के अनुसार उसकी कार्यवाही करना।

आगार—किसी संबंधी या मित्र जिसका पूर्ण अपने पर विश्वास हो यदि वह पीछे से खास जरूरत होने के कारण उसका घर खोलकर वस्तु लेवे तो आगार, किंतु उसके मालिक को शीघ्र ही इस चीज को बता देना चाहिए, जाण करा देनी। साधारण वस्तु जैसे कागज, कलम, सुपारी मंजन, दवाई इत्यादि वस्तु का लेना स्थूल चोरी लौकिक व्यवहार में नहीं आती है इसलिये इन वस्तुओं को मालिक की बिना आज्ञा के लेने का आगार। धरती-मकान में छिपाया हुआ धन यदि मिल जावे तो राजकीय कानून से उसकी चोखवट कर लेनी। यदि अपना हक उस धन पर हो जावे और अपने परिग्रह में वह धन ज्यादा होता हो तो उसको धर्म के शुभ कार्य मे उपयोग करना।

तीसरे व्रत के अतिचार—चोर के द्वारा लाई हुई वस्तु रखनी नहीं, रखवानी नहीं ! चोर को चोरी करने में सहायता देना नहीं। राजकीय व्यवस्था के विरुद्ध कार्य करना नहीं ! चालाकी से खोटा नाप तोल रखना नहीं। असली दिखलाकर नकली देना नहीं, मेल–सेल अथवा मिलावट करना नहीं।

चौथा अणुव्रत—थूलाओ मेहुणवेरमणसदारसंतोसिए अवसेसं मेहुणविहिपच्चक्खाणं जावज्जीवाए, दिव्वं–देवता संबंधी दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा तथा मनुष्य, तिर्यंच संबंधी एगविहं एगविहेणं न करेमि, कायसा–ऐसे चौथा स्थूल मेहुण वेरमण वृत पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तंजहा–इत्तरियपरिग्गहियागमणे, अपरिग्गहिया गमणे अणंगकीड़ा, परविवाहकरणे, काम भोगतिव्वाभिलासे !

चौथा मैथुन विरमण व्रत—पंचो की साक्षी से विवाहित पत्नी के साथ महिने

एक में दिवस....के अलावा ब्रह्मचर्य का पालन करना ! इसके उपरांत देवता संबंधी 'दुविहं, तिविहेणं' छः कोटीये' और मनुष्य तिर्यंच संबंधी 'एगविहं, एगविहेणं' एक कोटिये अब्रह्म सेवन करने का पच्चखाण दिन में विषय भोग सेवन करना नहीं ! स्वाभाविक अंगो के अतिरिक्त अन्य अंगो से संभोग करना नहीं, स्वजातिय से संभोग करना नहीं ।

चौथे व्रत के पांच अतिचार—(१)अल्पवयवाली विवाहित पत्नी के साथ मैथुन सेवन करना नहीं ! (२) अविवाहित स्त्री जो थोडे समय के लिये अपने पास रहे उससे भोग करना नहीं ! (३) जिसके अब्रह्म सेवन करने के पच्चखाण हो, उसके साथ काम क्रीडा करनी नहीं ! (४) अपने ऊपर आश्रित संतानों एवं पशुओं के अतिरिक्त अन्य का विवाह आदि करके मैथुन की ओर प्रवृत करना नहीं ! (५) कामोत्तेजक औषधियों तथा पदार्थों का सेवन करना नहीं !

पांचवां अणुव्रत—थूलाओ परिग्गह वेरमण अथवा स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत, धन धान्य यथा परिमाण, क्षेत्र वास्तु यथा परिमाण, हिरण्य सुवर्ण यथा परिमाण, द्विपद चतुष्पद यथा परिमाण, कुप्पश्चतु यथा परिमाण। जो मर्यादा की हो उसके अलावा परिग्रह रखना जावज्जीवाए एगविहं तिविहेणं न करेमि, मणसा, वयसा कायसा—ऐसे पांचवें स्थूल परिग्रह परिमाणव्रत समणोवासएणं पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तंजहा खेत्तवत्थु पमाणइक्कमे, हिरण्ण सुवर्णपमाणाइक्कमे, धन धन्नपमाणइक्कमे, दुपयचउप्पयपमाणइक्कमे, कुवियपमाणाइक्कमे।

पांचवा परिग्रह परिमाण व्रत—उघाडी जमीन, खेत, बाग बगीचा वाडा राखवा पडें तो बीघा....गिरवे रखनी पडे तो वीघा....ढकी हुई जमीन, घर दुकान छोटे, बडे मकानो नंग चांदी के गहणे सोने, के गहणे घर के लिये जीवन पर्यंत के लिये सोने के गहणे बने हुये—सेर....खाली सोना की लगडी या पासा सेर....सोना चांदी

तथा और धातुओं का व्यापार करना पडे तो एक वर्ष में रू....हीरा, माणक, मोती के जेवरात जीवनपर्यंत के लिये रू....व्यापार करना पडे तो एक वर्ष में रू....एकत्रित की हुई रकम अपने जीवन पर्यंत के लिये रू....व्यापार के लिये रूपये व्याज से लेने देने पडे तो वर्ष एक का रू....तक। सब प्रकार का अनाज घर खर्च के रखना पडे तो एक वर्ष में मण....यदि अनाज का व्यापार करना पडे तो एक वर्ष में रू....का व्यापार नौकर चाकर मजदूर रखने पडे तो एक वर्ष में संख्या....

विस्तारपूर्वक गाय....भेंस....बकरी....बैल....घोडा...ऊँट....हाथी...कुत्ते....बक्स... पिटारा....तिजुरी...अलमारी ट्रूक....टेबिल अथवा मेज....छुरा....सरोता डिब्बा–डिब्बी...जस्त की कोठी....मट्टी की झाल मट्टी की मटकी....मट्टी के थैले....मट्टी की टेकरी सोने के बरतन....चांदी के बरतन जरमन सिल्वर के बरतन....कलई किये हुवे बरतन....पीतल के बरतन कांसी के बरतन....लोहे के बरतन पिलेटिनम के बरतन....

एल्युमिनीयम के वरतन....चीनी के बरतन....सब प्रकार के बरतन अपने घर काम के लिये पहिले से जो पास में हों उसका रू....तक। इसके उपरांत नये बरतन लाने पडे तो एक वर्ष में रू....तक।

रथ, तांगा, बग्गी, मोटर पास रखने पडे तो नंग....नाव, आगबोट, वहाण, मछवा रखनेपडे तो नंग...ऊन अथवा रूई की गांसडी बांधने की मील प्रेस रखनी पडे तो नंग....कपडे के व्यापार करना करवाना, व्यापार में एक वर्ष में रू सूत, रूई, ऊन कपासिया का व्यापार एक वर्ष में रू...किराणा, द्वा का व्यापार एक वर्ष में रू...बरतन काच का सामान इत्यादि का व्यापार एक वर्ष में रू...छुटक हर प्रकार का व्यापार करना पडे तो वर्ष एक में... आगार उपरोक्त मर्यादा के अलावा कोई वस्तु लेने में आवे और उसकी मर्यादा में बिकरी होय नहीं तो रखनी पडे। अनुकंपा से किसी मनुष्य अथवा जानवर को रखना पडे, कोई संबंधी या जान-पहिचानवाले

की संपत्ति की व्यवस्था करनी पडे, किसी का ट्रस्टी बनना पडे । पंचायत की मिलकत की देखभाल करनी पडे, निराधार का रक्षण करना पडे, कंपनी में भागीदार रखना पडे शेयर खरीदना पडे । संबंधी अथवा जान पहिचान वाले को व्यापार संबंधी सलाह देनी पडे । किसी भी व्यापार की दलाली करनी पडे, नौकरी करनी पडे । अजीविका के लिये कोई भी योग्य व्यापार करना पडे, इन सबका आगार ।

पांचवें व्रत के पांच अतिचार (१) खुली जमीन जैसे खेत, बाग की खुली जमीन, मकान–दुकान ढकी जमीन की सीमित संख्या उपरांत दूसरे मकान की या जमीन की संख्या की सीमित संख्या में मिलाकर एक करना नहीं । (२) सोना चांदी रखने की मर्यादा उपरांत नये गहने भारी वजन के बनवा कर उसमें गिनती करना नहीं । (३) मुद्राये, रूपये, मोहर आदि तथा खाद्यान्न की मर्यादा के उपरांत दूसरे के नाम लिखना नहीं और खाद्यान्न को दूसरे के यहां खुद सौदा करके रखवाना नहीं ।

(४) पशु, दास नौकर की मर्यादा उपरांत दूसरे के नाम से रखना नहीं, संख्या में हेर फेर करना नहीं। (५) लोहा, ताम्बा, पीतल कमती मूल्य के धातुओं की मर्यादा के अतिरिक्त अधिक रखना नहीं। उनकी कीमत कमती लगाकर मर्यादा का उल्लंघन करना नहीं।

छठादिशापरिमाणव्रत—उड्ढदिशा यथापरिमाण, अहोदिसा यथापरिमाण, तिरियदिसा यथापरिमाण एवं मए यथा परिमाणं' इन किये हुये परिमाण के उपरांत आगे चलकर पांच आश्रव सेवन का पच्चक्खाण, जाव जीवाए, दुविहं, तिविहेणं, न करेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा ऐसे छट्ठे विरमणव्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा—उड्ढदिसिपमाणाइक्कमे, अहोदिसिपमाणाइक्कमे, तिरियदिसिपमाणाइक्कमे, खेत्तवुड्ढी सइ अंतरद्धा।

छट्ठादिशापरिमाणव्रत—अपने स्थान से ऊँची—नीची दिशा अथवा आकाश—पाताल तथा पूर्व पश्चिम आदि चार दिशाये एवं चारों कोणो अर्थात् दशों दिशा की

मर्यादा कर लेना चाहे पैदल चलकर या रेल, मोटर जहाज, नाव में हवाई जहाज में बैठकर जाने का क्षेत्र माइल या गाउ अथवा कोस में ...इसके उपरांत मर्यादित क्षेत्र अपनी इच्छा से अठारह पाप सेवन करने के, सेवन कराने के जीवन पर्यंत के पच्चक्खाण। इसमें कागज या पत्र, तार, टेलीफोन से माल मंगाना पडे, किसी को जाकर लाना पडे, वकील, मुनीम को भेजना पडे, धर्म या परमार्थ के काम जाना पडे इन सबके आगार।

छट्ठे व्रत के पांच अतिचार टालने के—ऊर्ध्व यानि आकाश की तरफ जाने की मर्यादा का उल्लंघन करना नहीं। नीचे यानि पाताल की तरफ कुआ, तलघर आदि में जाकर मर्यादा का उल्लंघन करना नहीं। दशो दिशाओं में मर्यादा का उल्लंघन करना नहीं। एक दिशा का क्षेत्र घटा कर उतना ही दूसरी में बढाना नहीं। दिशाओं के परिमाण को भूलना नहीं।

सातवां अणुव्रत उपभोग–परिभोग परिमाणव्रत—उवभोगपरिभोगविहिं पच्चक्खाएमाणे–१ उल्लणियाविहि, २ दंतणविहि ३ फलविहि ४ अब्भंगणविहि ५ उव्वट्टणविहि, ६ मज्जनविहि ७ वत्थविहि, ८ विलेवणविहि, ९ पुप्फविहि, १० आभरणविहि ११ धूवणविहि १२ पेज्जविहि १३ भक्खणविहि, १४ आदेयविहि १५ सूपविहि १६ विगयविहि, १७ सागविहि १८ माहुरयविहि, १९ जिमणविहि, २० पाणगविहि, २१ मुहवासविहि, २२ वाहणविहि २३ वारणविहि २४ सयणविहि २५ सचित्तविहि २६ दव्वविहि इत्यादि का यथा परिमाण किया है इसके उपरांत उपभोग–परिभोग वस्तु को भोगनिमित्त से भोगने का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए एगविहं तिविहेणं न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा–एवम् सातवां व्रत उपभोग परिभोग दुविहे पण्णत्ते तं जहा–भोयणे य, कम्मणे य, भोयणाओ समणोवासयाणं पंच अइयरा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा–सचित्ताहारे, सचित्तपडिबद्धाहारे, अपोलिओ सहिभक्खणया,

दुप्पोलिओसहिभक्खणया, तुच्छोसहिभक्खणया। कम्मओणं समणोवासएणं पन्नरस कम्मदाणाइं जाणियव्वाइं, न समायरियव्वाइं, तं जहा–इंगालकम्मे, वणकम्मे, साडीकम्मे, भाडीकम्मे, फोडीकम्मे, दंतवणिज्जे, लक्खवणिज्जे, रसवणिज्जे, केसवाणिज्जे, विसवाणिज्जे, जंतपीलणकम्मे, निल्लंछणकम्मे, दवग्गिदावणया कम्मे, सरदहतलाय सोसणया कम्मे, असइजणपोसणयाकम्मे।

सातवां भोगोपभोग परिमाणव्रत—जिस वस्तु का उपयोग एक दफे किया जाय जैसे अनाज फूल–फल इत्यादि उसको उपभोग कहते हैं। जिस वस्तु का उपयोग बारंबार किया जावे जैसे घर, ओढने के कपडे, गहने इत्यादि इसे परिभोग कहते हैं।

इनकी मर्यादा इस प्रकार है। १ गोले शरीर को पोंछने के तौलिये आदि का परिमाण एक दिन में नंग....२ दांत साफ करने के साधनों की मर्यादा एक दिन में...३ नहाने अथवा मस्तक धोने के लिये अरीठा, आंवला, शिकाकाई साबुन, सेम्पो एक

दिन में नंग...शेर ४ शरीर पर मालिस करने का तेल शेर ५ उबटन, साबुन, आटा, छाप, मिट्टी इत्यादि सेर....६ स्नान तथा जल का परिमाण महिने अथवा एक दिन का...इसके अलावा कारण विशेष के आगार । ७। पहिनने, ओढने; बिछाने के वस्त्रों की मर्यादा दिन में नंग....गज....इसके अलावा विशेष कारण से आगार। ८ चन्दन; केसर क्रीम वगैरह शेर ..९ पुष्पों की तम्बाकु सूंघने एक दिन में वजन तोला....१० आभूषणे स्वके अथवा दूसरे के रूपये...तोला...११धूप अगरबत्ती एक दिन में तोला ...१२ गर्म दूध, मावो; रबडी, चाय, काफी आदि एक दिन में सेर—केफी चीज के केफ करना नहीं—विशेष कारण से आगार । १३ पकवानों में मिठाई तरह तरह की खाने के लिये एक दिन में सेर १४ पकाया अथवा उबाला हुआ चावल; खिचडी आदि सेर...१५ दाल; चना; मूंग; मोंठ आदि सेर १६ घी; दूध, दही, तेल आदि विगय सेर...चीनी, गुड, खांड, मक्खन, शहद सेर....१७ हरे शाक—सब्जियों को मर्यादा

एक दिन मे सेर...रस...

हरे शाक सब्जि के नाम—चांवला की फली, गुवार की फली, सेंव की फली, भिन्डी, मटर, तोरई ककडी, घीया तरबूज, करेला बेंगन, टिन्डा, कोला, मोगरी, सींगरी, टमाटर, परवल,

१८ पत्तीहरी का साक—पालक की भाजी, मेथी की भाजी, बथुआ की भाजी, सरसों की भाजी हरे चने के पत्तों की भाजी सूवा की भाजी, कोतमीर या धनिये की भाजी, पोदीने की भाजी पत्तेवाली गोबी

पत्ते हरी सब्जीके—अजवान के पत्ते, भीडीं के पत्ते, तुलसी के पत्ते, अरवी के पत्ते, नागरवेल के पत्ते, मूंगफली के पत्ते, कमल के पत्ते,

फूल—गुलाब के फूल ताजा,

फल के प्रकार—हरा नारियल, हरी मिरच, आनानास, कटारे, कमरख, हरे-

बादाम, अंजीर, हरी सुपारी, अंगूर, हरे छिवारे, हरी सौंफ, सीताफल, सिगांडे, अमरूद, आम, केला, बेर बडे, लालबेर, अनार, जामून, निबू, आंवला, फालसे, नारंगी, चकोवरा, सेव, खरबूजा, बिजोरा, लिसोडा.

गन्ने—गन्ने का रस

बाल—गेहूं की बाजरी की, मक्का की, जुव्वार की बाल

अचार—केरी का अचार या लोंजी, किसमिस–छिवारे का अचार या चटनी, हरी मिरच का अचार, नीबूँ का अचार, बांस का अचार

दांतन—बावल के पेड की दतौन, इमली के पेड की दतौन, बोरडी के पेडकी दतौन, नीम के पेड की दतौन, जामून के पेडे की दतौन

जमीं कन्द या कंदमूल के प्रकार—गाजर, मूली, प्याज, लहसुन, आलू, हलदर, शकरिया अथवा शकरकंदी, सुरण, मूंगफली, रतालू, उपरोक्त लिखे हरी सब्जी

की मर्यादा करी है इसके अलावा किसी कारण विशेष से या सूखी हुई सब्जीयों के मिठाई अथवा किसी खाने की वस्तु में मेवा (सूखा मेवा) मिला हुआ हो, दाल, चटनी का आगार। बदाम, पिस्ता, चिरोंजी सब प्रकार के मेवों का प्रमाण एक दिन में सेर...जिस प्रकार का भोजन खा सकते हों वह शाकाहारी भोजन सब प्रकार का एक दिन का सेर...पानी पीने की मर्यादा दिन एक में सेर...सुपारी, इलायची आदि मुँह साफ करने के लिये दिन एक में सेर...जूते, चम्पल, जुराब खडाऊ आदि एक वर्ष में जोडे...वाहन तीन प्रकार के (१) तांगा बग्गी, रथ, बैलगाडी जिन्हे जानवर खेंचते हैं एक दिन में संख्या....(२) हाथी, ऊँट, घोडे, खच्चर की सवारी करना एक दिन में संख्या....(३) नाव, पानी का जहाज, समुद्र, नदियों को पार करने के लिये एक दिन में संख्या....मोटर, साइकिल, रेलगाडी, विमान एक दिन अथवा एक मास में संख्या....सोने, बैठने के बिस्तर, कुर्शी, टेबिल या मेज, पलंग, तख्त एक

दिन में नंग....पालकी में बैठना पडे तो महिने एक में कितने दफे....सब प्रकार के सचित्त द्रव्य एक दिन में नंग....सचित्त–अचित्त दोनों द्रव्य एक दिन में नंग....इनके उपरांत नियमानुसार छब्बीस बोल की मर्यादा करी है इन मर्यादाओं को श्रावक एक करण तीन योग से ग्रहण करता है पच्चक्खाण करता है। एक दिन की जगह एक महिना या एक वर्ष की मर्यादा कर लेनी। ए मर्यादा खुद के लिये है। सातमें व्रत में बीस अतिचार हैं जिस में भोजन के पांच अतिचार हैं। त्यागी हुई सचित्त वस्तु जब तक अचित्त नहीं हुई हो, तब तक खाने योग्य नहीं है। सचित्त के साथ अचित्त वस्तु लगी हो वह वस्तु खाने के योग्य नहीं है। बिना पकी हुई वस्तु खानी नहीं। आधी कच्ची और आधी पक्की वस्तु खाने का नहीं। असार वस्तु खाने की नहीं कारण कि उसमें खाने का थोडा किंतु फेंकने का ज्यादा होता है।

पंद्रह कर्मादान

१ इंगालकर्म—चुना, इंट, नलिया, कोयला, मिट्टी के वर्तन आदि अग्नि में पकाने से बनते हैं इस प्रकार भट्टी बनाकर पकाने का व्यवसाय नहीं करना। घर के उपयोग के लिये इन चीजों का आगार। कोयले की खान में से कोयला निकलता है उसका व्यवसाय करना पडे तो एक वर्ष में रू....कुंभार, लुहार, सुनार, ठठेरा का व्यवसाय करना पडे या उनके बनाई हुई वस्तुओं का व्यवसाय करना पडे तो एक वर्ष में रू....रूई की मील जीन, कपडे की मील या दूसरे कारखानों में इनके बने हुये सामान का व्यापार करना पडे तो एक वर्ष में रू....

२ वनकर्म--हरेभरे वृक्ष कटवाना, जंगल का ठेका लेना ये व्यवसाय करना नहीं। आजिविका के लिये ऐसे व्यापार करने का पच्चक्खाण। सुखे हुये लकडे का व्यवसाय करना पडे तो एक वर्ष में रू....

३ शकटकर्म—तांगा, रथ, बैलगाडी, थेले आदि वाहनों को बनाकर बेचने का व्यवसाय करना नहीं

४ भाडिकर्म—तांगागाडी, पशुगाडी किराये पर देना नहीं। घर के काम के लिये आगार।

५ स्फोटक-कर्म—वन, पत्थर आदि खोदने तथा चक्की चलाना नहीं। घरके काम में जरूरत पडे तो एक वर्ष में रू....

६ दंतवाणिज्य—हाथी को मार कर उसके दांत का व्यापार करना नहीं। तैय्यार दांत का व्यापार करना पडे तो एक वर्ष में रू....

७ केशवाणिज्य—पशु पक्षी के पंखो का, चर्म का व्यापार करना नहीं। दास, पशु, नौकर आदि का व्यापार करना नहीं।

८ रसवाणिज्य—मदिरा, मक्खन, शहद, मांस, चरबी आदि व्यापार के पच्चक्खाण। घी, तेल, शरबत का व्यापार करने का एक वर्ष में रू....का आगार।

९ लाक्षवाणिज्य–लाख, फटकडी, खार आदि का व्यापार करना नहीं। यदि पहिले से व्यापार इनका करते हो तो एक वर्ष में रू....

१० विषवाणिज्य–अफीम, संखिया आदि जहरीले पदार्थों का व्यापार करना नहीं। अफीम का व्यापार यदि करना पडे तो एक वर्ष में रू....चाकु, छुरी आदि का व्यापार करना पडे तो एक वर्ष में रू....

११ यंत्रपीडन कर्म–तिल, गन्ना, कपास आदि पीलने का व्यापार करना नहीं। जिन्होंने पहिले से इन व्यापार को कर रक्खा हो वे मर्यादा करलें। नये रूप में इन व्यवसाय को नहीं करे। मील, जीन, घाणी, चर्खा नंग....इनमें माल पीलने का मण.... इसके अलावा इन कारखानों को पैसा उधार देना पडे या भागीदारी रखनी पडे तो आगार।

१२ निलम्छन कर्म–मनुष्य या जानवर के अंगों को छेदने का, उनको नपुंसक बनाने का–ऐसे व्यापार करने का पच्चक्खाण। यदि कोई रोग के कारण ऐसा करना

करवाना पडे उसका आगार।

१३ दावाग्निदापन कर्म–जंगल में या अन्य जगह आजिविका अर्थे आग लगाना नहीं।

१४ सरद्रहतालाबशोषण कर्म–तलाव, नदी, सरोवर आदि जलाशय सुखाने का कार्य आजिविका के लिये करना नहीं इसके पच्चक्खाण।

१५ असतीजन पोषण कर्म–शिकार के लिये कुत्ते, बिल्ली आदि हिंसक पशु को रखना नहीं, वैश्या आदि रखना नहीं। अकुकंपा अर्थे रखने का आगार।

इन पंद्रह कर्मादान में यदि किसी को व्यापार करना पडे तो रू....आगार है नौकरी के कारण, सेठ के हुकम से, राजा के हुकम से, दुकाल, विषम विपत्ति के कारण।

व्यसन—खराब व्यसन जुआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, वैश्यागमन करना, परस्त्री से भोग करना, शिकार करना, चोरी करना, गांजा, चरस पीना, नसे के लिये अफीम खाना आदि हैं इन सब व्यसनों को करना नहीं। यदि अफीम, गांजा,

चरस का पहिले से व्यसन हो तो एक महिने में रू....! बीडी, सिगरेट, चिलम, हुक्का पीना नहीं। यदि पहिले से व्यसन हो तो एक दिन में केवल वार....के उपरांत नियम ले लेना।

मूलम्--आंठवा अनर्थदण्ड व्रत--अणट्ठादण्ड वेरमणव्रत चउव्विहे अएत्थदण्डे पन्नत्ते तं जहा--अवज्झाणचरिये, पमायाचरिये, हिंसप्पयाणे, पावकम्मोवएसे, एवं आठवें अणट्ठादण्ड सेवन करने का पच्चक्खाण (जिसमे आठ आगार आए वा, राए वा, नाए वा, परिवारे वा, देवे वा, नागे वा, जक्खे वा, भूए वा, ऐतिएहिं आगारेहिं अणत्थ जावज्जीवाए दुविहं, तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, एवं आठवां अणत्थदंड विरमण व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा--कंदप्पे, कुकुईए, मोहरीए, संजुत्ताहिगरणे, उवभोग परिभोग अईरत्ते।

आठवुं अनर्थदण्ड व्रत--निरर्थक आर्त्त और रौद्र ध्यान में संलग्न होना नहीं। दुःख पडने पर रोना-धोना करना नहीं, लोकाचार प्रमाणे करना पडे इसका आगार,

प्रमादवश दूसरे कि निन्दा करना नहीं, बुरा चिंतववुं नहीं यदि कभि ऐसे विचार हो जाय तो ज्ञानबोध से ऐसे विचारों को मन से दूर हटाना चाहिये और पश्चात्ताप करना चाहिये। खराब ध्यान के कारण आपघात करना नहीं–कुए में पडकर, जहर खाकर या गले में फांसी लगाकर, हीराकणी चूस कर अपना आपघात कभी करना नहीं। किसी को फांसी लगती होय तो वहां देखने जाना नहीं। प्रमादवश निरर्थक जीवहिंसा होय इस प्रकार घी, तेल आदि को खुले रखना नहीं। संमुर्च्छिम उत्पन्न होय इस प्रकार गंदगी करनी नहीं। हिंसाकारी साधनों का संग्रह करना नहीं। बिना कारण किसी को पापकारक उपदेश करना नहीं, गलत सलाह देनी नहीं ! भोगोपभोग की सामग्रियों को जुटाना नहीं।

आठवां अणुव्रत का पांच अतिचार—कंदर्प-व्यर्थ ही कामवासना संबंधी बाते करना नहीं। कामक्रीडा कुचेष्टा करना नहीं। मर्मभेदक वचन बोलना नहीं। हिंसा-

कारक साधनों संग्रह करना नहीं। भोगोपभोग की अधिक वस्तु संग्रह करना नहीं।

नवमां सामायिक व्रत-मूलम्-सव्वसावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि, दुविहं, तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा ऐसी सद्दहण्ण परूपणा करके सामायिक का अवसर आवे सायायिक करूं, तब फरसना करके शुद्ध होऊं, ऐसे नवमें सामायिक व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरिव्वा तं जहा--मणदुप्पणिहाणे काय दुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइ अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया।

नवमां सामायिक व्रत—वर्ष एक में सामायिक करनी रहजाय तो बन सके जहां तक लिये हुये नियमानुसार पूरी करनी चाहिये किंतु उसमें रोग के कारण, बुढापे के कारण, परवशता के कारण का आगार। जहां तक अपनी शक्ति बने छः कोटिये जीवन पर्यंत के लिये इस व्रत के पांच अतिचार टालना चाहिए। मणदुप्पणिहाणे-सामायिकमा मन के दस दोष, वयदुप्पणिहाणे--वचन पापकारी सामायिक में बोले

उसके दस दोष, सामायिक में (कायदुप्पणिहाणे) काया के बारह दोष की पापाकारी प्रवर्ती (सामाइयस्सई अकरणया) सामायिक की स्मृति नहीं रखकर भूल जाना (सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया) अव्यवस्थित रूप से सामायिक करना समय से पूर्व पारना।

शिक्षाव्रतानि (४)

इह संबुता सिक्खा परमपययातिसाहिया किरिया।
तब्बहुलाई वयाइं जाइं सिक्खावयाइं एयाइं ॥१॥
सामाइयं च देसावगासियं पोसहोववासी य। अइहीण संविभागी, इच्चेवं त्ताणि चत्तारि॥२॥

(१ सामायिकव्रतम्)

जो सव्वजीवेसु समाणभावो अरागदोसेण समो इहेसो।
एयस्स आयो कहिओ समायो सामाइयं होइ वयं तयत्थं ॥३॥
चाओ सावज्जजोगाणं णिरवज्जाण सेवणं। आवस्सगं वये अस्सि–मुभयं किंति बुच्चइ ॥४॥

कम्माणं पावहेऊणं कालओ परिवज्जणं। सावज्जजोगसंघाओ णेओ हव्व जिणागमे ॥५॥
सुद्धाणं किरियाणं जं, सव्वहा परिपालणं। तमेयं णिरवज्जक्ख—जोगसेवणमीरियं ॥६॥
समतापतये चऽस्सो—भयस्सावस्सगत्तणं। तम्हा एयं दुगं कल्लं जयणेण समायरे ॥७॥
वोच्छं सामाइस्सास्स वयस्सायरणे विहिं। समणस्संतिए गच्चा कुज्जा सामाइयव्वयं ॥८॥
जं वा पोसहसालाए उज्जाणे वा गिहेवि वा। सुविवित्ते थले ठिच्चा अणुच्चिट्ठे जहिं-कहिं ॥९॥
धओ तरीओ परिहाणवत्थं तहेव मुत्तेगदसं वसाणी।
बद्धुं सदोरं मुहवत्तिमासे पमड्ढभूसंथरियासणट्ठो ॥१०॥
सणमुक्करणो रसा तयाणिं समणं वा जिणमेव वंदिऊणं।
इरियावहिया विहाणजुत्तो समणाणाअ चरे य काउसग्गं ॥११॥
तओ पठिय 'लोगस्स' पाढं सड्ढी समाहिओ। समणस्स मुहा विन्न-सावगस्स मुहा वि वा ॥१२॥
तयभावे सयं वावि पसन्नया वियक्खाणी 'करेमि भंते' इच्चस्स पाठं किच्चा जिइंदिओ ॥१३॥

दोहिं करणओ तीहिं जोएहिं य जहिच्छियं। गिण्हिज्जा समणोवासी वयं सामाइयं सया ।१४।
'णमोत्थु णं'-ति तप्पच्छा दुवारं पपढे सुही। समणं वद्धमाणं वा वंदिऊण तहा पुणो ।१५।
समिइपंचग-गुत्तितिगासिओ ववहरे य मुणीव समाहिओ।
पवयणामियसायवसंगओ णियसरूवविचिंतणतप्परो ॥१६॥
सज्झाय-ज्झाणओ धम्म-चच्चाए य मुहू मुहू।
अणुचिट्ठे वयं सामाइयं दोसविवज्जियं ॥१७॥इति॥

शिक्षाव्रत (४)

परम पद को (मोक्ष) प्राप्त करने की कारणभूत क्रिया को शिक्षा कहते हैं। शिक्षा के लिए व्रत या शिक्षा–प्रधान व्रत शिक्षाव्रत कहलाते हैं, अर्थात् शिक्षाव्रत वे हैं जिन्हे बारम्बार सेवन करना पडता है। शिक्षाव्रत चार है (१) सामायिक (२) देशावकाशिक (३) पोषधोपवास और (४) अतिथिसंविभाग।

(९ वें व्रत का वर्णन)

(१) सामायिक—समभाव का आय (प्राप्त) होना समाय है, और समायके लिए की जानेवाली क्रियाकों सामायिक कहते हैं। समस्त सुखों के साधन और प्राणीमात्र को अपने समान देखनेवाले ऐसे समता—भाव की प्राप्ति के लिए सामायिक व्रत का अनुष्ठान किया जाता है। इस में सावद्य योग का त्याग और निरवद्ययोग का सेवन करना आवश्यक है। मन—वचन और काया के पापजनक व्यापारों का काल की मर्यादा करके त्याग कर देना सावद्ययोग परित्याग है और शुद्ध क्रियाओं में प्रवृत्ति करना निरवद्ययोग का प्रतिसेवन हैं। समताभाव की प्राप्ति करने के लिए ये दोनों समान रूप से उपयोगी है, अतः सावद्ययोग के त्याग करने की जैसे निरवद्ययोग में प्रवृत्ति करने का भी प्रयत्न करना चाहिए।

इस व्रत के आचरण की विधि इस प्रकार है—

मुनिके समीप, पौषधशाला में, उद्यान में या स्व परके ग्रह में अर्थात् जहां मनमें संकल्प–विकल्प न उठे और चित्त स्थिर रहे, ऐसे किसी भी एकान्त स्थान में मुक्तैकदेश होकर अर्थात् धोती की एक लांग खुली रखकर उत्तरासण (दुपट्टा) ओडकर रजोहरण से अथवा पूंजणी से भूमि को पूंजकर और बैठने के आसन (पथरणा) को पलेवण करके यतनापूर्वक बिछे हुए आसन पर बैठ कर; अथवा शक्ति हो तो खडा रहकर मुहपत्तिका और दोरा का पडिलेहण करके डोरासहित मुखवस्त्रिका मुख पर बांध कर 'णमोकार' मंत्र बोल कर यदि साधुजी हो तो उन्हें वन्दना करके उनसे सामायिक की आज्ञा लेकर श्रावक, क्रमसे ऐर्यापथिक कायोत्सर्ग पालन करे और साधुजी न हो तो बडे श्रावक की आज्ञा लेकर सामायिक करे। इसके पश्चात् 'लोगस्स' का पाठ करे। फिर साधुजी से या विद्वान् श्रावक से अथवा अपने ही मुख से 'करेमि भंते' के पाठ

द्वारा दो करण तीन योगों से इच्छानुसार एक दो तीन आदि सामायिक ले लेवें। इसके पश्चात् नीचे बैठ के 'नमोत्थु णं' का दो बार पाठ करे। फिर श्रमण (साधु) या श्री महावीरस्वामी की वन्दना करके, नीचे लिखी हुई विधि के अनुसार पांच समिति तीन गुप्ति की आराधना करता हुआ मुनि के जैसा अप्रमादी होकर विचरे। अर्थात्–स्वाध्याय, ध्यान, धर्मचर्चा आदि करता हुआ बारम्बार निर्दोष सामायिक में रहे।

सामायिक सम्बन्धी प्रश्नोत्तर सामायिक के भाजन चार प्रकार के है जैसे–द्रव्य क्षेत्र, काल भाव सामायिक का द्रव्य–भव्य जीव सामायिक का क्षेत्र–त्रसनाल अन्य-क्षेत्र मे नहीं। सामायिक काल-देश उणा अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल, सामायिक भाव–क्षयोपशमिक भाव में

सामायिक का प्रणतिचार

द्रव्य थकी–सावद्ययोगो की निवृत्ति क्षेत्र थकी–लोक प्रमाणे काल थकी मर्यादा-

पूर्वक जैसे १–२–३ आदि भावथकी–करणयोग की

सामायिक शुद्धताचार

द्रव्य से शुद्ध द्रव्य बैठा पूंजणी मुखपति माला सामायिक का क्षेत्रशुद्ध–एकान्त निर्विघ्न स्थान सामायिक का भावशुद्ध कालपूर्ण हो तब तक सामायिक का भावशुद्ध ३२ दोषो पर दृष्टि त्याग करें अल्पबहुत्व–सामायिक में सब से थोडा काल स्पर्शा, उनसे क्षेत्र असंख्यातगुणा स्पर्शा उनसे द्रव्य अनंतगुणा स्पर्शा, उनसे भाव अनंतगुणा

सामायिक की भावना के विषय में गौतमस्वामी के प्रश्न का भगवान् का उत्तर–'गोयमा' हे गौतम ! 'तस्स णं एवं भवइ, णो मे हिरण्णे, णो मे सुवण्णे, णो मे कंसे, णो मे दूसे' यह बात बिलकुल ठीक है कि सामायिक धारण करनेवाले व्यक्ति की जब तक वह सामायिक में स्थित है ऐसी ही भावना रहती है कि हिरण्य (चांदीरूप-धातु) मेरा नहीं है, सुवर्ण मेरा नहीं है कांस्यपात्र विशेष मेरा नहीं है वस्त्र मेरे नहीं है

'णो मे विउलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमादीए संतसारसावएज्जे' इस प्रकार विपुल धन गुडशर्करादिक कनकसुवर्णकर्केतन आदि रत्न, चन्द्रकान्त आदि मणिगण मौक्तिक, शंख शुभसूचक शिलाखण्डविशेष, मूंगा पद्मरागादिकरत्न ये सब परंपरा से उपार्जित किया हुआ मौजूदा सारभूत द्रव्य मेरा नहीं है; इस प्रकार वह हिरण्यादि परिग्रह का 'द्विविधं त्रिविधेन' के अनुसार प्रत्याख्यान करता है। इसीलिये वह अपने भाण्डकी सामायिक से उठने के बाद गवेषणा करता है ऐसा कहा है। यही बात 'ममत्तभावे पुण से अपरिण्णाए भवइ' इस सूत्रद्वारा समझाई गई है। अर्थात् सामायिक करने के निमित्त उतारे गये वस्त्रादिकों की अथवा घर में रखे हुए पदार्थों की की जिन्हें चोरने चुरा लिया है उसने सामायिक करते समय उनमें अनुमतिरूप ममताभाव का प्रत्याख्यान नहीं किया था इस कारण वह सामायिक के बाद अपने भाण्ड की गवेषणा करता है। दूसरे के भाण्ड की गवेषणा नहीं करता। अर्थात् जिन भाण्डों

की वह गवेषणा कर रहा है वे भाण्ड उसीके हैं अनुमति का त्याग नहीं करने से वे उसके स्वामित्व से बहिर्भूत नहीं हुए हैं।

'तस्स णं एवं भवइ, णो मे माया, णो मे पिया णो मे भाया, णो मे भगिणी' हे गौतम! कृत सामायिकवाले उस श्रमणोपासक के मनमें ऐसा विचार आता है कि मेरी माता नहीं है, मेरा पिता नहीं है, मेरा भाई नहीं है, मेरी बहिन नहीं है 'णो मे भज्जा, णो मे पुत्ता, णो मे धूया, णो मे सुण्हा' मेरी भार्या नहीं है, मेरा पुत्र नहीं है, मेरी लड़की नहीं है, मेरी पुत्रवधू नहीं है। इस प्रकार से प्रभु का उत्तर सुनकर अब

आशंका के समाधान निमित्त 'पेज्जबंधणे पुण से अवोच्छिन्ने भवइ' प्रभु कहते हैं कि हे गौतम! उस श्रावक का प्रेमबन्धन ममताभाव जो कि अनुमतिरूप है उसके साथ व्युच्छिन्न नहीं हुआ है। तात्पर्य कहने का यह है कि उसने जो सावद्ययोग का परित्याग किया है वह मन, वचन, काय इनकी दो कोटि से कृतकारित से किया है न कि इनकी अनुमति से। (भ. सूत्र श. ८ उ. ५ सू. १)

मूलम्—तए णं से संखे समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी—तुब्भेणं देवाणुप्पिया ? विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह, तएणं अम्हे तं विपुलं असणं पाणं खाइमं आसाएमाणा, विसाएमाणा, परिभाएमाणा, परिभुंजेमाणा, पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो। तएणं ते समणोवासगा संखस्स समणोवासगस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणंति। तए णं तस्स

संखस्स समणोवासगस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—नो खलु मे सेयं तं विउलं असणं जाव साइमं आसाएमाणस्स, विसाएमाणस्स, परिभुंजेमाणस्स, परिभाएमाणस्स पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए, सेयं खलु मे पोसहसालाए पोसहियस्स बंभयारिस्स उम्मुक्कमणिसुवण्णस्स, ववगयमालावन्नगविलेवणस्स निक्खित्तसत्थमुसलस्स, एगस्स अबिइयस्स दब्भसंथारोवगयस्स पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए तिकट्टु एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता जेणेव सावत्थी नयरी, जेणेव सए गिहे, जेणेव उप्पला समणोवासिया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता, उप्पलं समणोवासियं आपुच्छइ, आपुच्छित्ता, जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोसहसालं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता, पोसहसालं पमज्जइ, पमज्जिता, उच्चारपासवण-

भूमिं पडिलेहेइ, पडिलेहित्ता, दब्भसंथारगं संथरइ, संथरित्ता, दब्भसंथारगं दुरूहइ, दुरूहिता, पोसहसालाए पोसहिए, बंभयारी जाव पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणे विहरइ।

'तएणं से' इत्यादि।

अर्थ–इस सूत्रद्वारा सूत्रकारने शंख श्रमणोपासक का ही वर्णन किया है। [तए णं से संखे समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी] इसके बाद उस श्रमणोपासक शंखने उन श्रमणोपासकों से ऐसा कहा–[तुब्भेणं देवाणुप्पिया विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह] देवानुप्रियो! आप लोग विपुल मात्रा में अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप आहार को तैयार करवाओ [तएणं अम्हें तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभुंजेमाणा पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामि] तब हम लोग उस चारों प्रकार के आहार से क्षुधा को शांत करते हुए,

तथा एक दूसरे के लिये भी उसे देते हुए इस प्रकार करते हुए हम लोग पाक्षिक पौषध करेंगे [तएणं से समणोवासया संखस्स समणोवासगस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणंति] जब श्रमणोपास शंखने श्रमणोपासकों से ऐसा अपना हार्दिक अभिप्राय कहा–तब उन श्रमणोपासकों ने उसके कथन रूप अर्थ को विनयपूर्वक स्वीकार कर लिया [तए णं तस्स संखस्स समणोवासगस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था] इसके बादही श्रमणोपासक उस शंख के मनमें ऐसा चिन्तित, कल्पित, प्रार्थित संकल्प उत्पन्न हुआ [नो खलु मे सेयं तं विउलं असणं जाव साइमं आसाए माणस्स विसाएमाणस्स परिभुंजेमाणस्स पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए] कि मुझे इस प्रकार से पाक्षिक पौषध करना योग्य नही हैं चारों प्रकार का आहार करता रहूं और पाक्षिक पौषध भी करता रहूं अपि तु–[सेयं खलु मे पोसहसालाए पोसहियस्स बंभयारिस्स उम्मुक्कमणिसुवन्नस्स] ऐसा करना ही उचित है कि मैं पौषधशाला में बैठूं और पौषध

करूं, ब्रह्मचर्यपूर्वक रहूं और मणिसुवर्ण आदि का सर्वथा त्याग कर दूं [ववगयमालावन्नविलेवणस्स निक्खित्थमुसलस्स एगस्स अबिइयस्स, दब्भसंथारोवगयस्स] मालावर्णक का और मर्दन कराने का त्यागपूर्वक, मुशल आदि शस्त्र का परित्यागपूर्वक दर्भ के आसन उपर बैठूं [पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए तिकट्टु एवं संपेहेइ] क्योंकि इस स्थिति में रहकर पालित किया गया पाक्षिकपौषध–पौषधोपवास मुझे अधिक श्रेयस्कर होगा, क्योंकि पूर्वपौषध की अपेक्षा यह पौषध विशिष्टनिर्जरा का हेतु होता है– इस प्रकार से उसने पौषध करने का निश्चय किया 'संपेहित्ता जेणेव सावत्थी नयरी, जेणेव सए गिहे, जेणेव उप्पला समणोवासिया तेणेव उवागच्छइ' इस प्रकार निश्चय करके वह जहां श्रावस्ती नगरी थी और उसमें भी जहां अपना घर था और उसमें भी जहां वह श्रमणोपासिका उत्पला थी वहां आया 'उवागच्छित्ता उप्पलं समणोवासियं आपुच्छइ' वहां आकर के उसने श्रमणोपासिका उत्पला से पूछा–'आपुच्छित्ता जेणेव

पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ' पूछकर फिर वह जहां पर पौषधशाला थी वहां पर गया 'उवागच्छित्ता पोसहसालं अणुपविसइ' वहां जाकर के उसने पौषधशाला में प्रवेश किया 'अणुपविसित्ता पोसहसालं पमज्जइ' वहां प्रवेशकर उसने पौषधशाला का प्रमार्जन करके फिर उसने उच्चारपासवणभूमि की प्रतिलेखना की 'पडिलेहित्ता दब्भसंथारगं संथरेइ' प्रतिलेखना करके फिर उसने दर्भ का संथारा बिछाया 'संथरित्ता दब्भसंथारगं दुरूहइ' दर्भ का संथारा बिछाकर फिर वह उस दर्भ के संथारे पर बैठ गया 'दुरूहित्ता पोसह-सालाए पोसहिए बंभयारी जाव पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणे विहरइ' संथारे पर बैठ कर पौषधव्रत को धारण किये हुए वह ब्रह्मचर्य को पालता हुआ यावत्-मणि और सुवर्ण का त्यागी, माला और विलोपन का परिहार करनेवाला, एवं मुशलसे विरक्त बना हुआ, अकेला एवं दर्भ के आसन पर बैठ कर पाक्षिकपौषध का पालन करने लगा।

दसवां व्रत दो प्रकार का होता है (१) सिद्धान्त की दृष्टि से छठा और सातवां व्रत में

जाव जीव के लिए की गई व्यापक मर्यादा को एक दिन रात के लिये संक्षिप्त करनी है

(२) परंपरा की दृष्टि से दसवां व्रत होता है-उस में २४ घंटा (अहोरात्र) उपाश्रय में रहकर छकाय जीवों को अभयदान देनेरूप संवरकरणी करनी चाहिए, उसमें कोई गृहस्थ आहार के लिये आहार देवें और अपने घर से आहार मंगवाकर आहार करे अथवा तो स्वयं गोचरी कर आहार लावे और आहार करे तो कर सकता है इस को दयाव्रत कहा जाता है इस में उपवास अथवा एकासणा करना फर्जियात नहीं है इस दूसरे प्रकार में भी प्रथम के जैसा संक्षिप्त मर्यादा एक दिन के लिये धारने की है.

दसवां देशावकाशिक व्रत—मूलम्-सुवह दिन प्रभात से आरंभ करके रात तक पूर्वादिक छ दिशाओं कि जितनी भूमिका की मर्यादा रखी हो उसके अलावा पांच आश्रव सेवा का पच्चक्खाण, 'जाव अहोरत्तं दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा'-जितनी भूमि की मर्यादा रक्खी, जितनी द्रव्यादिक

की मर्यादा की है, उसके उपरांत उपभोग परिभोग निमित्त से भोगने का पच्चक्खाण, 'जाव अहोरत्तं एगविहं तिविहेणं न करेमि, मणसा, बयसा, कायसा' ऐसे दशवें देशावकाशिक व्रत के 'पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा--आणवणप्पओगे, पेसवणप्पओगे, सद्दाणुवाए, रूवाणुवाए, वहिया पुग्गलपक्खेवे—

दशवां देशावकाशिक व्रत—एक वर्ष अहोरात्र का संवर नंग....तथा देशावकाशिक नंग....करने का कहीं होसके तो सामायिक....करके या दिन....के चौथा व्रत का पालन करना चाहिये। छःकोटी जीवनपर्यन्त इस व्रत के पांच अतिचार टालना १ मर्यादित क्षेत्र सें उपयोग के लिये मर्यादितक्षेत्र के बाहर की वस्तु दूसरों से मंगवाना २ मर्यादा के बाहर दूसरों के साथ वस्तु को भेजना। ३ मर्यादित क्षेत्र के बाहर रहे हुए व्यक्ति से शब्द आदि का इशारा करके कार्य कराना। ४ दूसरे को रूप दिखाकर अथवा हाथ आदिका संकेत करके वस्तु मंगाना। ५ कंकड, पत्थर आदि फेंककर संकेत करना।

ये पांच अतिचार टाल कर दशवां व्रत का पालन जावजीव तक तीन कोटी तथा छ कोटि में पालन करना।

ग्यारहवां पोषधोपवास व्रत—मूलम्—'पडिपुन्न पोसहोववासं' असणपाणं खाइमं साइमं का पच्चक्खाण, मालावन्नगविलेवण का पच्चक्खाण, सत्थमुसलादिक सावज्ज जोगसेवन का पच्चक्खाण 'जाव अहोरत्तं पज्जुहसामि दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा', ऐसी सद्दहणा, परूवणा तो है, पौषध का अवसर आने से पौषध करूं, तब फरसना करके शुद्ध होऊं, एसे ग्यारहवां पडिपुन्नपौषध व्रत के 'पंच अइयारा जाणियव्वा न समारियव्वा तं जहा--'अप्पडिलेहिय दुप्पडिलेहिय सिज्जा संथारए २, अप्पमज्जिय दुप्पमज्जिय सिज्जा संथारए ३, अप्पडिलेहिय दुप्पडिलेहिय उच्चारपासवणभूमि ४, अप्पमज्जिय दुप्पमज्जिय उच्चारपासवणभूमि ५, पोसहोववासस्स सम्मं अणणुपालणया'। ग्यारहवां पौषधव्रत, एक वर्षमां पौषध संख्या....करना। यदि पौषध नहीं कर

सके तो सामायिक २५ करके एक पौषध समझना या पौषध नियम की पूर्ति करना।

२५ सामायिक नहीं कर सके तो दो दिन का उपवास (बेला) करलेना या उपवास एक २ करलेना या ८ दिन हरी सब्जी का त्याग करलेना इस प्रकार पौषध का नियम लिया हुआ करके उसको पौषध समझ लेना। इसमें रोग के कारण, अवस्था के कारण यदि नियमानुसार नहीं हो सके तो दूसरे वर्ष में बाकी रहे हुए पौषध पूरे करना। इसके पांच अतिचार टालना है। (१) उपाश्रय तथा शय्या को बिना देखे या अच्छी प्रकार देखे बिना प्रयोग करे। (२) शय्या का उपयोग पूंजे बिना या अच्छी प्रकार पूंजे बिना प्रयोग करे। (३) बिना देखे या अच्छी प्रकार देखे बिना लघुशंका आदि के स्थानों का प्रयोग करे। (४) बिना पूंजे या अच्छी प्रकार पूंजे बिना लघुशंका आदि के स्थानों का प्रयोग करे। (५) पौषध का विधिपूर्वक पालन नहीं करे। उपर्युक्त दोषों को टालकर जीवनपर्यंत छःकोटि से प्रतिपूर्ण पौषध करना

अगारि सामाइयंगाणी, सड्ढीका अणफासओ।
पोसहं दुहओ पक्खं एगरायं न हावए॥

गृहस्थपण सामायिक श्रुतचारित्ररूप अंगोनु श्रद्धापूर्वक मन वचन कायाथी पालन करे महिने का छ पौषध करे एक रात्रि की भी हानि न करे।

एव्वं सिक्खा समावन्ने गिहिवासे वि सुव्वये।
मुच्छई छ वि पव्वाओ, गच्छे जक्खसलोगयं॥

आवी रीते गृहस्थावासमां रहेनार सुव्रतोनुं पालन करवाथी औदारिक शरीर छोडीने यक्ष नामक देवलोकमां जाय छे.

बारहवां अतिथि संविभाग व्रत—मूलम्–समणे निग्गंथे फासुएणं एसणिज्जेणं, असणपाणखाइमसाइमेणं, वत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेणं पडिहारिएणं पीढफलगसिज्जा संथारएणं, ओसहभेसज्जेण य पडिलाभेमाणे विहरामि। ऐसी हमारी सद्दहणा, परूवणा

है, साधु–साध्वी का योग मिलने पर निर्दोष दान दूं तब शुद्ध होऊं। ऐसे बाहरवें अतिथि संविभाग व्रत के 'पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा–१ सचित्त निक्खेवणया, २ सचित्त पिहणया, ३ कालाइक्कमे, ४ परोवएसे, ५ मच्छरियाए।

बारहवां अतिथि संविभाग व्रत—साधु–साध्वी को निर्दोष आहार, पानी, चौदह प्रकार का दान देना। यदि साधु–साध्वी का योग नहीं मिले तो भावना भाना। गोचरी के लिये आये साधु-साध्वीजी को असुजतुं आहार नही हों, यदि कारण से असुजतुं होय तो दिन पांच के लिए एक विगय (दूध, दहीं, घी, तेल, चीनी) का त्याग करना। इस व्रत के पांच अतिचार टालना जरूरी है। १ 'सचित्त निक्खेवणया' साधु को नहीं देने की बुद्धि से निर्दोष और अचित्त वस्तु को सचित्त वस्तु पर रख देना जिस से वे नही ले सके। २ 'सचित्त पिहणया' अचित्त वस्तु को सचित्त से ढक देना। ३ 'कालाइक्कमे' गोचरी के समय को चुका देना। ४ 'परोवएसे' स्वयं की भावना नहीं

देने की होने से दूसरों को देने के लिये कहना। ५ 'मच्छरियाए' दान देकर अहंकार करना अथवा दूसरे दाताओं से ईर्षा करना।

ये पांच अतिचार टाल कर बारहवां व्रत का पालन जीवनपर्यन्त करना। बारहवां व्रत लेनेवाले प्रत्येक श्रावक श्राविकाओ हमेशा सत्पात्रे दान करवुं। शंकित आदि व्रत ग्यारह लिए हैं उन्हें शुद्ध भाव से जीवन सुधि पालना। उसमें रोग, बुढापा, परवश, काल दुकाल, देवा के कारण, मेल–मिलाप, विदेश जाने पर आगार। सर्व व्रतों को समझना किन्तु बन सके वहां तक थोडा सा भी दोष व्रतों के पालने में लगाना नहीं।

बारह व्रत समाप्त

जं किंचिउ पूइकडं सड्ढी मागंतु सीहियं। सहस्संतरियं भुंजे दुपक्खं चेव सेवइ ॥१॥

तमेव अवियाणंता विसमंसि अकोविया। मच्छा वेसालिया चेव उदगस्सऽभियागमे ॥२।

अथ उद्गम का १६ दोष—(दातारसुं लागे)

मूल गाथा—आहाकम्मुद्देसियं पूईकम्मेयं मसिजाएं य।
ठवणा पाहुडियाए पाओअरं कीयपामिच्चे ॥१॥
परियट्टिएं अभिहडे उब्भिन्ने मालोहडे इय।
अच्छिज्जे अणिसिट्ठे अज्झोयरए य सोलसमे ॥२॥

१ आहाकम्मे—साधु के निमित्त बनावे ते दोष २ जिस साधु के लिए आधाकर्मी आहार बनाया है वही साधु ले तो उसको आधाकर्मी दोष लगे। और दूसरा साधु ले तो उद्देसिय दोष लगे। ३ सूजता आहार माँहि आधाकर्मी का अंशमात्र भी मिल जाय 'हजार घर के आंतरे भी आधाकर्मी आहार का अंश मात्र मिल जाय' तो दोष। ४ आपरे वास्ते और साधु रे वास्ते भेला रांधे तो दोष। ५ साधु निमित्त असनादि आहार स्थापकर रखे दूसरे को न दे तो दोष। ६ साधु अर्थे पावणा आघा पाछा करे तो दोष। ७

अंधारा में भी प्रकाश करके देवे तो दोष। ८ साधु निमित्त आहार वस्त्र और पात्र आदि मोल लाकर तथा उपाश्रय बेचाता लेकर देवे तो दोष। ९ साधु निमित्त आहारादि उधार लाकर देवें तो दोष। १० साधु निमित्त अपनी वस्तु देकर बदले में दूसरी वस्तु लाकर देवे तो दोष। ११ आहारादि देने के निमित्त अथवा साथ साथ जाकर देवे तो दोष सामने जाकर आहारादि देवे तो दोष। १२ लेपनादिक (छांदा) खोलकर देवे तो दोष। १३ सीडी–नीसरणी लगा कर ऊंचे नीचे तीरच्छे से वस्तु नीकाल कर देवे तो दोष। १४ निरबल से सबल जबरदस्ती दिलवावे या खूस कर देवे ते दोष। १५ दो के सीर की वस्तु एक दूसरे की विना मरजी देवे तो दोष। १६ अगाडी आंधण मांहि साधु आया जाण अधिक ऊर देवे तो दोष ॥इति उद्गम का १६ दोष गृहस्थ साधु को लगता है॥

॥ अथ उत्पाद का १६ दोष—(जीम्यारे लोलुपीपणा से साधु लगावे)

मूलम्–धाई दूई निमित्ते आजीवे वणीमग्गे तिगिच्छाय।

कोहे माणे माया लोभेयं[10] हवंति दस एए ॥३॥
पुव्विं–पच्छा संथव[11] विज्जा[12] मंते[13] य चूरणं[14] जोगे[15] य।
उप्पायणाइ दोसा सोलसमे मूलकम्मे यं[16] ॥४॥

१ घायेरा काम करके आहारादि लेवें ते दोष। २ दूतपना याने गृहस्थ का सन्देशा पहुंचाकर आहारादि लेवे ते दोष। ३ भूत भविष्य वर्त्तमानकाल के लाभालाभ सुख-दुःख जीवित मरणादि बतला कर आहारादि लेवे ते दोष। ४ अपना जाति कुल आदि प्रकाश कर आहारादि लेवे ते दोष। ५ रंक भीखारी के जैसा दीनपना से मांगकर आहारादि लेवे ते दोष। ६ वैद्यकी करके आहारादि लेवे ते दोष। ७ क्रोध करके आहारादि लेवे ते दोष। ८ अहंकार करके लेवे ते दोष। ९ कपटाई करके लेवे ते दोष। १० लोभ करके अधिक आहारादि लेवे, अथवा लोभ बतलाकर लेवे ते दोष। ११ पहले या पिछे दाता की प्रशंसा करके आहारादि लेवे ते दोष। १२ जिसकी अधिष्ठाता

देवी हो अथवा जो साधना से सिद्ध की गई हो उसको विद्या कहते हैं, ऐसी विद्या का प्रयोग से आहारादि लेवे ते दोष। १३ जिसका अधिष्ठाता देव हो अथवा विना साधना के अक्षर विन्यास मात्र हो उसको मंत्र कहते हैं, ऐसा मंत्र का प्रयोग से आहारादि लेवे ते दोष। १४ एक वस्तु के साथ दूसरी वस्तु मिलाने से अनेक प्रकार की सिद्धि हो ऐसा अदृष्ट अंजनादि के प्रयोग से आहारादि लेवे ते दोष। १५ पाद लेपनादि सिद्धि बतला कर आहारादि लेवे ते दोष। १६ गर्भपातादि औषध बतला-कर आहारादि लेवे ते दोष ॥इति

॥ अथ एषणा का १० दोष—(गृहस्थ तथा साधु दोनों से लागे)

मूलम्—संकिय मक्खिय निक्खित्त पिहिय साहरिय दायगुम्मीसि।
अपरिणय लित्त छड्डिय एसणदोसा दस हवंति ॥५॥

१ गृहस्थ को तथा साधु को शंका पड़ जाने बाद आहारादि लेवे ते दोष। २ सचित्त

पाणी आदि से हाथ की रेखा या बाल भीजे हो उसके हाथ से आहारादि लेवे ते दोष। ३ असूजति वस्तु ऊपर सूजती वस्तु पडी हो ते लेवे ते दोष। ४ सूजति वस्तु सचित्त से ढांकी हो ते लेवे ते दोष। ५ अजोग वस्तु जिस वासण में पडी हो वह वस्तु दूसरे वासण में डालकर उसी वासण से योग्य आहार देवे ते लेवे ते दोष। या जहां पश्चात् कर्म होने की संभावना हो ऐसे घर में एक भाजन से दूसरे भाजन में आहारादि डालकर दे उस में पिछे से सचित्त पाणी से धोने की शंका होने पर उसी भाजन से आहारादि लेवे ते दोष। ६ अंधा लूला लंगडा आदि अजयणा करता बहरावे उससे लेवे ते दोष। ७ मिश्र सचित्त अचित्त चीज लेवे ते दोष। ८ शस्त्र पूरा परगम्या विना थोडे समय रो लेवे ते दोष। ९ तुरत की जगह लीपी हुई हो उसके ऊपर चल कर आहारादि लेवे ते दोष। १० अशनादि छांटा पडता लेवे ते दोष॥ इति एषणाका १० दोष॥

॥ अथ ५ दोष आवश्यकसूत्र में कहा है ॥

१ उघाड किवाड उग्घाडणाए–चूं चूं करतो कवाड ठेलीने उघाड कर तथा उघडा कर आहारादि ले ते दोष। २ मंडी पाहुडिआए–शेष निकाला हुवा लेवे ते दोष। ३ बलिपाहुडिआए–उच्छालने अर्थे बल बाकुला उछाल्या पहला लेवे ते दोष उच्छालने के बाद गृहस्थी भोगवे वह लेना न अटके। ४ अदिट्ठराए–अणदिठे वासण का आहारादि लेवे ते दोष। ५ परिट्ठावणिआए–निरस आहार को परठावने की इच्छा कर सरस आहारादि लेवे ते दोष। १ सेणीएपिंड–अपने पूर्व सज्जनादि (नातिला गोतिला) से ही लाया हुआ आहार करे ते दोष। २ अकारण–बिना कारण चीज मांगकर लावे ते दोष। उ. सू. द. वै.

१ दाणट्ठा–ग्रहगोचरादि के निमित्ते डाकोत वगैरह के वास्ते किया हुआ आहारादि वह जिम्यां पहले लेवे ते दोष, उसके जीमने बाद बचा हुआ गृहस्थ जीमे तो वह लेने

में अटके नहीं। २ पुण्णट्ठाए–पुन्य के अर्थे किया हुआ। जैसे–दुकान में धर्मादा निकाला हुआ धन का तथा मरण के अनन्तर पुन्य का किया हुआ आहारादि लेवे ते दोष। ३ समणट्ठा–बाबा योगी संन्यासी के अर्थे किया हुआ आहारादि लेवे ते दोष। उसको जीमने बाद गृहस्थ जीमे तो वह लेना अटके नहीं। ४ वणीमग्गट्ठा–रंक भिखारी के वास्ते किया हुआ आहारादि लेवे ते दोष। उसके जीमने के बाद गृहस्थ जीमे तो वह लेना अटके नहीं। ५ निआगपिंड–नित्यप्रति एक ही घर का आहारादि लेवे ते दोष। ६ सज्झायरपिंड–शय्यातर याने जिसकी आज्ञा से मकान में ठहरा हो उसके घर का आहार लेवे ते दोष। ७ रायपिंड–राजपिंड जैसे राजा के लिए बनाया आहार लेवे ते दोष। ८ किमिच्छिए–१ दानशाला का आहारादि लेवे ते दोष। २ कोई कोई इसी प्रकार भी कहते हैं कि बताय बताय नाम से मांग मांग लेवे ते दोष। ९ संघट्टिए–सचित्त के संघट्टेरो आहारादि लेवे तो दोष। १० बहुज्झाए–थोडा खाने में

आवे और ज्यादा नांखने में आवे ऐसो आहार लेवे तो दोष। ११ परिकुट्ठं कुलकं—धोबी आदि निषेध कुल का तथा चोर के घर का आहारादि लेवे तो दोष। १२ मामगं-वर्ज्या हुआ घर का आहारादि लेवे ते दोष। जैसे कोई कहे म्हारे घेर मत आयजो उसको वर्ज्या घर, कहते हैं। १३ अचियतकुलं—गणिका आदि अविश्वसनीय कुलका आहार लेवे ते दोष। १४ पुव्वकम्मे पच्छाकम्मे—पहला दोष लगावे तथा पिछे दोष लगावे जैसे-आहार वहेराया पहेला साधु आया जानकर आघा पाछा कर दे, तथा वहेराया पिछे फिर बनाई ले या काचे पानी सुं ठाम या हाथ धो लेवे ते दोष। १५ सुईयंगे गावि-तत्काल व्याय गाय हो उस रस्ते से जाकर आहारादि लेवे तो दोष। १६ एलगं—बकरो घर आगल बेठो होवे ते उलंघ कर आहारादि लेवे ते दोष। १७ दारगं--जिस द्वार पर लडका या लडकी आडी बैठी हो उसको उलंघकर आहारादि लेवे ते दोष। १८ साणगं-जिस द्वार पर श्वान (कुत्ता) बैठा हो उसको उलंघ कर आहारादि लेवे ते दोष।

१९ वच्छगं--जिस द्वार पर गाय का बछडा बैठा हो उसको उलंघकर आहारादि लेवे तो दोष। उलंघ धी अनपवेसे और भी ऐसा कोई बछडा बैठा हो उसको उलंघकर आहारादि लेवे तो दोष। २० अगाईता चलाईता—आगे पीछे करे जैसे--कच्चा पाणी का लोटा हाथ में है साधु साध्वी आया देख जावतो पीछे फिर जाय, या कोई सचित्त वस्तु हाथ में है साधु आया देख रख दे तथा पहले घर में जाकर बर्तन आगे पीछे कर दे वह आहारादि लेवे ते दोष। २१ गोवणी कालमासणी--गर्भवती स्त्री सात मास पीछे उठ बैठ कर आहारादि दे वह लेवे तो दोष। २२ थाणं पेजमाणी—बालक चूंघ-स्तनपान कर रहा है उस वक्त चूंग्रते को छुडाकर आहार बहोरावे वह लेवे तो दोष। २३ नीयं दवारतामसं—कोठी ओवरी भरवारी जो नीचो बारणो भीतर अंधेरो पडतो होय ऐसी जगह का आहार लेवे ते दोष।

आचाराङ्गसूत्रमां बतावेल छ दोषो

१ निएपिंडं–नित्य आहार बाटने के लिए त्याग करे माप से बाटे वह आहार लेवे ते दोष। २ संखंडियं (संखडो) न्यात जीमणवार शहेर सारणी में जीमता हो उसमें जाकर आहारादि लेवे ते दोष। ३ वागायं—जाचक-मांगनेवाले को अन्तराय देकर आहारादि लेवे ते दोष। ४ सघारवेणे—गमतां कथा वार्ता से रिझाय कर आहारादि लेवे ते दोष। ५ फुमेज्झवा (वीएज्जवा) फूंक देकर या पंखा से ठार कर आहार देवे वह लेवे ते दोष। ६ भूमालुहडं नीचे भोंयरे से या उपर सीडी लगाकर आहारादि देवे वह लेवे ते दोष।

१ पावणीए—पावणा के अर्थे किया हुआ आहार पावणा जीम्यां पहले लेवे ते दोष। २ मंसारे—अभक्ष्य मांस आदि का आहार लेवे ते दोष। (ठाणांगसूत्र)

भगवतीसूत्र

१ अङ्गरेअं—सराई सराई राग सहित आहार करे ते दोष। उसका चारित्र कोयले

समान कहनां। २ धूमे मस्तक (माथा) धूणी धूणी कुसराई कुसराई द्वेष सहित आहारादि करे ते दोष। उसका चारित्र धूवां समान कहा है। ३ संजोअणा—स्वादनिपजाने के लिए संयोग मिलाकर आहारादि लावे ते दोष। ४ खेत्ताइक्कंते—जो क्षेत्र में रहे वहां सूर्योदय पहले और सूर्यास्त के पीछे आहारादि लेवे ते दोष। ५ कालाइक्कंते—पहेल पहोरको लाया आहारादि चोथे पहोर में भोगवे ते दोष। ६ मग्गाइक्कंते—दो कोश उपरांत असनादि ले जाकर भोगवे ते दोष। ७ पमणाइक्कंते—प्रमाण सुं अधिक आहार लेवे ते दोष। ८ आउए—गृहस्थ के आमंत्रण से उसके घर जाकर आहारादि लेवे ते दोष। ९ कंतारभत्तं—अटवी (जंगल) में जो दानशाला वगैरह हो वहां आहारादि बंटता हो वह लेवे तो दोष। १० दुब्भिक्खभत्तं—दुष्काल में दानशाला रंक भीखारी के लिए खोली हो उसका आहारादि लेवे तो दोष। ११ वद्लीयाभत्तं—वरसाद आया हो उस समय कोई दातार भीखारी को कोई जगह आहार वांट्यो होय वह लेवे तो दोष। १२ गिला-

णभत्तं रोगी ग्लानी के लिए किया हुआ आहारादि उसको जीम्या पहेला लेवे ते दोष।

प्रश्नव्याकरण

१ रहगं–चूरमारो त्याग है और लाडु बनाकर बहरावे वह लेवे तो दोष। २ पजुजायं–दहिरा त्याग है और दहिरा राईतो बनाकर याने पर्याय बदलाकर देवे वह दोष। ३ सहयागय–साधु आपरे हाथ सुं औषध-पाणी अलावे आहारादि लेवे तो दोष। ४ अनुत्तरवाह समणट्ठा (अन्तोवाहच्च) भीतरसुं तीन बारणा उपरांत काढकर देवे वह लेवे ते दोष। ५ मनोरंच–चारण भाट के जैसे विरदावली करके आहार लेवे ते दोष।

नीशीथसूत्र

१ उगासियं–बहुत से मनुष्यो में से पुकार करके कहे कि 'कोई यहां दातार है' ऐसा कहकर आहारादि लेवे ते दोष। २ अडवीभत्तं—अटवी में मजुरादिके भातका आहारादि मजुर जीम्या पहेलां लेवे ते दोष। ३ अन्नत्थीयाभत्तं—अन्य तीर्थी रोटी टुकडा

मांग कर लावे वह आहारादि लेवे ते दोष। ४ पासट्ठाभत्तं—(पासत्थिएणं) ढिलापा संत्था—शीथला चारी (क्रियारहित) का आहारादि लेवे ते दोष। ५ दुगुंच्छियं कुलं-ढेढ चमार आदि निंदनीय कुल, जिस कुल में जाने से दुगुंछा करे उसका आहारादि लेवे ते दोष। सज्झाए निसीए सागारियं (निसीहीआए)--सज्यातर के नेसरा—घरो तथा दलाली का आहारादि लेवे ते दोष।

दशाश्रुतस्कंध

१ बालट्ठा--बालकके अर्थे किया हुआ आहार बालक जीम्या पहेला लेवे ते दोष। २ गब्भिणी अट्ठा--गर्भिणी स्त्री के अर्थे किया आहारादि गर्भवती स्त्री जिम्या पहेले लेवे ते दोष।

बृहत्कल्पसूत्र

१ प्रासिया--कालप्रमाण उपर को तथा वासी राख कर खावे तो दोष।

॥इति आहार के १०६ दोष समाप्त॥

मूलम्—तए णं सुदत्ते अणगारे मासखमणस्स पारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेइ, जहा गोयमस्वामी तहेव धम्मघोसे थेरे आपुच्छइ जाव अडमाणे सुमुहस्स गाहावइस्स गिहं अणुपविट्ठे। तए णं से सुमुहे गाहावई सुदत्ते अणगारे एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठे० आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता पाउयाओ ओमुयइ ओमुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, करित्ता सुदत्तं अणगारं सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसिता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयहत्थेणं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं पडिलाभेस्सामि त्ति कट्टु तुट्ठे पडिलाभेमाणे तुट्ठे पडिलाभिएत्ति तुट्ठे तए णं तस्स सुमुहस्स गाहावइस्स तेणं

दव्वसुद्धेणं दायगसुद्धेणं पत्तसुद्धेणं तिविहेणं तिकरणसुद्धेणं सुदत्ते अनगारे पडिलाभिए समाणे संसारे परित्तीकए।

अर्थ—तत्पश्चात् ते श्री सुदत्त अनगार मास क्षमणपारणा के दिन प्रथम पौरुषी में स्वाध्याय करके भगवान् श्री गौतमस्वामी की भांति यथावसर (भिक्षा) गोचरी के समय में आचार्य शिरोमणि श्री धर्मघोष आचार्यश्री से भिक्षा लाने के लिए आज्ञा प्राप्त कर हस्तिनापुर नगर में भिक्षा के लिए घूमते हुए प्रसिद्ध नागरिक सुमुख गाथापति (गृहस्थ) के घर पहुंचे। ज्यों ही उस सुमुख गाथापतिने सुदत्त अणगार को अपने घर पर पधारते हुए देखा (त्यों ही उन महाभाग परम तपस्वी मुनिराजश्री के परम पुनीत संक्लेश नाशक दर्शन करके वह बहुत ही हर्षित हुआ। सुदत्त अनगार को देखकर उसके मनमें अपरिमित तृप्ति हुई मुनि दर्शन से उसके हृदय में असाधारण तथा अपूर्व धर्मानुराग जाग्रत हुआ हर्षातिरेक से उसका अन्तःकरण भर गया। आनन्द

के मारे उसकी चित्तवृत्ति उल्लासित होने लगी। अविलम्ब वह अपने सुखासन से उठा और उठकर पादपीठ से नीचे उतरा और उसने अपने पैरों में से उपानह (जूते) उतारकर उसने एक शाटिक उत्तरासंग–विना सिया वस्त्रविशेष मुख पर धारण किया वस्त्र धारण कर फिर वह सुदत्त अणगार के सन्मुख सात आठ पग चला चलकर उसने तिक्खुत्तो के पाठ के साथ तीन वार आदक्षिण प्रदक्षिणा की अर्थात् हाथ जोडकर दक्षिण कर्ण मूल से प्रारम्भ कर ललाट प्रदेश पर घुमाते हुए वाम कर्ण के अन्त तक चक्राकार घुमाकर फिर उस अंजलि को अपने मस्तक पर स्थापन करना उसको आदक्षिण प्रदक्षिण कहते हैं अर्थात् वंदना नमस्कार किया.

सुमुख गाथापति के भावों का वर्णन करते हुए (पू० श्री घासीलालजी महाराज ने श्री विपाकसूत्र की टीका में निम्न ३ श्लोक दिए हैं)

अद्य मे फलितो गेहे, सुरद्रुःकुसुमं विना। अनभ्रा धातुला वृष्टि–र्मरुस्थल्यां सुरद्रुमः ॥१॥

दारिद्रस्य गृहे हेमनिचयः प्रकटो भवेत्। प्रीणितोऽहंखदालोकात् पीयूषपानतो यथा ॥२॥
परोपकृतिधौरेयाऽवधार्य वचनं मम। भवत्पादरजः पातात् पवित्री कुरु मे गृहम् ॥३॥

अर्थ—हे भदन्त ! आज आपका मेरे घर में पधारना मानो मेरे घर में कल्पवृक्ष विना फूल के ही फला है, बिना बादल के ही पर्याप्त वृष्टि हुई है, या यों कहुं कि मरुस्थली में कल्पवृक्ष उगा है ॥१॥ दरिद्र के घर आंगन में मानो निधान प्रगट हुआ हो हे भदन्त! मैं आपके दर्शन से इतना प्रसन्न हूं, जैसे कोई चिरकल का तृषित—प्यासा अमृत पान से प्रसन्न होता है ॥२॥ हे परोपकारी महापुरुष! आप मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर अपने चरण रज के कण से इस मेरे घर को पवित्र करें ॥३॥

नमस्कार करने के बाद रसोई घरमें आया। मैं आज अपने हाथ से निर्ग्रंथ मुनिराज को विपुल अशन पान खाद्य और स्वाद्य का दान दूंगा ऐसा विचार कर प्रसन्न चित्त हुआ फिर दान देते समय मेरे अहोभाग्य है कि आज मैं मुनिराज को विपुल

अशनादि दे रहा हूं ऐसा सोच कर प्रसन्नचित्त हुआ और जब दान दे चुका तब भी 'अद्यमे सफलं जन्म' आज मेरा जन्म सफल हुआ कि मैंने अपने हाथ से धर्मदेव को विपुल अशनादि प्रदान कर लाभ प्राप्त किया है ऐसा विचार कर भी प्रसन्नचित्त हुआ तत्प-श्चात् उस गाथापति सुमुख द्रव्य की शुद्धि से त्रिविध-त्रिकार शुद्ध माने-द्रव्यशुद्धि अर्थात् मुनिके लिये पचन पाचन किया हुआ न हो (१) मुनिके लिये खरिद्या हुआ न हो (२) मुनिके लिये सामने लाकर दिया हुआ न हो अर्थात् पूर्वोक्त १०६ दोषवर्जित आहार दायक-दाता की शुद्धि से प्रशस्त भावयुक्त अपने पवित्र मनकी शुद्धि से-निरवद्य भाषाशुद्धि अर्थात् वचन की शुद्धि से (मुखपर उत्तरासंग बांधने से वचनशुद्धिथी) सचित्त वस्तु उनके पास न होने से काया की शुद्धि से सुमुख-गाथापति प्रतिग्राहक की पात्रशुद्धि से आरंभ समारंभ का मन, वचन, काया से त्याग होने से पात्रशुद्धिथी (अतिचार रहित तप और संयम के आराधक सुदत्त जैसे

महामुनि की शुद्धि से) इन तीन प्रकार की शुद्धियों से एवं तीन करण की शुद्धि से [मानसिक वाचिक और कायिक शुद्धि से] सर्व संपत्करी भिक्षा के अभिग्राहक उन मुनि श्रेष्ठ श्री सुदत्त अणगार को आहारदान प्रतिलाभ कर अपना संसार अल्प किया अर्थात् परिमित संसारी हुए।

सुदत्त अणगार कैसे थे ?

जावंति के साहू रयहरण मुहपत्ति गुच्छग पडिगहधरा पंचमहावयधरा अट्ठारहसहस्स सीलांगरहधरा अक्खेयआयारचरित्ता ते सव्वे सरिसा मणसा मत्थएणं वंदामि।

अर्थ—जेना मुखे मुहपत्ति बांधेली होय जेना पासे रजोहरण गुच्छो होय श्वेतवस्त्र धारण करनारा अने पात्राने राखनारा एवा वेषवाला अने ज्ञानदर्शन तथा चारित्रने धारण करनारा पांच महाव्रतने धारण करनारा तेमज अढार हजार शीलना अंग रूप रथने धारण करनारा संपदानी वृद्धि अक्षय आचार अने तपना धणी ते सर्वने मारा

मस्तके करी शुद्ध अंतःकरणथी वंदना करूं छुं

'समणोवासगस्स णं भंते! तहारूवं समणं वा माहणं वा फासुएसणिज्जेणं असणपाण खाइमसाइमेणं पडिलाभेमाणस्स किं कज्जइ? गोयमा! एगंतसो निज्जरा कज्जइ (भगवतीसूत्र)

दुल्लहाओ मुहादाई मुहाजीवी वि दुल्लहा मुहादाई मुहाजीवी दो वि गच्छंति सुग्गइं
दशवैकालिक

अर्थ—तथारूप श्रमण माहन को प्रासुक एसणिज्ज अशनपानखाद्यस्वाद्यरूप चार प्रकार का आहार तथारूप श्रमण को देने से कौनसा फलकी प्राप्ति होती है?

उत्तर—हे गौतम! एकांतरूप से निर्जरा होती है। भगवतीसूत्र

निरवद्य आहार देनेवाला दाता दुर्लभ है एवं निर्दोष—निरवद्य आहार पानीसे निर्वाह करनेवाला भी दुर्लभ है। निर्दोष आहार लेनेवाला तथा निर्दोष आहार का

दान करनेवाला दोनों सुगति–मोक्षगति में जाते हैं ।

यहां श्रावक धर्म के साथ संबंधित होने से साधु का आचार दिखाया है अथवा पडिमाधारी श्रावकको भी ऐसा ही आहारपानी ग्रहण करना चाहिये स्थानांगसूत्र के चौथे ठाणे में चार प्रकार के श्रावक कहे हैं–जैसे–चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता तं जहा–अम्मापिइसमाणे, माईसमाणे, अद्दागसमाणे, पडागसमाणे, अर्थ–चार प्रकार के श्रावक कहे गये हैं जोकि मातापिता के समान१, भाई के समान२, दर्पण के समान३ पताका के समान ४

ऊपर कहे हुए दोषों से रहित आहार देनेवाला दाता और उन निर्दोष आहार को लेनेवाला साधु ये दोनो सुगति अर्थात् मोक्षगति को प्राप्त करत्ते हैं ।

श्रावकों का चार विश्रामस्थान

मूलम्—एवामेव समणोवासगस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता, तं जहा–जत्थ णं

सीलव्वयगुणव्वयवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं पडिवज्जेइ तत्थ वि य से एगे आसासे पण्णत्ते १ जत्थ वि य णं सामाइयं देसावगासियं सम्ममणुपालेइ तत्थ वि य से एगे आसासे पण्णत्ते २, जत्थ वि य णं से चाउद्दसमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेइ, तत्थ वि य से आसासे पण्णत्ते ३, जत्थ वि य णं अपच्छिम मारणंतिअसंलेहणा जोसणाजूसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगमे कालमणवकंखमाणे विहरइ तत्थ वि य से एगे आसासे पण्णत्ते ४ ॥

अर्थ—श्रमणोपासक को चार आवास–विश्रामस्थान कहे हैं पहला आवास वह है जो शीलव्रत, गुणव्रत, विरमणव्रत, अनर्थदंडविरमण, प्रत्याख्यान और पोषधोपवास को स्वीकार करता है १, दूसरा विश्रामस्थान वह कहा गया है जो सामायिक देशावकाशिक का सम्यक् रीति से वह पालन करने लगता है २, तीसरा विश्राम उसका वह कहा गया है जो चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, और पूर्णिमा तिथियों में पौषध का पूर्णरूप से पालन

करता है ३, तथा चौथा आवास वह कहा गया है जब वह मरण काल समन्धिनी अपश्चिम संलेखना को धारण कर लेता है, भक्तपान का प्रत्याख्यान कर देता है, और अपने काल की आकांक्षा रहित होकर पादपोपगमन 'संथारा' वाला होता है ४ ॥

अनंत चोवीसी जिने नमुं, सिद्ध अनंता क्रोड, केवलज्ञान स्थीवर सभी वन्दु बे कर जोड
दोही करोड केवलधरा, वेदवाणी जिन वीस, सहस्त्र जुगल कोडी नमुं साधु नमुं निशदिन
खमे खमाया, में खम्या, सभी जीवालार सिद्ध साधु आलोवसु वेर नहीं किस लार,
खामेमि सव्वे जीवा सव्वे जीवावि खम्मंतु मे मित्ति मे सव्वभूएसु वेरमज्जं न केणइ,
एमाइएहिं ओलोइय निंदिय गरहिय दुगुंच्छियं सव्व तिविहेणं पडिक्कंतो वंदामि जिण चोवीसं

७ सात लाख पृथ्वीकाय ७ सात लाख अप्काय ७ सात लाख तेउकाय ७ सात वायुकाय १० दस लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय १४ चौदह लाख साधारण वनस्पतिकाय २ बे लाख द्वीन्द्रिय २ बे लाख तेइन्द्रिय २ बे लाख चोन्द्रिय ४ चार लाख नारकी

४ चार लाख देवता ४ चार-लाख तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय १४ चौदह लाख मनुष्य जाती ४ चार गति ८४ चोर्यासी लाख जीवायोनी में कोइ जीव हण्यो होय, हणाव्यो होय, हणता ने भलो जाण्यो होय १८ लाख २४ चोवीस हजार १२० एकसोवीस इर्यावहिया पाठ में दोष लाग्यो होय तो 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं। एक करोड साडा सत्ताणु लाख कुलकोडी जीवों की विराधना कीधी होय 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं'

अठारह पापस्थान

(१) प्राणातिपात–जीवने प्राणपर्याप्तिथी रहित करवो अर्थात् जीवहिंसा (२) मृषा वाद–जूठुं बोलवुं ते (३) अदत्तादान–पराइ वस्तु मालिकना आप्या शिवाय लेवी ते (४) मैथुन–अब्रह्मचर्य (कुशील सेवन) (५) परिग्रह–नव प्रकारना बाह्य परिग्रह अने

चौद प्रकारना आभ्यंतर परिग्रह (६) क्रोध–गुस्सो–रीस (७) मान–अहंकार (८) माया-कपट (९) लोभ–ममता (१०) राग–प्रीति (११) द्वेष–अदेखाई (१२) कलह–क्लेश कजीयो, कंकास (१३) अभ्याख्यान–आळ चडाववुं, अर्थात् जेनामां जे नथी तेनुं आरोपण करवुं ते (१४) पैशुन्य–चाडी चुगली करवी ते (१५) परपरिवाद–पारकानुं वांकुं बोलवुं, निंदा करवी (१६) रई अरई-पापना काममां सुख भोगवतां राजी थवुं अने धर्मना काममां दुःख भोगवतां नाखुश थवुं ते (१७) माया मोसो–कपटरहित जूठुं बोलवुं ते (१८) मिथ्यादर्शनशल्य–खोटी श्रद्धारूप शल्य (कुदेव, कुगुरू, कुधर्मने सेववानी अभिलाषा)

चौद प्रकार का परिग्रह नीचे प्रमाणे छे

१ मिथ्यात्व, २ स्त्रीवेद, ३ पुरुषवेद, ४ नपुंसकवेद, ५ हास्य, ६ रति, ७ अरति,

८ भय, ९ शोक, १० दुगुंच्छा ११ क्रोध १२ मान १३ माया अने १४ लोभ.

मिथ्यात्व का भेद

१ अभिग्रह मिथ्यात्व–ते अपने ध्यान में आवे सो साचा, अर्थात् अपना ही मन मान्यां माने। २ अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व–बधा देव अने बधा गुरुने मानवा ते। ३ अभिनिवेशिकमिथ्यात्व–पोताना मतने खोटो जाणवा छतां मूके नहीं तेमज कुयुक्तिथी पोषण करे। ४ सांशयिक मिथ्यात्व–सत्य धर्ममां पण शंकाशील रहेवुं ते। ५ अणाभोग मिथ्यात्व–जेमां बिलकुल जाणपणुं नथी ते। ६ लौकिक मिथ्यात्व–दुनियामां जे देव, गुरु, धर्मनी विपरीत स्थापना करेली छे, तेने मानवा अने तेमनां पर्व विगेरे उजववां ते। ७ लोकोत्तर मिथ्यात्व–तीर्थंकर देवनी बीजा पाखंडो मत वालानी जेम मानता करे

(स्थापेल चितरेल के घडेल चीत्र के जेमां गुण नथी तेनी मानता पूजा करे पासत्थाओमां गुरुपणानी बुद्धि करे)। ८ कुप्रावचन मिथ्यात्व–त्रणसो त्रेसठ पाखंडी मतने माने। ९ जीवने अजीव सरधे तो मिथ्यात्व। १० अजीव ने जीव सरधे तो मिथ्यात्व। ११ साधुने कुसाधु सरधे तो मिथ्यात्व। १२ कुसाधुने साधु सरधे तो मिथ्यात्व। १३ जिनमार्गने अन्यमार्ग सरधे तो मिथ्यात्व। १४ अन्यमार्गने जिनमार्ग सरधे तो मिथ्यात्व। १५ धर्मने अधर्म सरधे तो मिथ्यात्व। १६ अधर्मने धर्म सरधे तो मिथ्यात्व। १७ आठ कर्मथी नथी मुकाणा तेने मुकाणा सरधे तो मिथ्यात्व। १८ आठ कर्मथी मुकाणा तेने नथी मुकाणा सरधे–तेवी श्रद्धा करे तो ते मिथ्यात्व। १९ उन्मार्ग को—



मार्ग श्रद्धे, सो मिथ्यात्व; जैसे--सात कुव्यसन को सेवन काम, क्रीडा करना, स्नान इत्यादि संसार में परिभ्रमण कराने का जो मार्ग है, उनको मोक्ष का हेतु श्रद्धे सो मिथ्यात्व। २० रूपी पदार्थ को अरूपी श्रद्धे सो मिथ्यात्व, जैसे--वायुकायादि सूक्ष्म होने से दृष्टि न आवे उनको अरूपी श्रद्धे सो मिथ्यात्व। २१ अरूपी को रूपी समझे तो मिथ्यात्व, जैसे--धर्मास्तिकायादि जो अरूपी हैं उनको रूपी श्रद्धे सो मिथ्यात्व। २२ अविनय मिथ्यात्व--जिनेश्वर तथा गुरु का वचन उत्थापे, गुणवंत, तपस्वी, वैरागी इत्यादि उत्तम पुरुषों से कृतघ्नीपणे करे, छिद्र देखता रहे, निन्दादि अविनय करे सो मिथ्यात्व। २३ आशातना मिथ्यात्व--गुरु को ३३ आशातना का काम करे सो मिथ्यात्व। २४ अक्रिया मिथ्यात्व--जैसे प्रतिक्रमणादिक क्रिया न माने सो मिथ्यात्व। २५ अज्ञान मिथ्यात्व--जैसे सत्य असत्य का विवेक न होने से सांसारिक कार्य कर्मों का बंधन रूप जैसा का तैसा रहने से और सत्य ज्ञान का अभाव से अज्ञान को थापे सो

मिथ्यात्व। जैसे पशुवध को तथा भगवान् के निमित्त फलफूल तोडे चढावे उसको धर्म समझे। सो मिथ्यात्व।

मूलम्—से किं तं भंते! सावगाणं स अट्ठा सहेउया अप्पच्छिमाए मारणंतियाए संलेहणाए झूसणाए आराहणाए विहि प०? गो०! सा एवामेव सअट्ठा सहेउया जाव आराहणाए विहि प० तं० गामंसि वा नयरंसि वा जाव रायहाणियंसि वा सब्भितरंसि वा बाहिरंसि वा उवस्सयं पडिलेहिज्जा उवस्सयं पडिलेहित्ता उवस्सयं पमज्जिज्जा, उवस्सयं पमज्जित्ता 'एवं पोसहसालाए किरिया वि नायव्वा' उच्चारपासवणभूमियं पडिलेहिज्जा, उच्चारपासवणभूमियं पडिलेहित्ता उच्चारपासवणभूमियं पमज्जिज्जा उच्चारपासवणभूमियं पमज्जित्ता, दब्भाइयं संथारं पडिलेहिज्जा, दब्भाइयं संथारं पडि-

लेहित्ता दब्भाइयं संथारं पमज्जिज्जा, दब्भाइयं संथारं पमज्जित्ता दब्भाइयं संथारं संथरिज्जा दब्भाइयं संथारं संथरित्ता, दब्भाइयं संथारं दुरुहिज्जा दब्भाइयं संथारं दुरूहित्ता, पुव्वदिसि तहा उत्तरदिसाभिमुहे पलियंकाइ आसणंसि आसेज्जा आसित्ता मुहपत्तिं पडिलेहेज्जा मुहपत्तिं पडिलेहित्ता मुहपत्तिं पमज्जेज्जा मुहपत्तिं पमज्जित्ता मुहपत्तिं मुहे बंधेज्जा मुहपत्तिं मुहे बंधेत्ता गमणागमणं पडिकम्मेज्जा गमणागमणं पडिकम्मेइत्ता सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वदिज्जा णमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव ठाणं संपत्ताणं ठाणं संपाविउकामाणं णमो जिणाणं जीयभयाणं, एवं वदित्ता तयाणंतरं च णं पुणो वि एवं वदिज्जा, णमोत्थुणं सव्वसिद्धाणं भगवंताणं जाव निब्भयाणं एवं वदित्ता, जो भवइ धम्मायरियो तस्स णं वि णमोत्थुणं भणिज्जा

संलेखना विधिः

जहा सयं मइ अणुसारेणं तं भणित्ता चउण्हं तित्थाणं खामणं करिज्जा, चउण्हं तित्थाणं खामणं करित्ता एवं सव्वजीवजीवाजोणीउ खमेज्जा खामइत्ता सयं धम्मायरियस्स णामं मणमाणे पुव्वगहियणाणदंसणवयतवस्स णं सव्वस्स णं अइयाराइं आलोइज्जा, पडिकम्मेज्जा, णिंदेज्जा आलोइत्ता पाडिकम्मेइत्ता, निंदित्ता तयाणंतरं च णं अइयारेणं अत्ताणं निसल्लं करेज्जा, अत्ताणं अइयारेणं निसल्लं करित्ता एवं वदेज्जा तस्स णं भगवओ सक्खाओ सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जाव मिच्छादंसणसल्लं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्ख मि जाव जीवा य तिविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि करंतंपि अन्नं न समणुजाणेमि तस्स भंते ! पडिक्कमामि निंदामि गरहामि अप्पाणं वोसिरामि एवं वदेज्जा, एवं वदित्ता तओ पच्छा चउविहं वि आहारं पच्चक्खे-

ज्जा जावजीवाए चउविहं वि आहारं पच्चक्खित्ता, तओ पच्छा एवं वदिज्जा जं पि य इमं सरीरं इदं कंतं, पियं मणुण्णं मणामं धिज्जं समयं विसासियं अणुमयं बहुमयं भण्डकरण्डगसमाणं रयणकरण्डगभूयं मा णं सियं, मा णं उण्हं मा णं खुहा मा णं पिवासा, मा णं बाला, मा णं चोरा, मा णं दंसा मा णं मसगा एवं मा णं वाहियं वा पित्तियं वा सम्भियं वा सन्निवाहियं वा विविहा रोगायंगा परिसोवसग्गा फासा फुसंति 'एवं पि य सरीरं चरमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं अप्पाणं वोसरिज्जा, अप्पाणं सरीरं वोसिराविता कालं अणवकखंमाणे विहरमाणस्स तस्स णं पंचाइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा पं० तं० इहलोगासंसप्पओगे १ परलोगासंसप्पओगे२ जीवियासंसप्पओगे३ मरणासंसप्पओगे४ कामभोगे संसप्पओगे५ से तं संलेहणा विही'

अर्थ—हे पूज्य ! श्रावकने अर्थ सहित हेतु सहित छेल्ला मरणना अवसरे कराति शारीरिक अने मानसिक तपथी कषाय आदिनो नाश करवो–संथारो सेववानी आराधवानी विधि कही ते शुं ? हे गौतम ! ते ए प्रकारे अर्थ सहित हेतु सहित यावत् आराधवानी विधि कही ते कहे छे–गामने विषे अथवा नगरने विषे अथवा राजधानीने विषे अथवा ए सर्वने विषे अंदर अने बहार उपाश्रयने पडिलेहे–निरखे उपाश्रयने निरखीने उपाश्रयने पुंजे उपाश्रयने पूंजीने (एम पोषधशालानी क्रियानुं पण जाणवुं) उच्चारपासवण भूमिने निरखे उच्चारपासवणभूमिने निरखीने उच्चारपासवणभूमिने पूंजे उच्चारपासवण भूमीने पूंजीने दर्भ आदि संथरी आने जुए दर्भ आदि संथरी आने जोइने दर्भ आदि संथरी आने पूंजे दर्भ आदि संथरी आने पाथरे दर्भ आदि संथरी आने पाथरीने दर्भ आदि संथरीआ पर बेसे दर्भ आदि संथारिआ पर बेसीने पूर्वदिशा अगर उत्तरदिशा तरफ मुख राखी पर्यंकादि आसन पर बेसे बेसीने मुहपत्तिने जुए मुहपत्तिने जोइने मुहपत्तिने

पूंजे मुहपत्तिने पूंजीने दोरासहित मुखे बांधे मुहपत्ति मुखे बांधीने इरियावइ पडिक्कम्मे इरियावहि पडिक्कम्मिने मस्तके आवर्तन करीने अंजलि (जोडेला बे हाथ) अडाडीने एम बोले नमस्कार हो अरिहंत भगवंतोने यावत् मोक्ष स्थानमां जवा वालाओने नमस्कार हो जिनेश्वरोने अने भयना जीतनाराओने नमस्कार हो एम बोलीने (त्यार पछी फरी पण एम बोले नमस्कार हो सिद्ध भगवंतोने यावत् भयरहितोने एम बोलीने जे धर्माचार्य होय तेने पण नमस्कार हो एम बोले जेम पोतानी मति अनुसरे तेम बोलीने चार तीर्थोने क्षमापना करे [खमावे] चार तीर्थने क्षमापन करीने [खमावीने] एम सर्व जीव अने जीवाजोनिने खमावे खमावीने पोताना धर्माचार्यनु नाम बोलता थका पूर्वे ग्रहण करेला ज्ञानदर्शन व्रत तप ते सर्वना अतिचारोने आलोवे पडिक्कम्मे निंदे आलोवीने पडिक्कम्मिने निंदीने त्यारपछी अतिचारथी आत्माने शल्य रहित करे आत्माने अतिचारोथी शल्य रहित करीने एम बोले ते भगवंतनी साक्षीए सर्वथा प्राणातिपातने तजुं छुं

संलेखना विधिः

यावत् मिथ्यादर्शनसल्यने अने नहि सेववा योग्य योगने तजुं छुं जीवन पर्यंत त्रण करण अने त्रण योगे करीने मन वडे वचन वडे काया वडे करूं नहीं करावुं नहि अने बीजा करताने अनुमोदुं नहीं तेने हे पूज्य ! पडिक्कमु छुं निंदु छुं गर्हा करु छुं [कषाय] पापकारी आत्माने तजुं छुं एम बोले एम बोलीने त्यार पछी चार प्रकारना आहारने पण जीवन पर्यंत तजे चार प्रकारना आहारने तजीने त्यार पछी एम कहे आ शरीर जे इष्टकारी कंतकारी प्रियकारी मनोज्ञ मनने अति वहालुं, धीरजवान् विश्वासनुं ठेकाणुं मानवा योग्य अनुमत विशेष मानवा योग्य बहुमूलां घरेणांना करंडिया समान-करंडिया तुल्य रखे शीत-टाढ वाय, रखे ताप लागे, रखे भूख लागे, रखे तृषा लागे, रखे जंगली हिंसक जनावरों के सर्पो विगेरे नुकसान करे रखे चोर हेरान करे रखे डांस करडे रखे मच्छर करडे एम रखे व्याधि थाय अथवा पित्त थाय अथवा सलेखम थाय त्रिदोष थाय अथवा विविध प्रकारना रोगों अने पीडाओ थाय परीषहो तथा उपसर्गो स्पर्शे (एवा) पोताना शरीरने

पण छेल्ला श्वासोश्वास सुधी तजे पोताना शरीरने तजीने मृत्युने अवांछतो थको विचरतो थको तेना पांच अतिचार जाणवा पण आदरवा नहीं ते कहे छे–१ आ लोकना पौद्गलिक सुखनी अभिलाषा करे के मरीने हुं मनुष्य लोकमां मोटो राजा थाउं विगेरे २ परलोकना पौद्गलिक सुखनी इच्छा करे के मोटो देवता थाउं ३ जीवतरनी वांछना करे [जाजा दिवस जीवुं तो ठीक जेथी लोकमां यशकीर्ति वधे] ४ मरणनी इच्छा करे [रोगथी कंटाळी शीघ्र मरवानी इच्छा करे] ५ कामभोगनी इच्छा करे ते एमज संलेखनानी विधि कही छे.

दोहा–मरण महा मंगलीक है, मरण मोक्षदातार।
मरणे से डरना नहीं, पंडितमरण है सार ॥

मूलम्–इमं सरीरं अणिच्चं, असुई असुई संभवं असासया वासमिणं दुःख केसाणं भायणं। जन्म दुक्खं जरा दुक्खं रोगाणि मरणाणि य, अहो दुक्खो हु संसारो जत्थ कीसंति जंतओ ॥

अर्थ—आ शरीर अनित्य छे अपवित्र छे अशुचिथी उत्पन्न थयुं छे आ शरीर या जीवन रहेवानु अशाश्वत छे अने आ दुःखों तथा क्लेशोनुं भाजन—पात्र छे जन्म दुःख रूप छे जरा दुःख छे रोग अने मरण दुःख छे अरे आ बधो संसार दुःख रूप छे अरे आमां जीव क्लेश ज मेलवे छे

ठाणांगसूत्र—मूलम्—तओ ठाणा सुसीलस्स सुव्वयस्स सगुणस्स समेरस्स सपच्चक्खाणपोसहोववासस्स पसत्था भवंति तं अस्सिं लोगे पसत्थे भवइ आयाई पसत्था भवइ॥

अर्थ—तीन स्थानों से शीलवाले की, सुव्रतवाले की, गुणवाले की, दयायुक्त की [अथवा मर्यादावाले की] प्रत्याख्यान पोषध उपवासवाले की प्रशंसा होती है। वह इस प्रकार है—इस लोक में प्रशंसा वाला होता है, परलोकमें प्रशंसा वाला होता है, आगामिकालमें प्रशंसावाला होता है॥

॥ सुभाषितानि ॥

पंचमहव्वयसुव्वयमूलं, समणमणाइल साहुसुचिण्णं ।
वेरविरामणपज्जवसाणं, सव्वसमुद्दमहोदही तित्थं ॥१॥
तित्थंकरेहिं सुदेसियमग्गं, नरगतिरियविवज्जियमग्गं ।
सव्वं पवित्तं सुनिम्मियसारं, सिद्धिविमाणं अवंगुयदारं ॥२॥
देवनरिंदनमंसिय – पूइयं, सव्वजगुत्तम–मंगलमग्गं ।
दुद्धरिसं गुणनायगमेगं, मोक्खपहस्स–वडिंसगभूयं ॥३॥
धम्मारामे चरे भिक्खू, धिइमं धम्म–सारही ।
धम्मारामे रया–दंते, बंभचेर–समाहिए ॥४॥
देव दाणव–गंधव्वा, जक्खरक्खस्स–किण्णरा ।
बंभयारिं नमंसंति, दुक्करं जे करंति तं ॥५॥

एस धम्मे धुवे निच्चे, सासये जिणदेसिए ।
सिद्धा सिज्झंति चाणेणं, सिज्झिस्संति तहावरे ॥६॥

अरहंत सिद्ध पवयण, गुरु थेर बहुस्सुए तवस्सीसु ।
वच्छल्लया य तेसिं, अभिक्खनाणोवओगे य ।७॥

दंसणविणयआवस्सए य, सीलव्वए निरइयारे ।
खणलवतवच्चियाए, वेयावच्चे समाहीए ॥८॥

अपुव्वनाणग्गहणे, सुयभत्ती पव्वयणपभावणया ।
एएहिं कारणेहिं, तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥९॥

जिणवयणे अणुरत्ता, जिणवकणं जे करंति भावेणं ।
अमला असंकिलिट्ठा, ते हुंति परित्तसंसारी ॥१०॥

एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं।
अहिंसासमयं चेव, एयावत्तं वियाणिया ॥११॥
जाइं च वुड्ढिं च इहेज्ज पासं भूतेहिं जाणे पडिलेहसायं।
तम्हातिविज्जो परमंति णच्चा, सम्मत्तदंसी न करेइ पावं ॥१२॥
उम्मुच्च पासं इह मच्चिएहिं, आरंभजीवी उभयाणुपस्सी।
कामेसु गिद्धा णिचयं करंति, संसिचमाणा पुणरेंति गब्भं ॥१३॥
सवणे नाणे य विन्नाणे, पचक्खाणे य संजमे।
अण्णहए तवे चेव, वोदाणे अकिरिया सिद्धि ॥१४॥
जीवियं नाभिगच्छेज्जा, मरणं नो वि पत्थए।
दुहओ वि न इच्छेज्जा, जीवियं मरणं तहा ॥१७॥
सारं दंसणनाणं, सारं तवनियमसंजमं सीलं।

सारं जिणवरं धम्मं, सारं संलेहणा पंडियमरणं ॥१८॥
कल्लाणकोडिकारिणी, दुग्गइ दुह निट्ठवणी ।
संसारजलहितारणी, एगंत होइ जीवदया ॥१९॥
आरंभे नत्थि दया, महिला संगेण नासइबम्भं ।
संकाए नासइ सम्मत्तं, पव्वज्जा अत्थग्गहणेणं ॥२०॥
मज्जं विसयकसाया, निंदाविकहाय पंचमी भणिया ।
एए पंचप्पमाया, जीवा पाडंति संसारे ॥२१॥
लब्भंति विउला भोए लब्भंति सुरसंपया ।
लब्भंति पुत्तमित्तं च एगो धम्मो न लब्भइ ॥२२॥
न वि सुही देवता देवलोए, न वि सुही पुढवीपइराया ।
न वि सुही सेट्ठि सेणावइ य, एगंत सुही मुणीवीयरागी ॥२३॥

निग्गंथं पवयणं सच्चं—निर्ग्रंथप्रवचनसत्य

एगोमे सासओ अप्पा, नाण—दंसणसंजुओः।
सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोग—लक्खणा ॥ [प्रा. आ.]

एक मारो आत्मा ज ज्ञान—दर्शन साथे शाश्वत चिरस्थायी छे. बाकी मित्र, पत्नी, बंधुजन आदि बधा बाह्यभाव संयोग लक्षण होईने अनित्य-अस्थायी नाशवान् छे.

एगोहं नत्थि मे कोई, नाह—मन्नस्स कस्सई।
एवं अदीण—मणसा, अप्पाणमणुसासइ ॥ [प्रा. आ.]

हुं एक छु, अन्य कोई मारुं नथी, हुं पण दृश्यमान कोई अन्य नो नथी, आ प्रमाणे अदीन मनथी आत्मानुं अनुशासनकरो.

एगे जिए जिया पंच; पंचजिए जिया दस।
दसहाउ जिणित्ताणं, सव्वसत्तू जिणा महं ॥ [उत्तरा० २३ : ३६]

एक आत्माने जीतवाथी पांच-कषाय सहित-अने पांचने जीतवाथी दस जीताई

जाय छे. जेणे दसने जीत्या तेणे बधा शत्रु जीती लीधा.

एगप्पा अजिए सत्तू, कसाया इंदियाणि य ।
ते जिणित्तु जहा नायं, विहरामि अहं मुणी ॥ [उत्तरा० २३ : ३८]

वगर जीताएल आत्मा शत्रु छे तथा चार कषाय अने पांच इन्द्रिय पण शत्रु छे. एमने विधिपूर्वक जीतीने हुं सुखपूर्वक विचरूं छुं.

अप्पा खलु सययं रक्खियव्वो, सव्विंदिएहिं सुसमाहिएहिं ।
अरक्खिओ जाइपहं उवेइ, सुरक्खिओ सव्व-दुहाण मुच्चइ ॥ [दश० चू० २: १६]

बधी इन्द्रियोनें वश करी आत्मानी निरंतर रक्षा करवी जोइए, कारण के अरक्षित आत्मा जन्ममरणने प्राप्त करतो रहे छे, ज्यारे सुरक्षित आत्मा बधा दुःखोथी मुक्त थाय छे.

पंचिंदियाणि कोहं, माणं मायं तहेव लोहं च ।
दुज्जयं चेव अप्पाणं, सव्वं अप्पे जिए जियं ॥ [उत्तरा० ९ : ३६]

पांच इन्द्रिय, क्रोध, मान, माया, लोभ अने दुर्जय आत्मा आ दस शत्रु छे. एक

आत्माने जीती लेवाथी बधा जीती लेवाय छे.

अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली ।
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नंदणं वणं ॥ [उ० २० : ३६]

आ आत्मा ज वैतरणी नदी छे अने आ आत्मा ज कूट शाल्मली वृक्ष छे. आत्मा ज इच्छानुसार दूध आपनारी-कामदुहा धेनु छे अने आज नंदनवन छे.

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य ।
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय सुप्पट्ठिओ ॥ [उत्तरा० २० : ३७]

आत्मा ज सुख अने दुःखने उत्पन्न करनार अने तेने हणनार पण आत्मा ज छे. आत्मा ज सदाचारथी मित्र अने दुराचारथी अमित्र-शत्रु छे.

कोहं माणं च मायं च, लोभं च पाववड्ढणं ।
वमे चत्तारि दोसे उ, इच्छंतो हियमप्पणो ॥ [दश०८ : ३७]

क्रोध, मान, माया अने लोभ पापने वधारनार छे. पोतानुं हित चाहनार आत्माए

आ चार दोषोनो वमननी जेम त्याग करी नाखवो जोइए.

कोहो पीइं पणासेइ, माणो विणय-नासणो ।
माया मित्ताणि नासेइ, लोहो सव्व-विणासणो ॥ [दश० ८ : ३८]

क्रोध परस्परनी प्रीतिनो नाश करे छे. मानथी विनय नष्ट थाय छे, माया मित्रतानो नाश करे छे अने लोभ बधा गुणोनो नाश करे छे.

उवसमेण हणे कोहं, माणं मद्दवया जिणे ।
मायं चाऽज्जवभावेणं, लोहं संतोसओ जिणे ॥ [दश० ८ : ३८]

उपशम–क्षमा भावथी क्रोधनो नाश करवो अने कोमलताथी मानने जीतवुं, सरल भावथी माया-कपटने अने लोभने संतोषथी जीतवो जोइए.

कोहो य माणो य अणिग्गहीया, माया य लोभो य पवड्ढमाणा ।
चत्तारि एए कसिणा कसाया, सिंचंति मूलाइं पुणब्भवस्स ॥ [दश० ८ : ४०]

अनियंत्रित क्रोध अने मान तथा वधी गएल माया अने लोभ आ चारे मलिन कषाय

भव-भ्रमण रूपी छोडना जड-मूळने सींचवावाळा छे. आना कारणोथीज जन्ममरणनी वृद्धि थाय छे.

कोहं माणं निगिण्हित्ता, मायं लोभं च सव्वसो ।
इंदियाइं वसे काउं, अप्पाणं उवसंहरे ॥ [उत्त० २२ : ४८]

क्रोध, मान अने माया तथा लोभनो बधी रीते निग्रह करीने तथा इन्द्रियोने वश करी आत्माने स्थिर करो.

सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा ।
कामे य पत्थेमाणा, अकामा जंति दोग्गइं ॥ [उत्त० ६ : ५३]

कामभोग शल्य रूप छे, काम भोग विषरूप छे. कामभोग झेरी नागण समान छे. भोगोनी प्रार्थना करतां करतां बिचारा जीवो, तेमने प्राप्त कर्या विना ज दुर्गतिमां चाल्या जाय छे.

सव्वं विलवियं गीयं, सव्वं नट्टं विडम्बियं ।
सव्वे आभरणा भारा सव्वे कामा दुहावहा ॥ [उत्त० १३ : १६]

सर्व गीत विलाप छे, सर्व नृत्य व्यर्थ चेष्टा रूप छे. सर्व आभूषण भाररूप छे, अने सर्व कामभोग दुःखरूप छे.

'सामाइयं नाम सावज्जजोगपरिवज्जणं निरवज्जजोग-पडिसेवणं च [आ० सूत्र]

सामायिकनो अर्थ छे-'सावद्य एटले पापजनक कार्योनो त्याग करवो अने निरवद्य अर्थात् पापरहित कार्योनो स्वीकार करवो.'

'आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे' [भगवती]

आत्मा ज सामायिक छे अने आत्मा ज सामायिकनुं फळ या अर्थ छे.

दिवसे दिवसे लक्खं, देइ सुवण्णस्स खंडियं एगो।
एगो पुण सामाइयं, करेइ न पहुप्पए तस्स ॥ [संबोध चत्तारि १७]

एक माणस प्रतिदिन लाख सोनानी महोरोनुं दान करे छे अने बीजो मात्र बे घडीनी सामायिक करे छे, तो ते सोनानी महोरोनुं दान करवावाळी व्यक्ति, सामायिक करवावाळानी समानता प्राप्त करी शकती नथी.

सामाइअसामग्गी, अमरा चिंतंति हिअय–मज्झंमि।
जइ हुज्ज पहरिमिक्कं, तइय देवत्तणं सुलहं॥ [सं० स० १८]

सामायिकनी सामग्रीनी प्राप्ति थाय ते माटे देव पण चिंतित रहे छे. जो एक प्रहर पण सामायिक भावनी प्राप्ति थइ जात तो देवपणुं सुलभ–सरळ बने छे.

निंदा पसंसासु समो, समो अ माणावमाण–कारिसु।
समसयण–परिअणमणो, सामाइअ–संगओ जीवो॥ [सं० स० १९]

सामायिकमां निंदा प्रशंसा अने मान अपमानमां पण जीव सम बने छे. पछी सामायिक भावमां परिणत जीव स्वजन अने परजनमां पण समवृत्तिवाळो बने छे.

सामाउय–वय–जुत्तो, जाव मणो हीइनियम–संजुत्तो।
छिन्नह असुहं कम्मं, सामाइय जत्तिया वारा॥ [प्रा० आ०]

चंचल मनने नियंत्रणमां राखीने ज्यां सुधी सामायिक व्रतनी अखंडधारा चालु

रहे छे, त्यां सुधी अशुभ कर्म बराबर क्षीण थतां रहे छे.

तिव्वतवं तवमाणे, जं नवि निट्ठवइ जम्मकोडीहिं ।
तं समभावि अचित्तो, खवेइ कम्मं खणद्धेण ॥ [प्रा० आ०]

करोडो जन्म सुधी निरन्तर उग्र तपश्चर्या करवावाळो साधक, जे कर्मनो नाश नथी करी शकतो, ते कर्मोनो समभावपूर्वक सामायिक करवावाळो साधक मात्र अर्धी क्षणमां नाश करी नाखे छे.

जे केवि गया मोक्खं, जे वि य गच्छंति जे गमिस्संति ।
ते सव्वे सामाइयप्पभावेणं मुणेयव्वं ॥ [प्रा० आ०]

जे साधको भूतकाळमां मोक्ष गया छे, वर्तमानमां जाय छे अने भविष्यमां जशे, तो ते बधा सामायिकनो ज प्रभाव छे.

अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो ।

अप्पा दंतो सुही होइ, अस्सिं लोए परत्थ य ॥ [उत्तरा० १ : १५]

विपरीत, ऊलटुं जवावाळा मननुं दमन करो कारण के आत्मदमन बहु कठण छे, आत्मदमन करवावाळो आलोक अने परलोकमां सुखी थाय छे.

वरं मे अप्पा दंतो, संजमेण तवेण य।
मा हं परेहिं दमंतो, बंधणेहि वहेहि य ॥ [उत्तरा० १ : १६]

संयम अने तपथी पोताना आत्मानुं दमन करवुं सारुं छे. बीजाओ द्वारा बंधन या तपथी दमावुं सारुं नथी.

कामाणुगिद्धिप्पभवं खु दुक्खं, सव्वलोगस्स सदेवगस्स।
जे काइयं माणसियं च किंचि, तस्संतगं गच्छइ वीयरागो ॥ [उ० ३२:१६]

देव दानव सहित संपूर्ण लोकने कामासक्तिजन्य ज दुःख थाय छे. वीतराग, शारीरिक अने मानसिक जे कोई दुःख छे तेनो तेओ अन्त प्राप्त करी ले छे.

रागो य दोसो वि य कम्मबीयं; कम्मं च मोहप्पभवं वयंति।
कम्मं च जाइ-मरणस्स मूलं, दुक्खं च जाइमरणं वयंति॥ [उ० ३२ : ७]

राग अने द्वेष ए बधां कर्मनां बीज छे, कर्म मोहथी उत्पन्न थाय छे, कर्म ज जन्म मरणनुं मूळ छे अने जन्म मरण ज दुःख छे.

न वि सुही देवता देवलोए, न वि सुही पुढविपतिराया।
न वि सुही सेट्ठ-सेणावई य, एगंत सुही मुणि वीयरागी॥ [प्रा० आ०]

देवलोकमां देवता पण सुखी नथी, पृथ्वीपति राजा पण सुखी नथी वळी शेठ सेनापति पण सुखी नथी, केवळ वीतरागी साधु ज एकान्त सुखी छे. समभाव ज सुखनुं साधन छे.

इति श्री विश्वविख्यात जगद्वल्लभादि पदभूषित पूज्य श्री घासीलाल म. सा. के सुशिष्य
९१-९२ तपस्या करनेवाले तपस्वी मुनिश्री मदनलालजी महाराज संग्रहीत

॥ श्रावकधर्म संग्रह संपूर्ण ॥

सम्यक्त्व धर्म का स्वरूप-

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं पावापुरी णामं णयरी होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धा। तत्थ णं पावाए पुरीए सीहसेणो णाम राया होत्था, महया हिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे। तस्स णं सीहसेणस्स रण्णो सीलसेणा णामं देवी, हत्थिवालो णामं पुत्तो जुवराया होत्था। तीए णं पावाए पुरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए सव्वोउय पुप्फफलसमिद्धे, रम्मे णंदणवणप्पगासे महासेणं नामं उज्जाणे होत्था। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे महासेणे उज्जाणे समोसढे धम्मकहा—से बेमि जे य अतीता, जे य पडुप्पन्ना, जे य आगमिस्सा, अरहंता भगवंतो ते सव्वे वि एवमाइक्खंति, एवं भासंति, एवं पण्णवंति, एवं परूवेंति, सव्वे पाणा, सव्वे भूया, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता, ण हंतव्वा, ण अज्जावेयव्वा, ण परिघेत्तव्वा, ण परितावेयव्वा न उद्दवेयव्वा॥

एस धम्मे, सुद्धे, णितिए, सासए समेच्च लोयं, खेयन्नेहिं पवत्तिते—तं जहा—

उट्ठिएसु वा, अणुट्ठिएसु वा, उवरयदंडेसु वा, अणुवरयदंडेसु वा, सोवहिएसु वा, अणोवहिएसु वा, संजोगरएसु वा, असंजोगरएसु वा; ॥ तत्थं चेयं तहा चेयं अस्सिं चेयं पवुच्चइ ॥

अर्थ—उस काल और उस समय में पावापुरी नगरी थी। वह ऋद्ध—ऊंचे—ऊंचे भवनों से युक्त, स्तिमित—स्वपर चक्र के भयसे रहित और समृद्ध धन-धान्य की समृद्धि से युक्त थी। उस पावापुरी नगरी में सिंहसेन नामका राजा था। वह महाहिमवान्, महामलय, मेरु और महेन्द्र पर्वत के समान श्रेष्ठ था। उस सिंहसेन राजा की शीलसेना नामकी रानी थी। हस्तिपाल नामक पुत्र युवराज था। उस पावापुरी के बाहर उत्तर पूर्वदिशा में, सब ऋतुओं के पुष्पों तथा फलों से समृद्ध रमणीय नंदनवन के समान प्रकाशवाला महासेन नामका उद्यान था, उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर महासेन उद्यान में पधारे, वहां पर धर्म परिषदा में धर्मकथा कही जो इस प्रकार है—मैं कहता हूं की जो तीर्थंकर भगवान् भूतकाल में हो गये हैं, जो वर्तमान

काल में वर्तते हैं, एवं जो भविष्य काल में होंगे वे सब इसी प्रकार कहते हैं, बोलते हैं, वर्णन करते हैं की सर्व प्राण, सर्व भूत, सर्व जीव, और सभी सत्वों को न हणे उन पर हकुमत न चलावे, उनको पकडना नहीं उनको मारे नहीं एवं उनको हैरान न करे ऐसा परम पवित्र और नित्य धर्म, लोक के दुःखों को जानने वाले प्रभुने सुनने को तत्पर हुए न हुवे ऐसे जनों को, मुनियों को गृहस्थों को, रागियों को, त्यागियों को, भोगियों को एवं योगियों को कहा है—

यह धर्म ही सत्य धर्म है एवं केवल जिनप्रवचन में ही वर्णित है ॥



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥१॥



हरिगीतच्छन्दः

करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उकके लिये।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा।
है काल निरवधि विपुलपृथ्वी ध्यान में यह लायगा॥१॥